बुन्देली मेला
बुन्देली
दरसन
अंक - 7
2014
नगर पालिका परिषद, हटा, जिला-दमोह

बुन्देली दरसन

अंक - 7

2014

सम्पादक

डॉ. एम.एम. पाण्डे

संपर्क सूत्र : 07604-262611

09893976936

नगर पालिका परिषद्, हटा, जिला-दमोह (म.प्र.)

संपादक

डॉ. एम.एम. पाण्डे

छायांकन

मनोज जैन, लखन पन्या

मुद्रक

स्टैण्डर्ड प्रिंटिंग प्रेस
2108, राइट टाउन, जबलपुर
मोबा. : 94258-00132

प्रकाशक

नगर पालिका परिषद्
हटा, जिला-दमोह (म.प्र.)

सम्पादकीय ....

इस अंक को आपके हाथों में सौपते हुए, हमें प्रसन्नता हो रही है, कि हमने अब तक षष्ठ सोपान पार कर लिए हैं। इस यात्रा में आप सबका संबल ही हमारा पाथेय रहा है। इसलिए आपकी ही वस्तु आपको ही समर्पित है। "त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुम्यमेव समर्पयेम।" इस भाव के साथ यह अंक अपनी परंपरा में ही इस अंक को पाँच प्रभागों में - (1) टिपारा (निबंध प्रभाग) (2) चुलिया (कथा-कहानी प्रभाग) (3) मचला (काव्य प्रभाग) (4) सूपा (पत्रांष प्रभाग)(5) दौरिया (गत बुंदेली महोत्सव की सौगातें) वर्गीकृत कर आप तक प्रेषित है।

मैं आपके साथ अपनी इस चिंता को भी बॉटना चाहता हूँ, कि बुंदेली को केन्द्र बनाकर प्रकाशित होने वाली पत्रिकाऐं, क्या स्थगन स्थिति में तो नही पहुँच रही है ? हमारी लेखक मंडली में कोईनया अंकुर नही फूट रहा है ? जो वर्षो से और लगभग सभी ऐसी पत्रिकाओं में अपनी रचनाशीलता का अवदान करते आ रहे है - वे ही लगातार दृश्य में विद्यमान है। यह बहुत आशाजनक स्थिति नही है। जब तक नई सोच और नया अंदाज इस फलक पर प्रस्तुत न हो तब तक हमारी गतिशीलता तो रूकी सी ही प्रतीत होती रहेगी।

यह स्थिति समाप्त होना चाहिए। हम इस तरह के आयोजनों को चिरनवीन बनाने के लिए समर्पित हो जाए तो सचमुच हमारी इस वाटिका में नये सुमन विकसित हो सकते हैं, और नयी पवन आंदोलित हो सकती है। बस जरूरत है कि आप सभी आदरणीय कृतिकार अपनी आत्मीयता का विस्तार करते हुए दो, दो, तीन तीन नये रचनाकारों के ऊपर अपनी परिसीमा में अपना वरदहस्त युक्त आशीष की वर्षा करते रहें। उनकी अच्छी रचनायें भी पत्रिका में प्रकाशन हेतु भिजवायें। परंपरा इसी तरह बनती है, इस मुहिम को आपके सहयोग की जरूरत है। इस अंक के प्रकाशन में हमें बुदेली मेला महोत्सव के संवेदनशील शिल्पि "कुं. पुष्पेन्द्र सिंह हजारी" का सहयोग सराहनीय रहा है।

बंदेली दरसन अंक सप्तम के प्रकाशन में श्री रामलाल द्विवेदी, मु.न.पा. अधिकारी हटा, श्री रामशंकर व्यास रा.वि.न.पा. हटा, श्री बाबूलाल तंतुवाय अध्यक्ष नगरपालिका परिषद हटा एवं समस्त नगरपालिका पार्षद धन्यवाद के पात्र जिनके सहयोग से यह पत्रिका साकार हो सकी है।

कम्प्यूटर आपरेटर श्री धर्मेन्द्र सिंह राजपूत, प्रूफरीडर श्री रणप्रताप सिंह राजपूत (रानू) एवं श्री रूप किशोर राय (बल्लू) पत्रिका के प्रकाशन में सहयोगी रहे हैं, अत: वे धन्यवाद के पात्र है।

बुंदेली दरसन 2014 अंक सप्तम के संपादन में राष्ट्रीय स्तर के साहित्यकार डॉ. श्याम सुंदर दुबे, जो इस क्षेत्र के गौरव हैं, उनका परामर्श अविस्मरणीय है उनके योगदान के प्रति संपादक कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना प्राथमिक दायित्व मानता है।

सम्पादक

डॉ. मनमोहन पाण्डे

मो. 9893976936

बुन्देली मेला

निबंध

टिपारा

बुंदेलखंड का इतिहास, संस्कृति और रहन-सहन से संबंधित विश्लेषण परक सामग्री इस खंड में प्रस्तुत है। समाज और साहित्य के विशेष संदर्भ आपको बुंदेलखड के अतीत की स्मृतियों में ले जायेंगे। स्मृतियों का यह टिपारा बुंदेली और हिन्दी के निबंधों की परंपरा का परिचय दे रहा है।

बुंदेली ललित निबंध-

अखबार

– कैलाश मड़वैया

भुंसारें अगर अखबार पढ़वे ना मिलै तौ बेचैनी होन लगत उर गर मिल जाय तौ पढ़े के बाद बेचैनी होन लगत। अपन सोसत हुऔ कै भैया पढ़े के बाद काय होन लगत ?, नईं मिले पै चैन नईं परत सो जा बात तौ समझ में आउत, पै पढ़े सें चैन चलो जात जा तनक समझ में नईं आई। ऐसें समझौ अपन कै बुरई खबरें पढ़े से तकलीफहोत उर नौनी पढ़े से जा लगत कै यार हम चूक गये। हमने ऐसौ काय नइँ करो? अजीब तरॉं के विचार आउन लगत। काय कै अब बौ जमानों नइँ रऔ कै-'दागौ न कडूँ तोप न तरवार चलाओ, दुश्मन हो सामने तो अखबार निकारो...'

आजादी के पैल की बात और हती। कौनउँ सिद्धाँत सें अगर अखबार निकरवै तौ बात समझ में आउत। पै केवल धन्धे के लानें अखबार निकारौ जाय तौ गड़बड़ होतई है। अगर अपनई राजनीति की रोटी सेंकवे अखबार निकरत तौ भी वे एक तरफाँ खबरें छापत। सो ई सें खबरें पढ़े सें मन में बन्न बन्न के भाव उमड़न घुमड़न लगत कै यार अब ऐसौ करिये अब ऊसौ करिये। अब का करिये? सबरे प्लान धरे के धरे रै जात उर मन नई तरॉं सें सोसन विचारन लगत। हालाँ कै हमने जा एन सुन धरी कै खबरें जौन छपतें वें होती नइयॉं और जौन होतीं वे छपतीं नइयाँ। खबरें बनाईं सोउ जातीं और जौन बनाई नई जातीं उनमें नोंन मिर्च तौ लगाउ जात। जादाँतर खबरें संवाददातन के सुभाव पै टिकतीं सो बेई अपनौं फायदा देखत। जितै दारु, मुर्गा मिलत उतै की कछु और जाँ सूके साके रै जात उतै की खबरें कछु और बन्न छपतीं, हालाँ कै सब एक से नइँ होत। हाँ जिते अखबारनबीसन कौ सेर समात उतै की खबरन की तो कनई का है। उर एक बात बतायें जौन जे जादाँ नियम कानून छाँटत वेई पत्रकार सबसें जादाँ टिकाउ नइँ होत। कायकें इनें कभउँ भी अखवार को मालक निकार देत, कै वे खुदई जितै जादाँ पैसा मिलत उतै खिसक लेत। इनकी चाकरी टिकाउ नईं होत एई सें उनके कछू उसूल नइँ होत। एक तौ अबै जादॉतर संवाददाता प्रशिक्षित नईं होत और दूसरे जिनें कउँ टिकाउ नौकरी नईं मिलत वे मौका पाकें कौनउँ अखबार में चिपक जात। अब जादाँतर अखबार तौ होत बानियन के, मानें धंधे बारन के, कै नेतन के, जिनकौ निशानौ केवल पैसा कमावौ कै ब्लेकमेल करवे पै रत। धंधे वारे सेठ जब अखबार निकारत तौ उनकी नजर विज्ञापनन पै टिकी रत, खबरें जायें चूले में। उर इन दिनन बड़े अखबारन के मालक जादॉतर सेठई आ हैं हाँ जब सें सरकार कौ लक्ष विज्ञापन बाँट कें अपनौ काम कम,प्रचार जादाँ करबौं होन लगो तब सें अखबार सोउ गली गली सें कड़न लगे जिनें पत्रकरिता कौ क, ख, ग नईं आउत वे अखबार निकारन लगे, पत्रकार बन गये..। प्रेस कौ 'स्टीकर' चिपकायें, कोउ भी मिल जात। अखबार बारन की दादागिरी सबकउँ चलत। भले आदमी जादाँ डरात काय कै वे कछू भी छाप सकत फिर अपन देत रऔ सफाई। वे तौ जनता की नजरन में आपनखों गुनैगार बनाई देत फिर लरत रऔ मानहानि के मुकद्मा। एई सें पत्रकारन और अखबारन की तादाद तौ बड़ी पै स्तर भौत नैंचें उतर गऔ। सरकारन ने अखबारन खों मौका की जमीन, कागज को कोटा..., कौड़ियन मे, सस्ते भाव पै दई। इनें सस्ती दरन पै कर्जा दये। एक विभागई अखबार बारन खों सुविधा, धन, साधन दैवे के लाने खोल दऔ-जन सम्पर्क विभाग। पै भव का कै खबरन की 'ब्लैकमेलिंग' बढ़ गई। नई तरा तरा की बदमासी बढ़ी सो तौ ठीक, इन सें साहित्य और समाज नौं बिगरन लगो। साहित्य में जाँ ताँ छपवे सें अधकचरे भैया हरें कवि- लेखक बनन लगे सो साधक साहित्यकार पाछें रै गये उर नये नये लरका, कै बूड़े, ठलुआ ठैंगरा अब साहित्यकार बन गये। झूटे विज्ञापनन की भरमार सें मिलावटी सामान बजार में बिकन लगो, असली

माल वारे घाटे में पर गये। अच्छन अच्छन खों चूना लगन लगो। नकली मजा मारन लगे। और तौ और कम्पनियन खों प्रचार-प्रसार मानें विज्ञापनन के लानें टेक्स फ्री अलग मद/राशि बनाकें प्रोत्साहित करो जान लगो। ई सें विज्ञापन मानें बिना मेंनत कौ धन ऐंठवे की होड़ लग गई। अब जौन जा शेयर-सट्टे बाजी शुरु भई ई सें पीत पत्रकारिता पनपी ईसें समाज में अलग कैउ तराँ के पाप होन लगे, बुराई पनपन लगीं। काय कै जौ भी एक तरा कौ जुआ आय। साँसी कऔं तौ एई सें बजारबाद पनपो उर जाँ घर हते वे दुकान हो गये। घर घर अब बजार हो गये मानौ हर चीज बिकाउ हो गई। वैश्वीकरन के नाव पै 'यूज एण्ड थ्रो' के संस्कार पनपन लगे। चीन के हल्के सामानन सें बजार अटे परे। बुजुर्गन खों दुत्कारो जान लगो, तिरस्कार होन लगो। वृद्धाश्रम के नाव पै नये धन्धे शुरु हो गये। बजार कौ मतलब छल, बल, पाप, तिकड़म, साम, दाम, दण्ड, भेद, कैसउँ न कैसउँ अपनौ माल खपाऔ, पैसा बनाऔ उर ऐश करौ। जियै पैल कई जात ती राजा के राम करौ अब राम खों माननई नइयाँ तौ बस खाऔ पियौ, ऐश करौ। पैल अपनी तारीफ करवौ अपनी जूँठन खावौ मानी जात ती। अब जा अपनी मार्केटिंग क्वाउन लगी। मीडिया नें जमानउ बदल दऔ। पैल जा सोसत ते कै सैंकरन चैनलन के आये सें अखबार की आफत आ जै पै जे तौ और चल निकरे। एक एक अखबार के कैउ कैउ संस्करन निकरन लगे। इतै तक तौ ठीक पै अब भेलसा की खबर भोपाल के अखबारन में पड़वे नइँ मिलत उर कैवे खों दुनिया हल्कीं हो गई। सिमट आ गई कै और दूर आ हो गई? सरकारी विज्ञापनन और मल्टीनेशनल कम्पनियन के विज्ञापनन की भरमार सें अखवार वारे अरबपति हो गये उर उपभोक्ता कंगाल। अब आवश्यकता, आविष्कार की जननी नई रई। अब तौ विज्ञापन आविष्कार की जननी बन गई। जौन चीज नई चानें ओई कौ विज्ञापन देखकें मन लैवे खों ललच्याउन लगत। बड़े अखबारन में समाचार कम उर विज्ञापन जादाँ छपत। एसें लगत कै खबरन के बहाने, अखबार / चैनल विज्ञापनन के लानें आ चलत। खबरें तौ फिलर बन रईं। पच्चीस तीस पेज की अखवारी रद्दी में पाँच मिनट पढ़वे की खबरें नईं होतीं। एई सें जिनके बाप अखबार साइकिलन पै बाँटत बाँटत मर गये उनके लरका हवाई जहाजन में उड़ रये। विदेशी मीडिया ने देसी संस्कृति खों लील लऔ। कत हैं कै खबरें जमानें कौ आइना होतीं। तौ का जमाने में अकेले मर्डर, लूट उर रैप आई हो रये? और सब काम बन्द हो गये का ? साँसी तौ जा है कै बिकवे के नाव पै अब कछू भी नौंन मिर्च लगा कें छपत रत सो जमानें की बुराई अखबारन सें, मीडिया सें सोउ आउन लगीं। बिनाकूत की बहसन में समय और मन दोउ खराब करत। सुनी ती कै पैले खबरदाँ नारद जू हते जिनें नाँय की माँय भिड़ावे बारौ मानौ जात तौ। मानौ जितै लड़ाई नें होवे उतै नारद जू भिड़ा-भिडू कें लड़ाई करा देत ते। काय एई सें आ पत्रकार, समाज में आज आग लगाउत रत? हालाँकि सबरे अखबार ऐसे होंय सो बात नइयाँ कछू तौ साँसउँ भौत नौंनों काम कर रये। नौंने समाचारपत्र तौ साँसउँ ऐना/तकता घाँईं काम करत। उनें तौ संदर्भ के लानें याद करो जात। सो वे आज की जरुरत भी हैं, उनें सम्मान भी मिलत। नोंने चैनलन नें तौ गजब कर दऔ। एक सें एक धर्म गुरु, जस्टिस, राजनेता, खबरनबीस, सेठ हरें बेनकाब कर दये। जिनें कोउ छी नई सकत तौ वे इनई चैनलन की बजै सें आज सलाकन के पाछें है। एई सें वे लोकतंत्र के चौथे खम्मा क्वाउत। हाँ, अफसोस जौ है कै एकउ चैनल साहित्य कौ नइयाँ जी सें संस्कार बन सकत। कायकै उनमें नौंन मिर्च नइँ होत। ई सें बिगारवे वारे जादाँ हैं बनावे वारे कम हैं। ऐसे भौत कम हैं जो सतसाहित्य चलाउत। जादाँतर तौ धन ऐंठवे के सामान बन कै रै गये। जा भी साँसी है कै जब अखबार धंधे के लानें निकारें तौ कैसउँ न केसउँ पैसा कमाबउ लक्ष रै है। संस्कार और सिद्धाँत जाँय चूले में। एई सें कत हैं कै - प्रेस और पुलिस से भगवान बचावै। .... 'ना इनकी दोस्ती नौंनी ना इनकी दुश्मनी साजी.'

75, चित्रगुप्त नगर,
कोटरा, भोपाल-3,
सम्पर्क 09826015643

बुन्देलखंड लोक परम्पराएँ

– हरिविष्णु अवस्थी

विविधता में एकता हमारी भारतीय संस्कृति की विशेषता है यहाँ प्रचलित विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों, पंथों, जातिओं, बोलियों, भाषाओं एवं संस्कारों का बहुरंगी चित्र लोक जीवन में परलक्षित होता है। निश्चित रूप से हमारी यहीं सांस्कृतिक, चेतना, हमारे देश की वास्तविक शक्ति है।

विभिन्न धर्मग्रंथों में जिन सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना की गई है उन्हें परम्परा से प्राप्त लोक व्यवहार में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, यह परम्पराएँ एक पीढ़ी को निरंतर विरासत के रूप में प्राप्त होती आ रही है।

लोक जीवन में व्याप्त सांस्कृतिक चेतना एवं परम्परा मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक चिंतन से अनुप्राणित होती हैं। अभिप्राय यह कि परम्पराओं की स्थापना का कार्यक्रम आवश्यकता अनुसार चलता रहता है, जो स्थानीय, क्षेत्रीय होतीं हुई भी मुख्य धारा से जुड़ जातीं हैं।

देशज, शस्त्रीय एवं लोक परम्पराओं के मध्य किसी प्रकार का विरोधाभास नहीं होता है। अपितु उसमें समंजस्य स्थापित होने की प्रक्रिया स्वत: चलती रहती है। हमारी परम्पराओं की विशेषता है परम्परा विरोधी परम्पराओं में सामंजस्य एवं अनिवार्य संगति।

मूलत: परम्पराओं में लोक मंगल की कामना निहित होती है। लोक परम्पराओं का श्रेय एवं प्रेय मानवीय जीवन मूल्यों को बनाये राने होता है चाहे वे किसी भी जाति की क्यों न हो। इनमें लोक – संस्कार लोकार लोक–रीति, लोक विश्वास, लोक–स्वास्थ्य एवं चिकित्सा आदि–आदि विस्तृत रूप से परलक्षित होते हैं।

प्रांतीय सीमा रेखाओं के रूप में सैकड़ों बरसों से विभाजन का देश झेलता हमारा खण्ड-खण्ड बुन्देलखण्ड अपनी सांस्कृतिक परंपराओं हेतु विख्यात है। विरासत में धरोहर के रूप में प्राप्त हमारी लोक परम्पराएँ बुन्देलखण्ड को आज भी एक सूत्र में बांधे हुऐ हैं।

धर्मों लोक परम्पराओं के अन्तर्गत सर्व प्रथम वाचिक परम्परा की चर्चा करना उचित होगा। लोक–विद, बुन्देली संस्कृति के सशक हस्ताक्षर डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्ता के अनुसार ''वाचिक परम्परा किसी जनपद या राष्ट्रय की सांस्कृतिक धरोहर है जो नित नवीन स्त्रोतों से जल ग्रहण करती सरिता की तरह प्रवाहमान रहती है। संक्षिप्त रूप में ग्रहण करती सरिता की तरह प्रवाहमान रहती है। संक्षिप्त रूप में वाचिक परम्परा वह है जिसमें स्मृत या लिखित रूप में सुरक्षित गीत, कथा, कहावत, सुभाषित, सक्त आदि कथ्य वक्ता से श्रोता या श्रोताओं तक पीढ़ी दर पीढ़ी संक्रमित होता रहता है।

स्पष्ट है कि विपुल लोक–साहित्य संदियों से लोक कष्ट में सुरक्षित है चाहे वह राधा– कृष्ण के श्रृंगार परक, सीताराम के भक्ति परक, देवी की भगतों के रूप में हो अथवा नारामासी, लामटेरा, राई, फारा, रगाल आदि लोक गीत के रूप में।

वीर गाथाओं के रूप में ढोला–मारू, सारंगा, ऐतिहासिक गाथा के रूप में लाल हरदौल, अमान सिंह को राछरौ, पारीछत को कटक लोक जीवन के जो बहुरंगी-चित्र हमारे, लोक गीतों, लोक गाथाओं के माध्यम से लोक मानस के चित्रित है उनका पूरा श्रेय वाचिक परम्परा को ही है।

यथा अवसर इन समसामयिक गीतों को सुनकर जहाँ हमारे पैर थिरकने लगते हैं, वहीं वीर गाथाओं को सुनकर हमारीं भुजायें फड़कने लगती हैं। हमारा अतीत चल–चित्र की भांति प्रत्यक्ष रूप में सामने आकर खड़ा हो जाता है।

बुन्देलखण्ड में शक्ति पूजा की परम्परा बहुत प्राचीन है। दोनों नव–रात्रियों में घर–परिवार की बड़ीं बूंढ़ीं महिलायें, छोटीं–छोटी बच्चियाँ सभी ब्रम्हमुहूर्त में देवी जी को ढारने अर्थात जलाभिषेक हेतु घरों से निकल पड़तीं हैं। अष्टमी को माँ का पूजन कर प्रसाद चढ़ाने तथा नवमी को कन्याओं को भोजन कराकर दान–दक्षिणा देकर उनके ब्रत का समापन
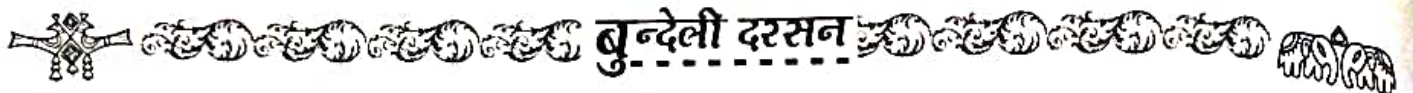
होता है। पुरूष वर्ग अपनी-अपनी तरह से पूजन अर्चन करते हैं।

इस सामान्य परम्परा के अतिरिक्त दिवाले रखने की एक विशिष्ट परम्परा भी यहाँ है। नवरात्रि प्रारंभ के पूर्व मिट्टी घड़ों के ऊपरी भाग को निकाल कर खप्पर तैयार कर उन्हे गोबर की खाद मिली हुई मिट्टी से भर दिया जाता है। घर के एक कमरे को लीप-पोत कर स्वच्छ पवित्र बनाया जाकर इसमें व्यवस्थित रूप से खप्परों को लाल झंडियाँ लगाकर सजाकर रखा जाता है। प्रतिपदा को इन खप्परों में जवारे वो दिये जाते हैं। घट स्थापना के साथ अखण्ड ज्योति उजयार दी जाती है। सप्तमी तक नित्य-प्रति जवारों की पूजा होती है। संध्या समय आरती पश्चात् गाजे-बाजे के साथ देवी के गीत भगतें गाई जातीं हैं। अष्टमी को सायं गाजे-बाजे के साथ समूह में स्त्री पुरूष सज-धज कर इनका विसर्जन करने हेतु किसी निकटवर्तीय सर, सरिता के तट पर जाते हैं। कुछ भक्त अपने मुँह में दोनों गालों के आर-पार लम्बी डंडी बाला त्रिसूल जिसे सांग कहा जाता है छिदवा कर जवारों के आगे चलते हैं। इनमें देवी का भाव भरा माना जाता है। घी का होम लगाकर इनकी अर्चना की जाती है। दिवाले की पूजा करने वाला पंडा कहलाता है।

शारदीय नवरात्रि में कथाओं द्वारा नौरता के माध्यम से शक्ति रूपी गौर की पूजा अर्चना की विशिष्ट परम्परा यहां है। कहीं-कहीं इसे 'सुआरा' भी कहा जाता है। शारदीय नवरात्रि में रामलीला के मंचन की भी परम्परा पुरानी है। महिलाओं द्वारा कार्तिक स्थान की विशिष्ट परम्परा भी यहां है। विस्तारमय से इनका विशद् वर्णन नहीं किया जा रहा है। मकर संक्रांति जिसे हमारे यहां संकरात या बुड़की कहा जाता है बुड़की को विभिन्न प्रकार के पकवान विशेष रूप से लड्डू बनाने सर, सरिता से स्थान कर सूर्यनारायण भगवान को अर्घ देने की जो परंपरा बुन्देलखण्ड में है वह अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिलती। धार्मिक आयोजनों एवं व्रत, पर्व उत्सवों की परम्पराएँ लोक को धर्म परायण बनाने का श्रेष्ठ कार्य करती आ रही है।

स्पष्ट रूप से लोक मंगल की भावना से जुड़ी कुछ विशिष्ट परंपराओं का उल्लेख भी मैं करना चाहूँगा। विभिन्न व्रत, पर्वों के अवसर पर महिलाओं द्वारा उस व्रत-पर्व से सम्बन्धित कानियाँ (कहानी) कहीं जातीं हैं कानिया के अंत में प्रसंगानुसार सम्बन्धित देवी-देवताओं के नामोच्चारण पश्चात् कहा जाता है कि - जैसे अमुक के दिन फेरे ऐसई सबके दिन फेरियो। जैसी किरपा अमुक पै करी ऊसई सब पै करियों। संध्या समय दीपक उजयरने या मिलकाने पश्चात् कहा जाता है कि- हे संजा माई सबकौ भलौ करियों संगै हमाऔ भलौ करियो। ज्ञातव्य है कि दीपक जलाना या दीपक बुझाना कहने कि परंपरा हमारे यहाँ नहीं है। यहाँ दीपक जलाने की उजारनौ, मिलकावौं और कहीं-कहीं पंचारबौ तथा दीपक बुझाने को ठंडा करना, शान्त करना या दिया बड़ाना कहते हैं। इस परम्परा में प्रमुख रूप से प्रकाश प्रवर्हन की भावना निहित है।

एक विशिष्ट परम्परा की ओर भी मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। हमारे यहाँ बुआ, बहिन एवं बेटियाँ पूज्य मानी जातीं हैं चाहे वह अपने घर-परिवार की हों अथवा मुहल्ला पड़ौस या गाँव कीं। दादा-दादी, माता-पिता चाचा-चाची, बुआ-फूफा, नाना-नानी, मामा-मामी, आयु में बड़े भाई-बहिन आदि सब के द्वारा लड़कियों के पैर छुए जाते हैं। कन्या चाहे वह किसी जाति की क्यों न हो, उसको अपना पैर छू जाना पाप माना जाता है। इस परम्परा में शक्ति पूजा की भावना निहित प्रतीत होती है। ऐसी परम्परा बुन्देलखण्ड के अतिरिक्त अन्यत्र नहीं है।

परिवार (समाज) के सुख-दुख में भागीदारी की श्रेष्ठ परम्पराएँ भी बुन्देल लोक परम्परा में हैं। यहाँ मैं दुख के समय दुखी व्यक्ति परिवार के समाज द्वारा दुख में सहभागिती की चर्चा विशेष रूप से करना चाहता हूँ।

परिवार में किसी सदस्य की मृत्यु हो जाने पर पूरे परिवार का शोक मग्न हो जाना स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में दाहसंस्कार की व्यवस्था करने हेतु सभी अड़ौस-पड़ौस के लोक इकट्ठा होकर उसका प्रबन्ध करते हैं। दाह संस्कार

हेतु प्रमुख रूप से लकड़ियों की आवश्यकता होती है। इस हेतु दाह संसकार में शामिल होने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने घर से ठोस जलाऊ लकड़ी साथ में लाता हैं। ग्रामों में यह परम्परा अब भी बहुत कुछ शेष है। नगरों में अब तो पंच लकड़ी के नाम पर पलाश अथवा तुलसी छोटी-छोटी पतली शाखाएँ डाल दी जातीं हैं।

शोक संतप्त परिवार के भोजन की व्यवस्था की परम्परा भी है। दाह संस्कार के बाद लोग अपने घर से भोजन बनाकर देने जाते हैं। पूर्व प्रचलित जाति प्रथा के अनुसार जिन जातियों का बनाया हुआ भोजन मृतक का परिवार नहीं कर सकता था, उन जातियों के लोग आटा, दाल आदि भोजन सम्बन्धी सामग्री होती जा रही है।

लोक कलाओं के संरक्षण एवं समवर्द्धन में भी हमारी परम्पराओं का महत्वपूर्ण योग रहा है। बुन्देलखण्ड में चित्रकला को चतेउरी कहा जाता है। चतेउरी लिखने में अधिकांशतः सफेद रंग हेतु कुछ मिट्टी (खड़िया) लाल रंग हेतु गेरू लाल मिट्टी पीले रंग हेतु रज पीली मिट्टी एवं गोबर आदि का प्रयोग किया जाता है। हरा रंग पत्तों का रस निकाल कर बना लिया जाता है। गोदना 'चतेउरी' में प्रमुख स्थान रखता है। दीवाली के दिन दीवाल पर गेरू मिट्टी से लक्ष्मी जी का रेखांकन किया जाता है जिसे सुरायती लिखना कहा जाता है। सुरायती का लेखन कठिन होता है। हर कोई नहीं कर पाता। नाग पंचमी पर नागों का रेखांकन जन्माष्टमी पर श्री कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का अंकन करने आदि की परंपरा के कारण 'चतेउरी' लेखन की कला लोक में विद्यमान है। नवरात्रि में कन्याओं द्वारा नौरता के खेल में रंगीन कल्पनाएँ बनाई जाती है। मांगलिक कार्यों के अवसर पर चौक पूरना, द्वार पर ठरेन डालना कल्पनाओं का ही एक रूप है।

दीवाली के दिन गोवर्धन की स्थापना, दूसरे दिन उनका विस्तार इसी भाँति दीवाली एवं होली के बाद पड़ने वाली दोज के दिन घर के मुख्य प्रवेश द्वार के दोनों ओर दोजें रखना, महालक्ष्मी व्रत के अवसर पर हांथी पर लक्ष्मी की मूर्ति, अक्षय तृतिया पर पुतरा-पुतरिया, सकरांत (बुड़की) पर घोड़ा हांथी बनाना मूर्तिकला के विकास में सहायक है। नवरात्रि शारदीय के अवसर पर शक्ति के विभिन्न स्वरूपों एवं गणेश चतुर्थी के अवसर पर गणपति के विविध स्वरूपों की मूर्तियों की स्थापना की नव स्थापित परम्परा से मूर्ति कला का निरंतर विकास हो रहा है। हमारे लोक संगीत की ध्वनियाँ तो अब सिनेमा जगत के संगीतकारों द्वारा अपनाई जाने लगी हैं। बुन्देली का 'राई' नृत्य तो अब विदेशों में भी अपना जलवा दिख चुका है। यह सब संगीत एवं नृत्य के क्षेत्र में हमारी सतत् चलती परम्पराओं का ही परिणाम है। अन्य कलायें भी फल-फूल रहीं हैं।

सहस्त्रों बरसों से हमारी लोक परम्पराएँ हमारी लोक संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्द्धन का गुरूतर भार वहन करती आ रही है। दिनों-दिन बढ़ती पाश्चात्य सभ्यता के आधुनिक दौर में इनमें शिथिलता एवं गिरावट परलक्षित होने लगी है। ऐसे संक्रमण काला में अपनी परम्पराओं को बनाये रखने अपनी संस्कृति की रक्षा करने का उत्तरदायित्व युवा-पीढ़ी के हांथों में सौपना नितांत आवश्यक हो गया है।

अवस्थी चौराहा किले का मैदान
टीकमगढ़ (म.प्र.) - 472001
दूरभाष: 07683-242530
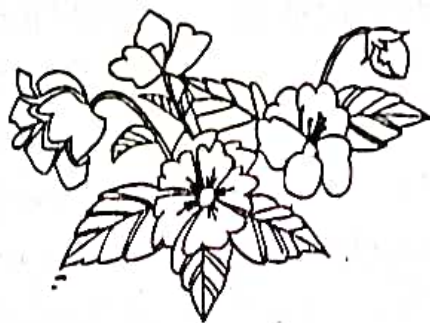
पुण्य स्मरण -

विंध्यकोकिल भैयालाल व्यास का रचना फलक

- डॉ. बहादुर सिंह परमार

(विंध्यकोकिल पं. भैयालाल व्यास उन समर्थ गीतकारों में शामिल हैं जिन्होंने गीतों को मंचों पर नई ऊँचाईयाँ प्रदान की। उनकी रचना आजादी की पूर्व से इक्कीसवीं सदी तक फैला है। उनका निधन 12 दिसम्बर 2012 को हो गया। श्रद्धांजलि स्वरूप आलेख प्रस्तुत है।)

विंध्यकोकिल भैयालाल व्यास का जन्म 7 सितम्बर 1918 को दतिया के एक सनाढ्य ब्राह्मण परिवार में हुआ। वे राष्ट्रीय प्रेम और सामाजिक चेतना के ऐसे गीतकार हैं, जिनमें भारतीय संस्कृति, इतिहास, परम्परा और प्रकृति के प्रति गहरी आस्था तथा मानवीय आदर्शों के प्रति निष्ठा है। व्यास जी की सारस्वत साधना अकुण्ठ, अमन्द गति से माँ भारती की गौरव-वन्दना में सन्नद्ध है। वे मूलत: गीतकार हैं, गीतकार का भावुक होना स्वाभाविक है। बौद्धिकता उनकी भावुकता को कहीं दबोच नहीं पायी है। 'विजयादशमी' रचना से अपनी साहित्यिक यात्रा प्रारम्भ करने वाले व्यास जी ने जीवन के क्रम, आग-पानी, साँझ-सकारे, पुण्यभूमि बुन्देलखण्ड, देश के देवता, जागा मेरा देश, तुम मत रोना, गीतों में चार ऋतुएं, रस वृन्दावन, सीता-सत्यम् जैसी पद्य रचनाएं रचीं। वहीं चिन्तन के क्षण, अपना देश अपना संगीत जैसी पद्य रचनाएं भी सृजित कीं। भैयालाल व्यास ऐसे कवि हैं जो यथार्थ की अनदेखी नहीं करते और आदर्श की उपेक्षा भी नहीं करते, बल्कि वे एक बड़ी सीमा तक आदर्शों के आग्रही हैं। आधुनिक विद्वानों का विचार है कि आदर्शों का पक्षधर रचनाकार उपदेशक अधिक होता है, क्रिया की चेतना देने की शक्ति उसमें नहीं होती। वह विश्लेषण तो करता है, दु:ख-दर्दों की बातें करता है, विसंगतियों की ओर ध्यान आकर्षित करता है, विद्रूपताओं का चित्रण करता है, किन्तु कोई दिशा देने में समर्थ नहीं होता। व्यास जी के सम्बन्ध में यह बात नहीं उठायी जा सकती क्योंकि उन्होंने जीवन व समाज में व्याप्त विसंगतियों और विद्रूपताओं का बेहिचक चित्रण कर उस ओर जन मानस का ध्यान आकर्षित ही नहीं किया बल्कि सुधार की प्रेरणा देने का कार्य भी किया है। श्री व्यास सूक्ष्म दृष्टि, व्यापक संवेदना और सामाजिक दायित्व से लबरेज ऐसे साँस्कृतिक भावनाओं को प्रकट करने वाले कवि थे जो अपनी माटी के प्रति गहरा राग रखते हैं। इनका दुखद अवसान 12 दिसम्बर 2012 को हो गया है।

उनकी 'विजयादशमी' रचना वर्णनात्मक शैली में लिखा गया खण्ड काव्य हैं जिसमें विजयादशमी के दिन दतिया राज्य में मनाये जाने वाले दशहरे का रीतिकालीन पद्धति से सांगोपांग वर्णन है। इसमें यद्यपि सम्बद्धता नहीं है और छन्दों की अधिकता है। जिससे काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर प्रबंधात्मक न होने के आरोप भी लगते हैं किन्तु ऐसा नहीं है। कृति में दशहरा मनाने की तैयारी, वाद्य यंत्रों की सजावट, हाथी-घोड़ों की सवारी, राजदरबार का वातावरण, सवारी निकलने का वर्णन, फौजों का क्रम, रावण का पुतला, राम की विजय आदि का विस्तृत वर्णन है। इस संग्रह में राजसी वैभव व विलास का सजीव चित्रांकन करने में कवि सफल रहा है।

'जीवन के क्रम' का प्रकाशन 1955 ई. में हुआ। चौसठ पृष्ठीय इस कृति में चालीस गीत संकलित हैं। जो छायावादी विशेषताओं से आपूरित प्रकृति चित्रण वाले हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य का आलंबन, उद्दीपन आदि रूपों में वर्णन है। कवि ने इस संग्रह के गीतों में प्रेम भावना, वेदना-अनुभूति, करुणा से आपूरित गीतों को संकलित किया है। कवि का मूल स्वर इसमें व्यक्तिगत जीवन की अतृप्ति, निराशा, क्षोभ, वेदना आदि से भरपूर है। वे लिखते हैं -

"जमाने का जी भर सताया हुआ हूँ।
हँसाने के मिस भी रुलाया हुआ हूँ।।
भुला देने को याद करता है कोई।
वही याद पाले पला जा रहा हूँ।।"

इस संग्रह की रचनाओं में निराशा, वेदना, कुण्ठा के साथ-साथ सामाजिक व राष्ट्रीय चेतना का स्वर भी मुखरित हुआ है। कवि छायावादी शैली से प्रगतिशील व मानवतावादी भी हो जाता है और कह उठता है - "कोयल मे पास कूको, कटुता को पलने दो पूरी, मृदुता पूर्ण मिठास न फूंको।"

'आग-पानी' संग्रह में पचास गीत संकलित हैं। जिसमें प्रकृति से तादात्मय स्थापित करता हुआ कवि किसान, मजदूर और सर्वहारा वर्ग की दीनता और अभावों से व्यथित होकर अपना संदेश जन-जन तक पहुँचाने में लगा है। वह दीन हीनों के प्रति सहिष्णुता को जगाने के लिये शंखनाद कर रहा है। यह रचना प्रगतिवादी विचारधारा की सफल अभिव्यक्ति है। जहाँ एक ओर सामंती शासन की परंपराओं और उनके गौरव का बखान व्यास जी ने अनेक रचनाओं में किया है, वहीं 'आग-पानी' में इस व्यवस्था के शिकार कृषक, मजदूर और अन्य शोषित वर्ग के प्रति करुणा प्रवाहित की है। खेत में खड़े एक गरीब कृषक का चित्र खींचते हुए कवि कहता है -

"खेत में तपसी खड़ा है। हाथ की ठेंठें बतातीं, भाग्य से कितना लड़ा है।"

'साँझ-सकारे' कृति में 108 मुक्तक शामिल किये गये हैं। इन मुक्तकों में सामाजिक परिवेश के विभिन्न विषय कलम का स्पर्श पाकर सजीव हो उठे हैं। प्रकृति के प्रति प्रेम के साथ अनेक महापुरुषों पर केन्द्रित मुक्तक इसमें संकलित हैं। व्यास जी देश के विकास के लिए यह मानते हैं कि देशवासियों के बीच समानता हो और समाज में व्याप्त विषमताओं की खाईयाँ पटें। इसीलिए वे लिखते हैं -

"भेद की सड़ती हुई दीवार गिराते तो चलो।
प्रेम की उठती हुई मीनार बनाते तो चलो।
भाइयों को द्वेष की खंदक में नहीं गिरने दो,
प्यार के सौ हाथ लिये आओ उठाते तो चलो।"

'पुण्य-भूमि बुन्देलखण्ड' कृति में व्यास जी ने बुन्देलखण्ड की साँस्कृतिक धरोहर को संजोया है। इस पुस्तक में संकलित 'हरदौल का विषपान' कविता के माध्यम से व्यास जी ने बुन्देलखण्ड के लोकदेवत्व प्राप्त नायक हरदौल के जीवन पर प्रकाश डाला है। यह कविता देवर तथा भाभी के पवित्र ममतापूर्ण संबंधों को रेखांकित करती है। वे हरदौल के माध्यम से कहते हैं -

"माँ तेरी लाज बचाने को हौं धन्य आज जो मर जाऊँ।
बुन्देलखण्ड के बुन्देलन कौ माथौ ऊँचौं कर जाऊँ।।"

इस कविता में व्यास जी ने हरदौल के अग्रज जुझार सिंह को अनुज की मृत्यु पर पश्चाताप करते हुए दिखाकर नया मोड़ दिया है। 'मेहतर बाबा' कविता बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक विरासत के साथ समाज में व्याप्त मित्रता के भाव को प्रकट करती है। जब हरदौल जहरबुझा भोजन करके प्राण त्याग देते हैं, तो पता चलने पर हरदौल का मित्र मेहतर जिद करके झूठा भोजन ग्रहण कर अपने प्राणों को न्यौछावर कर देता है। इस कविता में व्यास जी ने बुन्देलखण्ड में शकुन अपशकुन के अनेक लोकविश्वासों को व्यक्त किया है। शब्दों के माध्यम से मेहतर के रूप में ऐसा बिम्ब व्यास जी ने रखा है जो मनोहारी है। वे लिखते हैं -

"कुरता पैर मूंगिया स्वापा, बाँध हरीरौ मतवारौ।।
लो के पंचा कों कसकैं, चलौ ले लै घरवारौ।।"

'गा उठे चैतुआ राग' कविता बुन्देलखण्ड के प्राकृतिक वातावरण को साकार करने वाली है। इसमें गेहूं की फसल के पकने से सुरभित हुए परिवेश को रुपायित करते हुए प्रकृति में मानवीय क्रियाओं के आरोपण से व्यास जी ने नवीन सौन्दर्य उत्पन्न किया है। वे इस प्रकार कहते हैं -

"पैर कैं सरसों धुतिया पीत, देत नई-नई चिलकैं।
खिल गए खुशी के फूल, झूल-सी गई किलकैं।।"

'चेतावनी' कविता में लोक को संबोधित कर उसे झकझोरने का प्रयास किया गया है। इसमें विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से यह समझाने का प्रयास किया गया है कि आज हमारी सांस्कृतिक अस्मिता पर सुनियोजित आक्रमण है, इसे बचाने की आवश्यकता है, दुश्मनों की चालों को समझने की जरूरत है। इस कविता में मुहावरों का प्रयोग इतना सटीक है कि व्यंजनात्मकता से कविता में नयी धार आ गयी है। वे लिखते हैं -

''पुरा परौसी सुनकें जर गये,
चड़ती कीरत सैं वे बर गये,
आग लगाबे भरे बाग में,
पूरे मन से पाछें पर गये।।''

'गाँव की साँझ' कविता में ग्राम सँध्या में सम्पन्न सभी क्रियाओं को सूक्ष्मता से देखपरख कर कवि ने इन्हें शब्दों के माध्यम से व्यक्त किया है कि किस तरह किसान खेत से अपने बैलों के साथ आता है? बैलों के गले में बंधे झेला कैसी मधुर ध्वनि निनादित करते हैं? इसे कविता में पढ़कर सुना जा सकता है। 'वीर सिंह देव का न्याय' कविता में दतिया राज्य के संस्थापक महाराजा वीर सिंह की न्यायप्रियता व सत्यनिष्ठा का वर्णन है।

कवि 'देश के देवता' काव्य सँग्रह में धर्म, दर्शन, कला, साहित्य, संगीत, नीति, रीति, न्याय, मूल्य, अधिकार, कर्तव्य, आचारण आदि की आदर्श स्थिति की कामना करता है। कवि ने मानव समाज की स्थायी बुराइयों के साथ स्वतंत्र भारत व आधुनिक विश्व की विद्रूपताओं को अपनी लेखनी में समेटा है व उनसे मुक्त समाज, राष्ट्र व विश्व की कल्पना की है -

''एक घर में नहीं, दीप-घर-घर जले,
शुद्ध सम्पन्नता, सिद्धि फूले-फूले।
सब में उत्साह हो, कुछ न गुमराह हो
अब अभावों में कोई न कर को मले।।''

कवि ने न सिर्फ शोषण-मुक्त-समाज की कल्पना की है बल्कि एक प्रेमपूर्ण आनन्द भरे समाज का सपना भी सँजोया है। वे समाज में व्याप्त धार्मिक अंधविश्वासों के नष्ट होने की कामना भी करते हैं। कवि वादमुक्त बराबरी का स्वागत करता है। वे इस रचना सँग्रह की कविताओं में समाज से जातिभेद, वर्ग भेद और धार्मिक भेद की संकीर्णताएं नष्ट करने की कामना करते हैं और समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, आतंक, अराजकता, गरीबी और बेरोजगारी से मुक्ति की ललक व्यक्त करते हैं।

'जागा मेरा देश' कविता सँग्रह में जागरणपरक राष्ट्रीय स्तवन की कविताएँ हैं। वे राष्ट्रीय भावभूमि पर खड़े होकर आदर्शोन्मुख यथार्थवादी गीत रचते हैं। कवि के भीतर राष्ट्र की वर्तमान दशा को लेकर पीड़ा और आक्रोश है। इसीलिए वह कहते हैं -

''तन तो है स्वाधीन किन्तु अब मानस पर-आधीन हो गया।
मिटते अपने चिन्ह, मार्ग का दर्शक स्वयँ मलीन हो गया।।
सबका राज्य लगा के नारा, स्वास्थ की जय बोल रहे हम।
निज सँस्कृति संकीर्ण बात है, तर्कों का विष घोल रहे हम।।''

'तुम मत रोना' संग्रह में 105 गीत संकलित हैं, जो गांधीवादी दार्शनिकता, छायावादी करुणा और मंचीय सरसता से आपूरित है। इसमें कवि की अनुभूति वैयक्तिक, संवेदना से सरावोर है। इस सँग्रह के गीतों में ईश्वर का स्तवन, परम्पराओं का वर्णन, त्यौहारों पर्वों की महत्ता, आधुनिक जीवन की पीड़ाओं, स्वतंत्र भारत की विसंगतियों, नारी की दयनीय स्थिति आदि को अभिव्यक्त करते हुए वैयक्तिक पीड़ा, निराशा, कुण्ठा को व्यक्त किया गया है। वे कहते हैं -

''राम तुम्हारी नवमी हमने अब तक बहुत मनायी है।
आज मगर अवकाश कहाँ है जो कह पायें बधाई है।।''

'गीतों में चार ऋतुएँ' संग्रह में प्रकृतिपरक ऋतु वर्णन की कविताएं संकलित है। वसंत, ग्रीष्म, शरद आदि ऋतुओं का विस्तार से वर्णन किया गया है।

व्यास जी की गद्य कृति 'अपना देश अपना संगीत' तेरह रेडियो रूपकों का संकलन है। इस त्रयोदश पुष्पों के पुस्तकीय पुष्पगुच्छ में विविधवर्णी भावों के दर्शन होते हैं। इस सँग्रह की रचनाओं में बुन्देली माटी की महक, लोक संस्कारों की चहक तथा लोक पर्वों की लहक के साथ आजादी के दीवानों का उत्सर्ग प्रतिबिम्बित है। इस संकलन का हर रूपक बुन्देलखण्ड की संस्कृति की महक से सुगंधित है।

'अपना देश अपना संगीत' नामक प्रथम रूपक में रचनाकार ने देश का अर्थ संकुचित कर बुन्देलखण्ड तक सीमित कर इस क्षेत्र के संगीत की स्वर लहरियाँ सुनाई हैं। इसमें जहाँ एक ओर रमतूला की टेक है, तो दूसरी ओर तानसेन की तानें और कुदऊ सिंह की पखावजी गमकें हैं। इसमें लोक में रचे बसे भजनों, गारियों, लाँगुरियों और गोटों से परिचित कराया गया है। सोहरों, बनरों और जेवनार गीतों से भी इस रूपक में रूबरू कराते हुए व्यास जी ने बुन्देलखण्ड के शास्त्रीय तथा उपशास्त्रीय विधाओं को भी स्पर्श किया है।

'चिर चेतन बुन्देलखण्ड' में ऐतिहासिक पात्रों के माध्यम से आत्मगौरव को प्रस्तुत करते हुए, हरदौल, आल्हा-ऊदल, छत्रसाल, वीरांगना लक्ष्मीबाई तथा पंडित परमानन्द के वीरता से भरे कृत्यों को पाठक मानस पटल में कुशलता से उकेरने में सफल रहे हैं व्यास जी। इसी रूपक में बुन्देली विद्वानों, साहित्यकारों, पंडितों, पत्रकारों तथा तांत्रिकों से मिलवाया गया है। 'वर्षा मंगल' रूपक पावस ऋतु की प्रशस्ति में रचित है। पानी बरसने से किस प्रकार धरा हरियाली की चूनर ओढ़ती है? यह बड़ी चतुरता से बताया गया है। धरती की कोख से अनगिनत अंकुर अंकुरित होकर पावस में ही पल्लवित होते हैं? बुन्देली धरा पर गाये जाने वाले आल्हा का स्मरण, इस रूपक को पढ़ने से ही हो जाता है। पावस में ही भाई बहिन का पवित्र पर्व रक्षाबन्धन मनाया जाता है। पावस में ही विरहिनी नायिका को काली घटायें हृदय विदारक पीड़ा प्रदान करती है। इन समस्त भावों का एक साथ परिचय होता है 'वर्षा मंगल' में। इसी तरह का मिलता-जुलता दूसरा रूपक भी इसी संग्रह में है - 'वर्षा वन्दन'। जिसमें पावस का स्वागत किस तरह होता है? दर्शाया गया है।

'लोक चेतना के स्वर' में बुन्देलखण्ड की माटी में व्याप्त लोक व्यवहारों, लोक-उत्सवों, लोकगीतों, लोक-परम्पराओं, लोक-विश्वासों, लोक-गाथाओं और लोक-देवताओं को चित्रित किया गया है इसमें बुन्देलखण्ड के तीर्थों से भी परिचय कराया गया है। पर्वों पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया है, रचनाकार ने। इस संकलन में होली, दीपावली, विजयादशमी पर केन्द्रित चार रूपक है। विजयादशमी पर केन्द्रित 'लोक दशहरा' तथा विजयोत्सव नामक दो रूप हैं। प्रथम में दशहरा पूर्व नवरात्रि के जवारों का जिक्र करते हुए, दुर्गा पूजा का चित्रण पूरी तन्मयता से करते हुए अनेक देवी-गीतों को इसमें समाविष्ट किया गया है। शक्ति उपासना के बाद बुन्देलखण्ड में दशहरा का पर्व राम की जय जयकारों के साथ किस तरह मनाया जाता है? इसके पीछे दर्शन क्या है? इसका प्रभाव क्या है? इन समस्त प्रश्नों के उत्तर छिपे हैं - लोक दशहरा में। 'विजयोत्सव' में राम की विजय का गायन ऐतिहासिक मान्यताओं पर आधारित है। इसमें पाप पर पुण्य की, दैत्यत्व पर देवत्व की, न्याय पर अन्याय की, असत्य पर सत्य की तथा अधर्म पर धर्म की विजय दर्शित है।

'ज्योति पर्व' में प्रकाश पर्व दीपावली का आलोक बिखरा है। दीपावली के समय की कार्तिक मास में बुन्देली नारियाँ 'कृष्ण लीला' रचतीं हैं। उस समय गाये जाने वाले कार्तिक गीत को व्यास जी ने इस रूपक में स्थान दिया है। यह रूपक काव्यात्मक है। 'होरी के हुरियारे' में होली के समय की मस्ती, झाँझ, नगड़िया के स्वर तथा नायक-नायिका की बरजोरी है। होली पर्व का उल्लास इसमें लबालब भरा है।

इस त्यौहार का कृषि के साथ, बसन्त के साथ रिश्ता जोड़ा गया है। 'राम का अवतरण' रूपक के विभिन्न कथाओं को संजोकर राम अवतार वर्णन है। इसमें आदि कवि बाल्मीकि, गोस्वामी, तुलसीदास, रहीम, फादर कामिल बुल्के के नाम दिखाए गए हैं। राम की व्यापकता, पवित्रता तथा महामानवता को बड़े अच्छे ढंग से इस रूपक में प्रस्तुत किया गया है।

ज्ञात शहीदों की चिताओं पर तो हर बरस मेले लगते हैं, फूल चढ़ाते हैं, शीश नवाये जाते हैं, किन्तु गुमनाम शहीदों को प्रणाम किया गया है स्वतंत्रता योद्धा पंडित भैयालाल जी ने अपने रूपक 'गुमनाम शहीदों की याद में।' इस रूपक में इन समस्त वीरों को नमन् किया गया है, जिन्होंने स्वदेशी आंदोलन, जलियावाला बाग कांड, असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन और पूर्ण स्वरूप आन्दोलन आदि के दौरान प्राणाहुति दी। वह लिखते हैं –

''अपने इन सपूतों को जो आजीवन कर्तव्यरत रहके अपने देश के लिए निछावर होते गए, अपना सब खोते गए, पिसते गए, बर्बाद होते गए और अन्त में गुमनाम होकर जनमानस से ओझल भी हो गए, उन शहीदों को हमारा, हमारी कौम का सलाम, कृतज्ञ राष्ट्र का शत् शत् प्रणाम।''

'प्रतिभापुंज मुंशी अजमेरी' में चिरगाँव के कविवर श्री प्रेम विहारी अजमेरी का व्यक्तित्व और कृतित्व उकेरा गया है। उनके काव्य के विविध आयामों को स्पष्ट किया गया है। मुंशी अजमेरी के बारे में महावीर प्रसाद द्विवेदी, वनारसी दास चतुर्वेदी, वृन्दावन लाल वर्मा, राम मोहन शर्मा, मैथिलीशरण गुप्त तथा वियोगी हरि आदि विचारों को इस रूपक में लिया गया है। इसमें अजमेरी जी का बहुआयामी व्यक्तित्व प्रकाशित हुआ है। 'गीतों भरा बुन्देलखण्ड' रूपक में बुन्देली लोकगीतों को उद्धत करते हुए व्यास जी ने पुंसवन से लेकर मृत्यु तक गाये जाने वाले गीतों का उल्लेख किया है। जीवन के दु:खों और सुखों को बुन्देलखण्डवासी किस तरह गाकर जीते हैं, इसको सूक्ष्मता से चित्रित किया गया है। इसमें जीवन के विभिन्न सँस्कारों के अलावा लोक संस्कारों, व्यवहारों को भी गीतों में पिरोया गया है।

'रस-वृन्दावन' कृति राधा-चरित पर आधारित हैं। इसमें व्यास जी ने राधा को मौलिक और नये रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी राधा केवल कृष्ण प्रेयसी वियोगिनी होकर अश्रुधार नहीं प्रवाहित करती, बल्कि कृष्ण के साथ कर्तव्य निर्वहन में बराबरी का हाथ बँटाती है। राधा कृष्ण के संघर्ष में सहभागिनी तथा मार्गदर्शिका है। इनकी राधा प्रिय प्रवास की राधा और साकेत की सीता और उर्मिला से भिन्न खड़ी दिखाई देती है। व्यास जी ने राधा को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर महत्वपूर्ण सृष्टि रची है। इसमें मौलिक कल्पनाओं और उद्‌भावनाओं से पाठक प्रभावित हुए बिना नहीं रहता।

'सीता सत्य' में व्यास जी ने सीता के चरित्र को नए ढंग से गढ़ने का प्रयत्न किया है इसमें सीता का शाश्वत-गाथा रूप में चित्रित किया गया है। सीता को इसमें मर्यादा के साथ सत्य रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें सीता के पारम्परिक रूप को अधिकाधिक व्यापकता देने का प्रयत्न किया गया है। किन्तु आधुनिक परिप्रेक्ष्य में सीता से सम्बंधित राम से जो प्रश्न उठाये जाते हैं, वे इसमें गायब हैं। इसमें व्यास जी कवि की तुलना में वैष्णव अधिक दिखाई देते हैं। उनकी आस्थायुक्त मानसिक स्थिति से स्वत: स्फू रचना के रूप में 'सीता सत्य' कृति प्रकट हुई है। इसमें सीता के सुयश को स्थापित करने में व्यास जी सफल रहे हैं।

'छोर के छन्द' काव्य संग्रह में विविध भावभूमि के गीतों को संकलित किया गया है। इसमें उनके जीवन संघर्ष, पीड़ा, दु:ख, अवसाद व उलाहने की अभिव्यक्ति हुई है। कवि व्यास जी का अपना एक सपनीला संसार है, उसके यथार्थ में टूटने पर निराशा आना स्वाभाविक है। इसी भाव से अनेक रचनायें इस काव्य संग्रह में संकलित हैं। इसमें जमाने के दर्द को कवि ने अपनी छाती में सँजोकर रखा है। वे लिखते हैं –

''किसको मन की पीर सुनायें,
किसको उर को चीर दिखायें।
कोई न देखे, सुने न कोई,
किसको रोयें किसको गायें।।''

इसी तरह वे जिन्दगी को आंसुओं की बहती नदी मानते हुए पल-पल घाव सहने की बात बड़ी कुशलता से उठाते हैं। इसमें कवि के अनुभव व्यापक फलक पर काव्य प्रतिभा से अनूठे रूप में प्रकट हुए हैं। 'महाबली छत्रसाल' पुस्तक में व्यास जी की चार नौटंकियों का संकलन है। इनकी विषय वस्तु ऐतिहासिक है, जो बुन्देलखण्ड की यशस्वी माटी से ली गई है। इनमें बुन्देलखण्ड का तेज, वीरत्व, त्याग के साथ प्रेम के रूप दृष्टव्य हैं। 'भुंजरियों की लड़ाई' तथा 'आल्हा-ऊदल' बुन्देलखण्ड की वीरता का बखान करती हुई सांस्कृतिक मूल्यों को व्यक्त करती है। एक आदमी अपने सुकर्मों से किस प्रकार देवता बन जाता है। यह लोक नायक 'हरदौल' के जीवन से सीखा जा सकता है। 'हरदौल का विषपान' नौटंकी के माध्यम से व्यास जी ने बुन्देलखण्ड के उच्च जीवन आदर्शों को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। 'कीरत वट महाबली छत्रसाल' में नूतनता के साथ महाराज छत्रसाल तथा भूषण के छन्दों का सफल प्रयोग व्यास जी ने किया है। यह पुस्तक बुन्देलखण्ड में नौटंकियों की संभवतः इकलौती प्रस्तुति है।

'ओनामासी' काव्य-संग्रह में व्यास जी के प्रारंभिक रचना काल की छन्दबद्ध व महत्वपूर्ण रचनाएँ संकलित हैं। इनमें किशोर मन की भावुकता, युवकोचित आक्रोश तथा अंतर्मन की छटपटाहट ने शब्द रूप धरा है। इसकी अधिकांश रचनाएँ समस्यापूर्ति के रूप में लिखी गई है। समस्यापूर्ति तत्कालीन परिवेश में एवं कवि सम्मेलनों में अनिवार्य होती थी, जिसके माध्यम से कवि का छांदिक ज्ञान तथा कल्पनाशीलता को मापा जाता था। इस कसौटी पर व्यास जी सोलह आने खरे उतरे हैं। इस संग्रह की रचनाओं में राष्ट्रीयता का भाव तथा जातिधर्म की आस्था गहरे से प्रकट होती है। इस तरह हम देखते हैं कि श्रद्धेय व्यास जी की रचनाधर्मिता का आयाम बड़ा व्यापक तथा विविधवर्णी है। उनके काव्य में प्रेम के विविध रूपों के साथ राष्ट्रीयता, लोक सांस्कृतिक भावना के प्रति अनुराग तथा अपनी माटी की सुगंध व्याप्त है। उनकी रचनाओं से हिन्दी साहित्य का साहित्यकोष सुनिश्चित तौर पर समृद्ध हुआ है। इनकी साहित्य साधना नए रचनाकारों को प्रेरणास्त्रोत बनी रहेगी।

– एम.आई.जी.-7,
न्यू हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी,
छतरपुर (म.प्र.)

महाकवि ईसुरी की बखरी का तात्विक विवेचन

- डॉ. रामनारायण शर्मा

समस्त सृष्टि में सचराचर की समाहिति है। ईमें जड़ चेतन के बन्न- बन्न के रूपो के दर्शन होत। प्राणियन में श्रेष्ठ मानुष, पंच महाभूत तत्वो से बनो उत्तम शरीर धारी है। जी की प्राप्ति में अनेकन योनियों की परि समाप्ति के बाद होत। मानुष शरीर की महत्ता सुर नर मुनि सबई समझत व जानत। प्रकृति पुरूष स्वयं मनुष्य शरीर में अवतरित भये संत तुलसीदास ने मानुष शरीर धारण को दुर्लभ बड़ भागी मानो। सब से बड़ी बात मानुषतन को अबिनासी के अंश कौ निवास मानो गयों। जो प्राणीमात्र से अलग सुचेतन व प्रकाशवान है और विभिन्न नामकरण से भाषित है।

शरीर रूप - समस्त प्राणी जगत में पंचभूत तत्वन से वने शरीर को शरीर काया तन व देहे आदि नामो से जानो जात परमात्मा के निवास के कारण मानुष शरीर को रथ क्षेत्र मंदिर घट आदि से संबोधित करो गयों। यथा

रथ :- कठोपनिषद में शरीर को रथ मानो गयों जी को आत्मा रथी बुद्वि सारथी ,मन लगाम है तथा इंद्रिया जोड़े है

जैसे ''आत्मान रथिनं विद्वि शरीरम रथमेव तु।
वुद्धिं तु सारथिं विद्वि मन: प्रग्रहमेव च।।
इन्द्रि चारणि हयाना हुर्विषया: स्तेषु गोचरान।
आत्मे निंद्रिय मनोयुक्तं भेकृत्याहु मनीषिण:

(कठोपनिषद 1/03/3-4)

मानुष शरीर इंद्रियों के अन्तर्गत आता है जो इके अन्दर वास करत आत्मा से प्रदर्शित होता है। जौ आत्मतत्व बहुत गूढ़ है जो सूक्ष्म बुद्धि द्वारा ही समझो जा सकत। जैसो कठोपनिषद के ई सूत्र में देखवे मिलत।

एव: सर्वेपु भूतेषु गुढ़ोत्मा न प्रकाशते।
दृश्यते त्वग्रयया बुद्वयासूक्ष्मया सूक्ष्म दर्शिभि:।।

(1/03/12)

ऐसी आत्मा को (परमात्मा) शरीर रूपी यंत्र में आरूद रह के संचालित करने के भाव बताए है

यंत्र - मानुष शरीर कों यंत्रवत मान श्रीमद् भगवत गीता में अंन्तर्यामी भी परमेश्वर द्वारा कर्मो के अनुसार प्राणियों को अनेकन योनियों में भ्रमण कराता शरीर धारण कराता है। यथा

ईष्वर: सर्वभूताना हृद्देपे अर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्व भूतानि यंत्रा रूदानि मायया।

(गीता 18 अध्याय 61 श्लोक)

शरीर कों यंत्र रूप दें गीताभाष्य कार नें पुष्ट करों जैसें रेलगाड़ी में बैठे मनुष्य स्वयं रेल चलने पै नई चलत परंतु अनादि सिद्व अज्ञान के कारन शरीर की क्रिया उसकी क्रिया मानी जात। ऐसें ईश्वर प्राणियों के अंतकरण में रह कर उस यंत्र रूपी शरीर कों कर्म के आाधार पै संचालित करत। और नाना योनियों में उत्पत्र, अनेकन पदार्थ और क्रियाओं से उपजे संयोग वियोग युत संचेष्टित करत - रत।

क्षेत्र रूप - गीता में शरीर को क्षेत्र और इसकों जानवें बारे को क्षेत्रज्ञ मानो गयो। जो गीता के 13 वे अध्याय के श्लोक 1 में दिया गया है।

इंद शरीर कौंतेय क्षेत्राभित्यभिधीयते।
एत द्यो वेतिं तं प्राहु: क्षेत्रस्य इतितद्विद:।।

यह आत्मा का दृश्य रूप है और कर्म फल के साथ जुरो है ऐई से शरीर क्षेत्र मानों गयो। दूसरी बात शरीर कौ क्षय नित्य होत सो यह क्षेत्र रूप में जानों जात। क्षेत्र उत्पत्ति विनाश, धर्मशाला, जड़, अनित्य, ज्ञेय (जानने योग्य) और क्षणिक है किंतु इसका अभिनासी, अंर्तआत्मा, नित्य, चेतन, ज्ञाता, निर्विकार और सदैन एक सौ रत। योगदर्शन में भी शरीर को आत्मा कौ दृष्य रूप मानो गयो - 'विशेष विशेष लिंग मात्र लिंगानि गुणपर्वाणि, की माने तो यह विशेष है काय से यह पंच ज्ञानेद्रिय पंच कर्मेद्रिय मन पंच स्थूल भूत अतिशेष यानी अहंकार और पंचतन्मात्राएं शब्द, स्पर्श रूप

रस और गंध। लिंग मात्र (महतर) और अलिंग (मूल प्रकृति) आदि चौबीस गुणों की अवस्था विशेष है श्रीमद् भगवत गीता क्षेत्र ऐई कौ क्षेत्र बताओ है ऐसे शरीर की स्वरूप को बखान भयो।

मानुष शरीर के अनेक रूप - दृश्य आदि को विद्वान - मनीषी जनों नें अपनी तरां सें बखान करौ। जी कौ सार रूप जो है।

चोला - चोला वास्तव में बाहरी आवरण है जो अंदर - भीतर को ढकें रत। चोला के अनेक रूप रंग व अंग माने गये। संतों ने मानुष तन को एक परम अमोलक मानों है जो नित्यात्मा से प्रकाशित छायवान है। नानक कबीर आदि ने इसे चोला रूप मानों जो नाशवान जीर्ण हो वे पैबदल जात। ऐई दर्शन की बात गीता में सोई बताई गई।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृहणाति नरोअपराणि तथा शरीराणि विहाग जीर्णा न्यन्यानि संयाति नवानि देही।

अर्थात् मनुष्य अपने पुराने वस्त्रों को त्याग नये वस्त्र धारण कर लेत उसी प्रकार आत्मा सोई जीर्ण शरीर को त्याग नये शरीर को प्राप्त कर लेत और अपने चोला बदल लेत।

पींजरा - मानुष शरीर को पिंजर पिंजर अथवा पींजरा अनेकन कविजनों ने मानों और ई के क्षय की बात कई। यथा

1. हाड़ मांस को पींजरा माटी मोल विकाय
2. हाड़ मांस को पींजरा जी में सुअर पुकारे।

(लोकमन)

3. उड़ जाओ तोता राम 'पिंजरा पुराने हो गये'

(लोकमन)

झोपड़ी व पुतला - कविवर नारायण दास बौरवला ने मानष व पुतला शरीर को झोपड़ी रूप दयो।

1. हाड़ चामतन झोपड़ी करत चाकरी जीभ स्वाभाविक मिलि तत्व निज तोरे रेखा सीक

(नारायण अंजलि 275)

2. हाड़ चाम को पूतरा हाड़ चाम पतियाय पुनि पुनि जग में जन्म लै कालहि हाथ विकाय

(नारायण अंजलि 276)

घट - निर्गुन संतों ने शरीर को घट की संज्ञा दई जी में जल रूप जीवात्मा है

घट में जल घट - घट में जल है

मंदिर - मानुष तन पवित्र आत्मा कौ निवास है सो यह शरीर एक मंदिर की भांत पवित्र है।

ई तमाम विचारों से शरीर के विभिन्न रूप घट रथ क्षेत्र यंत्र चोला पुतला झोपड़ी आदि संत मनीषी जानों ने अपनें अपने मतानुसार बताएं। परंतु इस सब में सबई पांच तत्व एक साथ नई है जो हमें ईसुरी की बंखरी में देखवे मिलत। ऐसी अद्‌भुत पंचतत्व भूत बखरी कौ विचार जरूरी है जो तत्व मीमांसा के विचार है जो तत्व मीमांसा के विचार है।

(बखरी तत्वात्मक विचार)

लोक नायक ईसुरी ने लोकमन में बसी बखरी को मानुष शरीर रूप मानो जो परमात्मा की देन है ऐसी बखरी के आधार तत्व ईसुरी ने बड़े सरल रूप में बताए जो कौ सार संक्षेप प्रस्तुत है

बखरी शब्द को अक्षर विन्यास करें से ई के सार्व भौम तत्व के दर्शन हो जात। जैसे

ब - वायु

अ - अनल

ख - आकाश

री - अनिल रज, पृथ्वी

ई तरां क्षिति जल पावक गगन समीर जो पंचतत्व माने गये वे सब बखरी में देखे जा सकत।

शरीर रूपी बखरी में निहित पांच भौतिक तत्व है जिनके सम्मिनल से ईको रूप निर्धारन होत। इ नई तत्वन पै विचार कर ईसुरी की बताई व बनाई बखरी को दर्शन उजागर होत इन पै विचार वो जरूरी है काय से सांख्य योग की बात माने तो तत्वो का मेल न होने से यह नही बन सकता। सो तत्व निरूपन से बात सिद्व हो सकत।

वायु- वायुगमन क्रियावान है जी से पृथ्वी की गंध भी संचरित होत। अंतरिक्ष में गमन करने कारन वायु को मातीरिक्षा कत जो अंतरिक्ष में स्थित समस्त पदार्थों को उड़ा सकने में सक्षम है। किन्तु वायु तो आकाश से ही उत्पन्न उसी में स्थिर रह उसी में लीन हो जात। सो सब तरां से वायु कौ

आधार आकाश मानो गायों। जो गीता के नवाँ अध्याय के छटवें श्लोक "यथा काश स्थतो नित्यं वायु सर्वत्रगो महान" से सिद्ध हो जात ऐई आधार पै जा बात सोई सिद्ध हो जात कै वायु और आकाश जैसे एक दूजे से बाहरी तौर पै अलग नई रह सकत वैसेई नित्यात्मा शरीर में अवस्थित रह कै भी भौतिक निकारो से विलग रत। ऐसे वायु तत्व में मानुष जन जीवन शरीर क्रिया ये अपान उपान वायु श्वसन से जीवन्त है और शरीर रूपी बखरी के विकारो को संतुलित करत रत। वायु प्राणी मात्र की जीवन संजीवनी है। जिसकी महत्ता ईसुरी ने अपनी बखरी के आधार स्वरूप मानी।

अग्नि- अग्नि जीवन तत्वों में महातत्व है जो से शरीर की ऊष्मा प्राप्त होत जो जठराग्नि रूप में मानुष शरीर में निवास करत। इसे वेश्वनर मानों गयों शरीर के भोज्य तत्वों को प्रदान करत तथा पृथ्वी जल से त्रसरेणु पैदा कर जीवन दान देती है। अग्नि सब में निहित तदाकार रूप में दिखती है जैसे अग्नियर्थ को भुवनं प्रतिष्टो रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूल। एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च।

(कठ उ.वल्ली 5/ मं. 9)

अर्थात अग्नि लम्बे चौड़े गोल छोटे बड़े सब प्रकार की आकृति वाले पदार्थों में व्यापक होकर सदाकार दिखाई देत पै उनसें अलग है। सो शरीरी व्यापी अन्तरात्मा भी तदाकार रत। श्रीमद्भगवत गीता के पद्रहमें अध्याय के 14 वे श्लोक में अग्नि के वैलनर रूप कार बखान करो गयों।

अहं वैश्वानरों भूत्वा प्रणिनां देहमार्श्रित।

प्राणवानसमायुक्र: पचाम्यन्नं चतुर्विधम।।

अर्थात प्राणियों के शरीर में प्राण और अपान वैश्वानर रूप में सर्वसत्ता ही भक्ष्य भोज्य लेहय और चोष्य पदार्थों को पचात कर शरीर को पुष्ट करता ईवरां ईसुरी में बखरी में अन्त निहित अनल को जीवन की ऊर्जा व ऊष्मा मानौ।

आकाश :- आकाश पंचतत्वों में विशेष है ईसुरी की बखरी में इये रव मान के तत्वन के मांझे रखो गाओ आकाश बखरी के भीतर वाहर विधमान है जो बखरी के गैसीय व जलीय समानता को वनाए रखने में सहायक है। जो भव ईसुरी ने भी बताए।

तैत्तिरीय उपनिषद में आकाश की व्याख्या ईतरां करी गई।

"तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाश समभूत:

आकाश में साथ वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी तत्वों को जोड़ो गयो जीसें शरीर कौ सृजन होत आकाशद्वायु। वायोरग्नि अग्नेराप अदम्यपृथ्वी पृथिव्या औषध्म: औषधिम्योंऽन्नम अन्नाद्रेत: रेतस पुरूष स वा एस पुरूषोऽन्न रसमय:।

अर्थात आकाश के बाद वायु, वायु के बाद अग्नि और अग्नि के बाद जल और पृथ्वी से औषधियाँ और इनसे अन्न उपजत जो वीरर्य और पुरूष अर्थात शरीर कौ उत्पत्ति कारक होत ईसे आकाश तत्व कौ बड़ो महत्व माना गया जो ईसरी ने अपनी बखरी के रन शब्दो से निरूपित करौ। पृथ्वी के ऊपर नीलाम वितान एक तम्बू की भांत दिखाई देत बोई आकाश है। यह पृथ्वी से उड़ा जल चक्र है जो मेंघ में मेघाकाश मठ में मठाकाश घट में घटाकाश कौ रूप में रत ऐसेई परमतत्व सबमें व्याप्त है। यही घटाकाश की भांत घर (बखरी) में समाओं रत निराकार परमेंश्वर को व्यापक रूप को परमान है। ईसरी ने ऐई भाव में बखरी में व्याप्त महदाकाश की बात बताई है।

पृथ्वी :- पृथ्वी एक लोक है जो समस्त प्राणियों औषधियों पत्र, पुष्प और फलादि अंग प्रत्यंगों समेत वृक्ष-लता-तृण से भरी है पहाड़ नदी सागर को धारण कर इयें धरा नाम मिलौ जो परम शक्ति का ही पर्याय है जिसकी अनाशक्ति ही कभऊ कोप (भूकम्प) जल प्लावन महाप्रलय सी रूप धारन कर भू तल कौ शक्तिसामर्थ दिखा देत। हिरण्य गर्भ से उपजे बीज मनुष्य के जीवन तत्व बन पोषित करत। यह सब अविनाशी शक्ति कौ प्रमान है। यही भाव ईसुरी ने अपनी बखरी के आधार में बताए है। ई की माटी कौ तिलक कर बुन्देली वीर अपने शौर्य शक्ति से ई की आनबान और शान बनावे में न्यौछावर हो इतिहास लिख गये।

जल:- मनुष्य शरीर की संरचना में जल कौ बड़ो महत्व है समस्त पृथ्वी तल के तीन चौथाई भाग में सामुद्रिक जल फैलो। वैसेई मानुष शरीर में दो तिहाई जल तत्व है जो

जीवन कौ आधार है ऐसे ई ईसुरी की बखरी कौ अनिल तत्व परम जीवन तत्व है।

ई तरा लोक नायक ईसुरी की बखरी कौ निर्माण पंच भूत तत्वन के आधार पे रचो गयो जो वास्तव में काव्य साहित्य में एक नोनो नवीन प्रयोग मानो जात। मनुष्य शरीर की समग्रता जितनी बखरी में देखने मिलत, उतनी चोला पींजरा झोपड़ी पुतला घट आदि में नई सुहात। ईसुरी की बखरी उनकी अपनी है और अलवेली है विशेष है ई की विशेष पहचान पे तनिक विचार करें ये जानकारी मिल सकत।

1. मानुष देही लक्ष लक्ष योनियन के सत्कर्म से प्राप्त होत। जो परमपिता परमेश्वर की कृपा से मिलत ये बाते संत मुनि जोगी ध्यानी ने जानी और मानी। ईसुरी ऐई बात अपनी बखरी के बारे में ईश्वरी प्रसाद रूप मानत और ईश्वर आत्मा के निवास से जानत। मानुष शरीर हमें किराये भाड़े पै मिलो।

बरबरी रैयत है भाड़े की दई पिया प्यारे की - इन पांच शब्दों से बनी बखरी साचउ निवास व क्षण भंगुर है जी को मनुष्य अपनों अनंत निवास मान भ्रम में मगन रत। भारतीय दर्शन में जीव और जन्म उके कर्म फल से जुरे है मनुष्य के सुकर्म उये मानुष शरीर धारण के सूत्र माने गये किंतु यह जन्म और शरीर दोउें हमें अपने प्रिय (ईश्वर) के दये है जी को मोल भाव नइयां। परंतु उसी प्रान - प्यारे ने कवू चुकारौ भाड़े रूप में हमें पगड़ी जैसी अग्रिम से वचन में बांधो है।

2. भाड़े को भाव - जीवात्मा के संचित सुकर्म के छीनतई उये संसार में शरीर धारण हेतु जनम लेने परत परलोक से लोक औतार (मानुष) के कुछ कौल से बंधो जीन अपने पुराने मालिक से जुरौ रत। मानुष शरीर ऊकी देन है तो ऊको भाड़ौ तो चुकता करनें परत जो मनुष्य भागवत भंजन अर्चन दशरथ श्रवन सें चुकता करत। ईसुरी के भाड़े को दर्शन लोक सम्मत है परंतु मोह लोभ माया के फंदे में फस मनुष्य अपने सनातन के मालिक को भूल जात तो उको घर से निकाल दयो जात। ऐसेई भाड़े पै रहे के जब नियत चुकारौ अदा न करों जैहे तो मालिक की दई खोली (शरीर) छोड़ने पर है लोक नायक ईसुरी को गौ लोक रीत भाड़े को भाव लोकमन से जुरौ है।

3. कच्ची भीत की बखरी - बखरी को आकार एक ठोस आधार पै चार दीवारें और छत की छावन से पूरो होत जो भौतिक पांच तत्वों से निर्मित है ये तत्व क्षरणशील हैं सो शरीर रूपी बखरी भी नश्वर है कच्ची है माटी की है परंतु माटी के ऊपर सत्य कर्म कौ पलस्तर कर लओ जायें तो कुछ दिन और संभल जै है ऐसेई बखरी की चार दीवारें मानों चार पदारथ (धर्म अर्थ काम मोक्ष) है जो मनुष्य शरीर की सरंक्षण की गारंटी बन जाती। परंतु इनमें समय की भीगी सीलन और शुष्क बातावरण से दरारें पड़ जाती जो क्षरन के कारण बनती और बखरी बिखर जात।

4. ईसुरी बखरी के बिखराब के काजें घास फूस चारे की छावन की बात करत। छाई फूस चारे की कौ छप्पर कौ बखान कर बखरी की रक्षा से उवारवे को उपाय बताउत। सचाउ बखरी कौ जो दर्शन हमाये शरीर तल की सच्चाई और शरीर रूपी बखरी को बिकार रूप फूस चारे से सावधान करने कौ सिद्वांत है ये विकार क्रोध, द्वेष, ईष्या, लोभ, अहंकार आदि जब प्रबल हो जात तो तनक में विनाश कारी बन जात। इनमें पंचतत्व मात्राएं शवन दर्शन वाणी त्वचा उत्सर्जन आदि आग में घी को काम करत ईसुरी ने लोक जीवन में बखरी छावन को फूस चारे कौ सुंदर दृष्टांत सामने रखों। फूस एक अत्यंत ज्वलनशील घास है। और चारा में भी आग पकड़ने के गुण है ये सब मानों शरीर के विकार है जो खरपतवार की भांत शरीर में जुड़ रत और विकारों की आग की ज्वाला पकड़ बखरी को खाक कर देत। ईसुरी इन्हीं फूस चारे रूपी विकारों से संयम रूपी काट से करने की बात कर सावधान रैवे को इशारों कर रये। इसे बखरी के भीतर व बाहरी विषय विकार संयम व विवेक से नष्ट हो सकें ऐसें घाई फूस चारे की समस्या को हल निकर सकत।

5. बे बंदेज वे बाड़ा - लोक कवि ने अपनी बखरी कौ बरनन लोक प्रतीकों से करै है जो बेजोड़ है ईसुरी मानत है कै शरीर रूपी बखरी बिना बाड़ों की बनी खुली है ईके चारउ ओर सुरक्षा दीवार नइयां जी से बखरी को बाहरी

वातावरण की जहरीली नम व सुखी मस्त हवाओं की मार सहने परत। बखरी की सुघड़ता पै बुरी नजर कटु वाण प्रहार की हाय कौ परभाव परौ से रूप रंग उड़नें कौ भय बनो रत। वे बाड़ा से बखरी के चारउ ओरन अनचाई कटीली झाड़ियन को वियावान जगंल खड़ों हो जात जी में जहरीले कीट सर्प नाग जगह बना लेत। ऐसेई शरीर रूपी बखरी की साफ सफाई व देखभाल न होयं से अनेक विषाणु के दंश से रोग विकार पौधे हो जात जीसें शरीर कमजोर हो जात और उके अस्तिव को खतरा पैदा हो जात। इन विकारों सें मानुष शरीर की रक्षा संयम नियम संतुलित आहार विहार की बाड़ सजा के करी जा सकत ऐसे बंदोवस्त बखरी की सुघड़ता में सहायक होत। ईसुरी ऐसे बंदेज व संयमित बाड़ों की ओर इंगित कर अविनाशी आत्मा तत्व के निवास की देखभाल की बात बड़ी वे बाकी से करये।

6. दस द्वारे की बखरी – बखरी के बाहरी बंदेज से पूरौ काम तब तक नई हो सकत जब तक बखरी के अंदर के दस द्वार की संमार न करी जाय। ईसुरी की बखरी के दस द्वार पांच कर्मन्द्रीया पांच ज्ञानेन्द्रि है जो बखरी को प्रभावित करती ज्ञानेन्द्रि में शव्द, रूप रस स्पर्श और गंध तन्मात्राएं है जिनके कुभाव कटु शब्द कों मीठी बानी से रूप की आशक्ति रस को भगवत भक्ति के रसास्वादन से स्पर्श (काम) को भगवत प्रक्षालन तथा गधं (कामोत्तेजित) कों यज्ञ हवन से निकसत सुगंध से मिला सकत और बखरी शिक्षा कर सकत परंतु कर्मेन्द्रियां वाणी हाथ पाद उपस्थ और गुदा है। जिनकों मनुष्य सुकर्म करें से वश में कर सकत मूलत: ये प्रकृतिगत विकृतिया है यदि इन वश में न करो तो विकार पैदा हुयें और विकार पैदा होने से शरीर क्षय की शंका बनी रात अतएवं ईसुरी विना किवार और चावी ताले की युक्ति बतारये।

7. विना किवार ताले की बखरी - लोक व वेद पुरान सम्मत विचार से ईसुरी अपने पिया प्यारे की बखरी बिना किवार किवरियन की मान रयें। ईसें ताला लगाने की जरूरत नईया जब तारो नई लगो तो फिर कुची की सोई कोनउ जरूरत नइयां। जौ सब तत्व मीमांसा की बात आयं भौतिक तत्वन से बनों शरीर में दस दरवाजे खुले है। जिनसें दस रूप गंध वाक व श्रोतिय आदि को खुलो व्यौपार होत। ई व्यापार में मानुप मनसें घट तौली व दुष्कर्म करने की गुंजाअस बनी रात। दूजी बात बखरी के आस पास फिरत कुटिल कुचाली कपती ठग बटमार जैसी प्रवृत्यिां खुले दरवाजन कौ दुरूपयोग कर सकत। परंतु मन वचन कर्म ध्यान संयम नियम जैसी साधना व आराधना से चंचल चपल चतुर दुर्विचार अंदर प्रवेश नई कर सकत। इंद्रियन को बस में कर परम शक्ति को नाम लेने से दस दरवाजे अपने आप अच्छे विचारन को अंदर ले है ईसुरी की सोच है के दरवाजे को पहर रूआ राम नाम है उनको कोउ नई बिगार सकत दगा नई दे सकत।

जिनके राम चंद्र रख वारे।
को कर सकत दगा रे।

ईसुरी की मानता है के जी की बखरी की रखवारों स्वयं बखरी को मालिक है तो उके गुनगान दरसन भजनादि के सुनने और साकार रूप सौन्दर्य को पान करे से लोक को संवार परलोक की राह बनायें काय। सोजी तन को हमे गर्व है बो तो भाड़े की बखरी है आज नई तो कल छोड़नें परै है ईसुरी की बखरी को तात्विक सोच साची है।

संदर्भ सूची

1. कठोपोनिषद
2. वही
3. श्रीमद भगवदगीता
4. वेही
5. अंजली–नारायनदास बौरवल
6. नही
7. श्रीमद् भगवदगीता
8. तैन्तरीय उपनिषद
9. ईसुरी प्रकाश

– 'रामायण'
695/3 सिविल लाइन्स
रानी लक्ष्मीबाई पार्क के सामने
झाँसी (उ.प्र.)

कवि ईसुरी के काव्य की अलौकिकता

– श्रीमति पुष्पा सामवेदी

ईसुरी की अलौकिकता का दर्शन उनकी भाव भूमि लोक चेतना से सम्पृक्त होकर देखा जा सकता है। लोक चेतना एक सर्वव्यापी अनुभव है। भावना के धरातल का अवगाहन करके ही कवि उस गहराई का मापन कर सकता है। ईसुरी इस कला में माहिर थे। ईसुरी का काव्य सम्पूर्ण जन मानस की चेतना का काव्य है। जो जनजीवन के जीवनदर्शना में अनुप्राणित होते हुए दिखाई देता है। एक ग्रामीण परिवेश वाले ईसुरी के काव्य को पढ़कर सामान्य जन भी प्रेम व अध्यात्मिकता की तरंग में भाव विभोर होने लगता है। कवि मानव की सुसुप्त चेतना को जगाकर उसे प्रेमोन्मुख एवं ईश्वरोन्मुख करने मे सफल हुआ है। ईसुरी का काव्य प्रेरणा व स्फूर्ति का काव्य है। ग्रामीण जनता को फाग का उपहार प्रदान कर ईसुरी जननायक के रूप में अधिष्ठित हुए है। उनका काव्य लौकिक होते हुए भी आध्यात्मिक भाव भूमि पर आधारित चेतना है। रजऊ उनकी लौकिक नायिका न होकर आध्यात्मिक चेतना है। कवि का भाव है, तरंग है जो जनमानस को प्रेम की तरंग से तरंगित करने में समर्थ है। कवि लौकिक वर्णन के माध्यम से उस अलौकिक सत्य को प्रकट करना चाहता है, जो रजऊ के रूप में उसके अन्तर्मन में स्थापित है।

वस्तुत: जीवन का सत्य प्रेम और सौन्दर्य ही है। यदि मानव मन से प्रेम और सौन्दर्य समाप्त हो जाता है तभी उसकी वृद्धि विनाशकारी कार्यों की ओर उन्मुख हो जाती है। प्रेम और सौन्दर्य ही उसे मनुष्य की पूर्णता प्रदान करने वाले तत्व है। आज व्यक्ति का अन्त:करण प्रेम व सौन्दर्य के बाह्य प्रदर्शन में लगा है। प्रेमानुभूमि ही मनुष्य को वास्तविक रूप से मनुष्य को मनुष्य बनाकर ईश्वरोन्मुख करती है। जीवन के सत्य से परिचित कराती है। कवि ईसुरी ने यह सब अनुभव कर लिया था। उनका प्रेम केवल देहाकर्पण मात्र नहीं है, प्रेम में सबकुछ समर्पित करने वाला एक आवेश है। प्रेम में वे सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार रहते थे। प्रेम का यह उदत्त स्वरूप केवल उनके काव्य में दिखाई ही नहीं देता वरन् महसूस भी किया जा सकता है –

विधनाकरी देह न मोरी, रजऊ के घर की देरी।
आवत जात चरन की धूरा, लगत जात हर बेरी।

प्रेम का यह उदात्त रूप बाह्य न होकर आन्तरिक है उनकी रजऊ सूर की राधा के सद्श्य है यह कवि के अंतरात्मा की अतल गहराई में छिपा भक्ति भाव है जो उस चैतन्य को प्राप्त कर उसमें समाहित हो जाना चाहता है ईसुरी का प्रेम त्याग की तपोभूमि पर आधारित है। तभी उनके मन में दया, धर्म, समर्पण, प्रेम के भाव नि:स्वार्थ रूप से उद्वेलित होते रहते है।। यह जब पूर्णत: क्षणभंगुर है, यहां मनुष्य के किए हुए कर्म ही याद किये जाते हैं। ईसुरी कहते हैं –

जौ तन परस्वारथ के लाने जो कोऊ करके जाने।
नई जे महल दुमंजिला अपने, न बखरी दालाने।
जे सब माया के हैं चक्कर, बिरथा फिरत भुलाने।
कैंड़ा कैसो छोड़ ईसुरी, हंसा हुए रमाने।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चतुर्दिक पुरूषार्थ में ईसुरी का अगाध विश्वास है, इसलिए एक ओर उनका काव्य लौकिक जनमानस को रसासिक्त कर देता है तो दूसरी ओर आध्यात्मिकता के भाव से भी ओतप्रोत दिखाई देता है। ईसुरी के काव्य में आज के मशीनीयुग में क्षरित होते हुए मानव मूल्य को बचाने की चेष्टा की गई है। इस जगत के सत्य को ईसुरी ने भलीभांति भोगा व परखा है, इसलिए वे कह उठते हैं यहां प्रत्येक जीव अल्पकाल के लिये आया है –

बखरी रैयत है भारे की, दई पिया प्यारे की।
कच्ची भींत उठी माटी की, छई फूस चारे की।
बेबन्देज डरी बेबाड़ा, जई में दस द्वारे की।
नेई किबार किबरियाँ एकऊ, बिना कुची तारे की।
ईसुर चाय निकारों जिदना, हमें कौन बारे की।

बखरी के रूपक को लेकर इस नश्वर देह का वर्णन नितान्त ग्रामीण है। इस फाग को पढ़कर पाठक के मन में की असारता का भान हो जाता है। ऐसी प्रतीत होता है कि संस्कार लोक कवि ने गाँव में कोई बेबन्देज बेबाड़ा बिना किबाड़ों किबड़ियों की बखरी देखकर उसके बिम्ब को छाया में जड़ दिया है। मृत्यु असम्भावित चिर सत्य है इसका चित्रण उन्होंने निम्न फाग में किया है:-

इक दिन होत सबई को गौनो, होनो और अनहोनो।
जाने परत सासरें साँसऊँ, बुरऔं लगै चाय नोनौ।
यही भाव निम्न पद में भी दृष्टव है -
तन कौन भरोसो करनें, आखिर इक दिन मरनें।
जौ संसार ओस कौ बूंदा, पवन लगे से ढुरनें।
जौ लौ जी की जियन जोरिया, की खां जे दिन भरने।
ईसुर ई संसार में आकें, बुरे काम खां डरने।

इस अनुपयोगी मानव तन को परमार्थ के कार्य से ही उपयोगी बनाया जा सकता है ईसुरी ने मानव जीवन को अमूल्य माना है, इस तन के द्वारा मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है।

तन के शुभ लच्छन सब जाके, दया करन है ताके।
जिन बाई जड़ पड़े धीरता साखा सीलन छाके।
अरथ धरम औ काम मोक्ष फल पुन्न पुरातन पाके।

कवि ईसुरी ने स्पष्ट कहा है कि देहरूपी वृक्ष में चतुरता की जड़, धीरता का तना, शील की शाखायें, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के फूल होते हैं। यदि मनुष्य के कर्म अच्छे हैं तो उसे मोक्ष प्राप्त होता है।

वस्तुतः लोक साहित्यकार का दर्शन मानवतावादी होता है वो बिना किसी भेदभाव के जाति, वर्ग, सम्प्रदाय, धर्म की कट्टरता से परे लोकहित में तल्लीन रहता है। इसीलिए ईसुरी का काव्य एक ओर लौकिकता से पूर्ण होता हुआ भी अलौकिक है। लोक कवि किसी दार्शनिक सम्प्रदाय से पूर्णतः बंधा नहीं रहता परन्तु दार्शनिकों की विचारधाराओं से प्रभावित अवश्य होता रहता है। 'ब्रम्हा सत्यं जगन्मिथ्या' अद्वैतवाद का यह सिद्धानत ईसुरी के काव्य में सर्वत्र ध्वनित है। ईसुरी ने जीव को हंस और ब्रम्हा को समुद्र का रूप देकर ब्रम्हानन्द को अपने ढंग से निम्न पद में कहा है -

हंसा उड़ चल देस बिरानें, सरवर जाये सुखाने।
इतै रमे में कौन भलाई जितै बकन के थाने।
समद भरे है अगम उतै चल, सुक पावे मनमाने।
बचत बने तो बचो ईसुरी ताने काल समाने।

उपर्युक्त पद में संसार की लोलुपता का चित्रण किया गया है इस प्रकार ईसुरी के काव्य को पढ़कर पाठक का मन अलौकिकता के समुद्र में विचण करने लगता है और उसे संसार की असारता का भान हो जाता है। इस दृष्टि से ईसुरी का काव्य अनुपम, अद्वितीय व अलौकिक है।

सहायक प्राध्यापक
महाराजा महाविद्यालय
छतरपुर (म.प्र.)

बुन्देली लोकनाट्य : कांड़रा और रहस

– डॉ. शरद सिंह

लोक परम्पराओं में जनजीवन का समग्र होता है। जनसामान्य की मान्यताएं, उनके विचार, उनके व्यवहार, उनके आग्रह आदि सभी कुछ लोक परम्पराओं में समाया रहता है। लोक परम्पराओं के अनेक संवाहक होते हैं – गीत, नृत्य, वाद्य, कथाएं, गाथाएं एवं नाट्य आदि। लोकनाट्य क्षेत्र विशेष के चरित्र का सबसे सटीक उद्घाटक होता है। प्रत्येक लोकनाट्य में नायक, खलनायक, नायिका, खलनायिका, विदूषक जैसे नाना प्रकार के चरित्र होते हैं जो क्षेत्रविशेष के जातीय गुणों एवं परिस्थितियों को उजागर करते हैं। बुन्देलखण्ड में भी लोकनाट्यों की समृद्ध परम्परा पाई जाती है। इनमें श्रीकृष्ण लीला से प्रभावित अथवा प्रेरित दो प्रमुख बुन्देली लोकनाट्य हैं –

(1) कांड़रा

(2) रहस

कांड़रा लोकनाट्य

कांड़रा लोकनाट्य प्रारंभ में राई की तरह का गीत नाट्य था किन्तु भक्तिकाल में रास परम्परा से प्रभावित एवं आकर्षित हो निर्गुण ब्रह्म के भक्तों ने कांड़रा गीत नाट्य में नृत्य का विकास किया। इसमें निर्गुनिया भजन गाता है तथा गीत के अनुरूप आंगिक अभिनय कर नृत्य तथा हाव-भाव प्रदर्शित करता है। इसमें पहले गीतिबद्ध संवाद, फिर कथा तथा स्वांग शैलियों का आगमन हुआ। निर्गुनिया गीत संवाद का एक उदाहरण देखें:-

पहला व्यक्ति:-
ऐसो सो गओ दावेदार, खबर नईं जा तन की।
जम के दूत द्वार पै ठाड़े हम पै कही ना जाए।।

दूसरा व्यक्ति:-
सासुरो छोड़ मायको छोड़ो, छूटो अदपर डूबी नाव।
कहत कबीर सुनो भई साधो, सुंदरी खत पछार।।

कांड़रा का मंच चौपाल-चबूतरा, मंदिर प्रांगण आदि खुला होता है। यद्यपि समय के साथ इसे शास्त्रीय मंच पर भी प्रस्तुत किया जाने लगा है। इसकी प्रस्तुति के समय मंच के पृष्ठ भाग के करीब वादक-मृदंग, कसावरी, मंजीरा और झींका पर संगति करते खड़े रहते हैं। जबकि नर्तक सारंगी वादन करता है और निर्गुनिया मंगला-चरण प्रारंभ। वादक वेशभूषा पर ध्यान नहीं देते किन्तु मुख्य नायक कांड़रा जो सम्भवत: कान्ह, का स्वरूप है, सराई पर रंग बिरंगा जामा, पहनकर, सिर पर कलंगीदार पगड़ी बांधता है। जामा पर सफेद या रंगीन कुर्ती पहनता है। बीच-बीच में फिरकी की भांति नृत्य करता है। इस आधार पर यह माना जा सकता है कि कांड़रा शब्द की उत्पत्ति 'कान्हा' के आंचलिक शब्द 'कान्हड़ा' अथवा 'कान्हरा' से हुई। जो कि आगे चल कर 'कांड़रा' में परिवर्तित हो गया।

कांड़रा कृष्ण की तरह चक्राकार परिधि में घूमता हुआ नृत्य करता है। यह क्रम कभी-कभी दो-तीन गीतों तक चलता है। ढोला-मारू, सारंगा-सदाब्रज जैसे कथानकों पर गीत नाट्य खेला जाता है। निरगुनिया गीतों के बाद प्रेमपरक गीतनाट्य प्रारंभ होते हैं। इसमें सम्मिलित होने वाले अभिनेता-अभिनेत्री चटख रंग का मेकअप अपने चेहरे पर लगाते हैं। इसमें स्वांग भी समाहित होने के कारण पात्र के अनुसार मेकअप किया जाता है।

यद्यपि आधुनिकता के इस दौर में अन्य लोककलाओं की भांति कांड़रा लोकनाट्य पर भी संकट के बादल छा चुके है अत: इसे पर्याप्त प्रोत्साहन दिया जाना आवश्यक है।

रहस लोकनाट्य

कृष्ण की रासलीला से प्रभावित बुन्देली अंचल में 'रहस' परम्परा प्राप्त होती है। इसके दो रूप प्रचलित है- एक, कतकारियों की रहस लीला और दूसरा लीला नाट्यं

कतकारियों का रहस बुन्देलखण्ड की व्रत परम्परा का अंग बन गया है। कार्तिक बदी एक से, पूर्णिमा तक स्नान और व्रत करने वाली कतकारियां गोपी भाव से जितने क्रिया व्यापार करती हैं, वे सब 'रहस' की सही मानसिकता बना देते हैं।

'रहस' में अधिकांशत: दधिलीला, चीरहरण, माखन चोरी, बंसी चोरी, गेंद लीला, दानलीला आदि प्रसंग अभिनीत किए जाते हैं।

'रहस' का मंच खुला हुआ सरोवर तट, मंदिर प्रांगण, नदीतट और जनपथ होता है। कतकारी वस्त्रों में परिवर्तन करके पुरूष तथा स्त्री पात्रों का अभिनय करती हैं। वाद्यों का प्रयोग नहीं होता। संवाद अधिकांशत: पद्यमय होते हैं।

बुंदेलखण्ड में कतकारी छैंकवे को प्रसंग बहुत महत्वपूर्ण है।

लीलानाट्य के रूप में अभिनीत 'रहस' अधिकतर कार्तिक उत्सव और मेले में आयोजित होते हैं। इनका मंच मंदिर-प्रांगण, गांव की चौपाल अथवा विशिष्ट रूप से तख्तों से तैयार 'रास चौंतरा होता है। 'राधा-कृष्ण' बनने वाले पात्र 'सरूप' कहे जाते हैं। वाद्य के रूप में 'मृदंग एवं परवावज' (वर्तमान में ढोलक या तबला) वीणा के बदले हारमोनियम, मंजीरे आदि का प्रयोग होता है। संवाद पद्यवद हैं। विदूषक का कार्य मनसुखा करता है। बीच बीच में राधा-कृष्ण तथा गोपियों का मण्डलाकार नृत्य अनिवार्य है। अंत में सरूप की आरती के बाद मांगलिक गीत से पटाक्षेप होता है।

व्रत परम्परा में भी रहस का विशेष स्थान मिलता है। इसे कतकारियों का रहस भी कहा जाता है। कार्तिक बदी एक से पूर्णिमा तक व्रत रखने वाली कतकारियां गोपी भाव से रहस खेलती हैं। दधिलीला, चीरहरण, माखनचोरी, वंशीचोरी आदि नाट्य रहस के अंतर्गत किए जाते हैं। अधिकतर संवाद पद्य में होते हैं। नाट्य के दौरान काम में लाए जाने वाले उपकरण प्राकृतिक होते हैं, जैसे चीरहरण नाट्य नदी या तालाब के किनारे कतकारियां खेलती हैं इसलिए तट पर लगे वृक्ष और कतकारियों के वस्त्र ही उपकरण के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इसमें एक स्त्री कृष्ण बनती है तथा शेष स्त्रियां गोपियां बनती हैं। कृष्ण के द्वारा गोपियों की राह रोकना दिलचस्प प्रसंग होता है। संवाद देखिए:-

कृष्ण:-

ब्रज-गोकुल के हम रहवैया, किसन हमारो नाम।
दान दई को लेत सबई सें, एई हमारो काम।।

गोपी:-

बिन्द्राबन की कुंज गलिन में छेड़त नार पराई।
बने फिरत हो ब्रज के राजा, करत रये हरवाई।।

बुन्देलखण्ड में कृष्ण विषयक रहस के अतिरिक्त राम विषयक रहस भी मिलते हैं। राम विषयक रहस में सोहर, गारी आदि का भी प्रयोग संवाद के रूप में पाया जाता है जिसका प्रसंग प्राय: राम जन्मोत्सव एवं राम विवाह होता है। यह खुले प्रांगण के बजाए घर के भीतर अथवा बाग-बगीचों में महिलाओं के बीच खेला जाता है। इसमें गारी का प्रयोग होते हुए भी मर्यादा का ध्यान रखा जाता है, जैसे:-

1. जन्में राम सलोना अबध में, जन्में राम सलोना।
   रानी कौसिल्या के राम भए हैं, राजा दसरथ के छोना।।
2. हमने सुनी अबध की नारीं, दूर रयें पुरसन सें।
   खीर खाय सुत पैदा करतीं लाला बड़े जतन सें।।

राम विषयक रहस में भी कृष्ण रहस की छटा दिखाई देती है। जो इसमें समाहित हास्य एवं श्रृंगार के संवादों से स्पष्ट झलकती है।

कृष्ण नाट्य से प्रभावित ये दोनों लोक नाट्य कांड़रा और रहस बुन्देली लोक नाट्य को समृद्ध बनाते हैं, किन्तु आधुनिक इलेक्ट्रानिक माध्यमों के समय में इनका अस्तित्व तेजी से सिमटता जा रहा है जो कि चिंताजनक है। इन दोनों लोक नाट्यों को सहेजने के लिए तत्परता से प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

एम- 111, शांतिविहार, रजाखेड़ी,
सागर - 470004 (म.प्र.)
मोबाइल: 9425192542

"अचरज भरो सत्य"

– पं. ज्ञानी महिराज

सबई बैन, भैया, हरों खों राम राम सीताराम

भैया, अपनों जो बुंदेलखंड भौत पुराने समय सें कई तरां सें अचरज भरो है। ई खंड की रचना, नदी पहाड़, वनस्पति, पशु, पक्षी, जलजंत, कीट, पतंग, आदमी देवकला सबई में कछु न कछु न कछु खूबी छिपी हैं। देखो सोचो "हरदौल" एक मनंख थे लेकिन आज घर घर में देवता जैसई पुज रये। बराछ गांव के संत "हिम्मतदास" खों भगवान जुगलकिशोर ने सजीवन दर्शन दये उनकी टोली की नांक में अपनई हाथ से पथुनियां पैराई पन्ना के हीरा सारे जग में जाने जात,, ऐसई एक भौत बड़ो अचरज ग्राम रनेह तहसील हटा जिला दमोह म.प्र. में है सबई जने ई बात खों गुनियो, सोचियो, समझियों और आखें देखियो। जरूर देखियो।

भैया, भौतऊ पुरानो इतिहास, पुराणों में महराज नल, दमयन्ती की लिखी एक साँची कथा है। महराजा नल "विठुर" कानपुर उ.प्र. के महराजा बीरसेन के लरका हते। विदर्भ देश के राजा भीमसेन की लरकिया "दमयन्ती" के संगे जब उनको व्याओ भओ तो उनने आकें दो नगर एक "नल नगर" और एक "दमयंती नगर" नाम से बसाये नल नगर आज 'रनेह' और दमयंती नगर "दमोह" के नाम सें जाने जात हैं महराज नल की बनवाई तीन सौ तीस अटारी जे एक खंड नीचे और दो खंड ऊपर बनीतीं उन सबकी चिनारी आज पूरी मिल रई हैं, उन अटारियों के बड़े-बड़े चौखूटे, पथरा, खम्बा, कंगूरे अबऊ तक बगरे पड़े हैं पथरा अनेकन रंग के नोने-नोने बरन के.अद्‌भुद मूर्तियां बड़ी तादाद में पाई जा रई हैं। एक कहावत है कि, जब राजा नल पे अबेरा परी तब ऊ बिरिया पै उनकी प्रजा ने पानी की कमी मिटाबे के लाने तालाब तलैयां खुदवाये थे। जिनकी गिनती चौरासी है। ओई बिरियां की एक कहावत है कै, सत्रह दिन भूकें राजा नल के सामने से भुंजी मछरियां लो पानी में उचट गई थी। बड़े दुख में समय कटो तो उनको। सुनो है के, जब रानी को संग राजा से छूट गओ और सांप के काट से वे करिया पर गये तो उनकी पूरी चिनारी मिट गई ती ऊ बेरा उनने अपनो खराब समय निकारवे के लाने "महिष्मती" नगर में एक तेली के घरे नौकरी कर लयी ती। वे ऊ को कोल्हू हाँकन लगे ते। अबेरा कटबे के बाद जब राजा रानी अपने नगर में आये तो परजा ने भौतऊ खुशी मनायी। राजा ने परजा के डारे तालाब, तलैयां, बाग, बगीचा सब मन लगाखें देखें और सब की भौतऊ बड़वारी करी। एक दिना की बात है जब राजा सभा में अपने सिंहासन पर बैठे ते तो उनके मंत्री "भैयाराम" कचेरा ने अरज करी के अन्यदाता सुनी है के सरकार कहूं "कोल्हू" हांकत रये हें। राजा ने मुस्करा खें कई कै सांची तो आये, ई का बुराई अबेरा के समय आदमी मजदूरी कर ले लेकिन बुरओ काम भर न करे। परजा ने हाथ जोर खें कई के महराज हमसब चाहत हैं कै, ऊ "कोल्हू" को ई नगर में आवो जरूरी है। राजा ऊ कई कै कार्य का कर हो ऊ पथरा को। सबने अरज करी कि सरकार जोन कोल्हू हमारें अन्नादाता ने हांको है हमस ब ऊ की पूजा करहें। राजा बोले, ऐसी बसकी इच्छा है तो ठीक है जाओ हमारे मित्र खों प्रसन्न करखें ले आओ वे नाहीं न करहें फिर का "भैयाराम" राजा को परवाना ले खें पहुंच, गये "महिष्मती" नगरी। "दामोदर" ने खूब स्वागत सत्कार करो और एक "गुजगाड़ी" में कोल्हू लदवाकें खुद संग में ले ओ गये नल नगर (रनेह) राजा के हांकत को कोल्हू की सबने देवता जैसी पूजा करी खूब उत्सव मनाओ गओ नल नगर में, कछु

समय के बाद जब राजा को स्वर्गवास हो गओ और कुछ दिन निकल गये तो धीरे धीरे ''कोल्हू देव'' की पूजा कर गयी। बारहवी शती में भूकंप के आये से नल नगर कछु बीरान हो गओ तो ऊ मंदिर भी गिर गओ जोन में कोल्हू देव बिराजे थे। वस, ओई समय सें कौल्हू देव ने चलबो चालू कर दओ और तब सें आज लो वे रात दिन बिना थमें चलेई तो आ रये हैं। हैं न अचरज हां सांचऊ चल रये हैं

कौल्हू बाला एक गोल भौतऊ बड़े पथरा के हैं उनको वजन कम से कम दस मन से कम तो ने हुईए वे एक बीता ऊपर दिखाते हें बाकीं धरती के नेचे हैं उनके चले सें ने तो धरती फटी दिखात है और न कछु जानकारी बस इतनो पतो चलत है के कोल्हू बाबा भौत चल गये सांची आए वे एक साल में कम से कम सात हांथ सरकजात आज कल के पढ़े लिखे जानकारों खों एक खोज को विषे हैं कौल्हू बाबा उनके पास जा खें उनके ऊपर कांन धरो तो कछु आवाज जरूर सुनाई परत लेकिन समझ में कछु नई आऊत। ई सें भईया हरो आव और जरूर आव हम बुलाऊत हैं सवई जनों खों, देखो ग्राम नल नगर (रनेह) के लुधियांत मुहल्ला में है और हमारे देखत पच्चीस बरस में कम से कम दो सो हाथ चल चुके हैं आंगे राम जाने

जय जुगल किशोर जय जय बुंदेलखण्ड

नल नगर रनेह, हटा
जिला-दमोह (म.प्र.)
मो. 09893902928
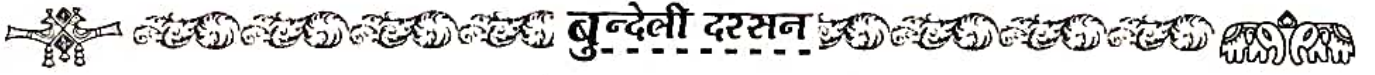
बुन्देलखंडी होरी के विविध रंग

बुन्देलखंड की होली

– डॉ. कामिनी

बुंदेलखंड की धरती त्याग और उत्सर्ग की धरती है। यह क्षेत्र अपनी संस्कृति, कला और साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान रखता है। शस्त्र और शास्त्र का समन्वय है यहाँ। कालोनी की संस्कृति, भाई चारे और प्रेम की संस्कृति। स्थापत्य और शिल्प के प्रतिमान रचे गये हैं यहाँ। यहाँ की ऋतुयें आनंद और उल्लास बाँटती है। सराबोर हो जाता है तन और मन। विशेष रूप से होली के अवसर पर। बुन्देलखंड के अपने होली गीत है। जिनमें श्रृंगार, भक्ति और प्रेम की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। रंगों की फागुनी दस्तक। फागुनी मादक हवायें। अनुराग का प्रतीक लाल रंग प्रकृति में आशा और विश्वास की पुष्टि करता हुआ विभोर कर देता है। होली महोत्सव है। ये उत्सव हमारे जीवन और समाज को नई दिशा देने में समर्थ है। ऋतु गीत हमारी पहचान है।

नोंनों जौ फागुन कौं महिना,
रंग रंगीलौ आ गऔ,
ऋतु बसंत कौ रूप अनोंखौ,
कन–कन भीतर छा गऔ।
फू ल–फूल के फूल खुसी सें,
फूले नई समा रये
कली–कली पैं झूम–झूम कें
भौंरां रसिया सें गा रये।
वन–वन में बागन में पंछी,
बोलें मीठी बोली,
मायें कोयलियाँ कूक–कूक,
कै रई होली है होली।।

ब्रज और बुंदेली का बहुत करीबी रिश्ता है। ब्रज और बुंदेली सहेली–सहेली है। होली गीतों में ब्रज का प्रभाव बुंदेली पर स्पष्ट दिखलाई देता है –

रंग डार मोय रंग डारी, अब हेरत टेरत गिरधारी,
तार–तार सारी कर डारी, कर दई निपट उघारी,
मुरझा गई टुइयाँ–सीं मुंइयाँ, तानें देवै ललिता प्यारी,
ठगी–सी राधा हेरत रै गई नाचें सखियाँ दै दै तारी,
अबकीं होरी बचकें रइयो, जब आहै मोरी बारी,
रस बारे नीके दोऊ नैना, ऐ री देखत सुध–बुध हारी।।

एक छोटे से उत्सव से लेकर राष्ट्रीय लोकोत्सव तक की होली की यात्रा अपने आप में एक महाकाव्य की कथा है। पौराणिक काल में होली के लोकोत्सव की नई व्यवस्था थी। नारद पुराण में फागुन की पूर्णिमा को होलिका–पूजन निश्चित किया गया। नृत्य गीत और हास्य–उल्लास उसकी विशेष पहचान बने। अनेक प्रकार के रंग, अबीर, गुलाल प्रयुक्त करने की छूट मिली। एक समन्वयकारी दृष्टि ने सबको होलिकोत्सव में ढाल दिया।

सखयाऊ फाग और राई दोनों बुंदेली लोक–काव्य में आदिकाल की है –

नई गोरी नये बालमा, नयी होरी की झोंक,
ऐसी होरी दागियों, कुलै न आबै दाग।
सम्हर के यारी करो मोरे बालमा।
रंग डारौ बचाय, रंग डारौ बचाय,
चोली के फुंदना ना बिगरें।

गाँव की गोरी को और राई की नायिका को कुल की मर्यादा और फुंदना की चिंता है। होली है न। होली तो सभी खेलती है। स्वकीया और परकीया दोनों। दोनों के अपने अपने रंग है। अपने–अपने ढंग है।

तोमर काल में ग्वालियर सांस्कृतिक केन्द्र बना। देशी संगीत ने एक नई क्रौंति की। लोक गायिकी में एक नई रवानी आई। बुंदेलखंड की रियासतों के राजदरबारों में शास्त्रीय शैली की रागबद्ध फागों की तानें गुँजी। किन्तु उनका प्रचलन लोक में नहीं हो सका। इतना अवश्य हुआ कि लोक संगीत

में ढली हुई पद शैली की फागें बसंत और होली के उत्सवों में गाई जाने लगी। कृष्ण, राधा और गोपियों का लोकीकरण हो गया।

मोपे रंग न डारौ साँवरिया, मैं तो ऊसई,
रंग में डूबी लला,
काये कौ जौ रंग बनायो,
काये की पिचकारी लला ?
केसर डार रस रंगा बनायो, हरे बाँस पिचकारी लला।
भर पिचकारी सन्मुख मारी, भींज गई तन सारी लला।
जो सुन पाहें ससुरा हमारे आउनन दैहें बरखरियन लला।
जां सुन पाहें जेठा हमारे छुअन न दैहें रसुईया लला।
जो सुन पाहें सैयाँ हमारे आउन न दैहें सिजरियन लला।

भक्ति आँदोलन का केन्द्र ब्रज बना और ब्रज के रसिया बुंदेलखंड आया। बुंदेली ने ब्रज के रसिया को आत्मसात किया किन्तु परिवर्तन के साथ। बुन्देली के रसिया की लय और गायन शैली बुंदेली लोकगीत बिलवारी की तरह है और कहीं लेद के ताल-स्वरों में बँधी हुई।

बुंदेलखंड में फाग की एक अनोखी रीति है। भौजी, देवर को एक पटे पर बैठाकर चुनरिया ओढ़ा देती है। पैरों में महावर, आँखों में काजल, माथे पर बूँदा आदि से सजाकर गालों पर गुलाल मलती है और रंग से सरबोर करती हुई 'फगुआ' माँगती है और देवर मिठाई, आभूषण, वस्त्र आदि भेंट करता है भौजी को।

होरी (रागदेष)-

सखी री, लगौ है हमाओ दाव,
आज जाय रंग में बोरौ री।
चार सखी मिल काजर गायै,
ऐसौ वन रऔ भोरौ री,
हात पकर जाकं गुलचा मारौ,
हा, हा खाय जब छोड़ौ
आज जाय रंग में बोरौ री।
चोवा चंदन इतर अरगजा
केसर गागर धोरौ री,
अबीर गुलाल जाके मुख सें मलौरी,
कारे सें करौ जाये गोरौ,
आज जाय रंग में बोरौं री।।

होरी 'देस' राग और बागेश्वरी' में गाई जाती है। फाग में पुरूषों का हिस्सा कम नहीं है। वे गधों पर सवार होकर तरह-तरह के स्वाँग रचते हैं। कुमकुमे और पिचकारियाँ चलतीं हैं। गीतों के बोल वातावरण में आनंद की वर्षा करते हैं।

(राग बागेश्वरी)-

खेलत आनंद होरी
शंभु गिरराज किशोरी।
दामिनी गात मात त्रिभुवन की,
हर सुख चन्द्र चकोरी
केशर तिलक इतर अरगजा
कुमकुमा झोरी भरी
दोऊ आनन रोरी।
खेलत आनंद होरी।।
होरी हो ब्रज राज दुलारे,
होरी हो ब्रज राज।
बहुत दिनन सें तुम मनमोहन,
फागई फाग पुकारे
आज देखियो सैल फाग के,
पिचकारिन के फुहारे,
चले कुमकुमा न्यारे, होरी हो ब्रजराज..............
आज जात कहाँ हों,
निकस जननी ढिंग ओ दो बापन बारे,
कै तो निकस होरी खेलौ
कै मुख सें कहौं 'हारे'
गिरौ चरनन में हमारे - होरी हो ब्रजराज..............

लोक काव्य में मर्यादा का उल्लंघन नहीं है। होली की रागिनी में कृष्ण ही नहीं राम-लक्ष्मण भी डूबे हैं। -
राजा बली के द्वारे मची होरी राजा बलि के।
कौना के हॉते ढुलकिया सो है, कौना के हाँते मंजीरा।

राम के हाँते ढुलकिया सो है, लक्ष्मन के हाँते मंजीरा।
कौना के हाँते रंग की गगरिया, कौना के हाँते अबीर झोरी।
राम के हाँते रंग की गगरिया, लक्ष्मन के हाँते अबीरा झोरी।
राजा बलि के द्वारें मची होरी।।

अठारहवीं शती के पूर्वार्द्ध के प्रसिद्ध कवि बख्शी हंसराज ने अपने ग्रंथ 'सनेह सागर' में फाग की लीला का वर्णन किया है। जिसमें राधा और कृष्ण अपने-अपने दल के साथ फाग खेलते हैं। इस कड़ी का लोक गीत 'लाल फाग' है। 'लाल' शब्द फाग की हर पंक्ति के अंत में लगाकर एक नये लावण्य की सृष्टि करता है। 'लाल फाग' का आविर्भाव पद शैली की फाग से हुआ था।

दोई नैना के मारे हमारे, जोगी भये घरवारे लाल।
जोगी भये घरवारे हमारे, जोगी भये पिय प्यारे लाल।
अंग भभूत बगल मृगछाला, सीस जटा लिपटानें, हमारे .....
हाँत लये कुंडी बगल लयें सोंटा, घर घर अलख जगावें, हमारे ....

यह गायकी अपनी मधुरता के कारण आज भी जीवंत है।

इस अंचल के प्रसिद्ध कवि पद्माकर होली खेलने का खुला आमंत्रण दे रहे हैं -

'नैन नचाई, कही मुसकाई
लला फिर आइयो खेलन होरी।

हुरियारों का घोष, धमार की धुन में गायन, पिचकारी की घालन गरियों की कहन, फगुआ लेना आदि बुंदेली फाग के चित्र हैं। छंदों का कमाल रहा। छंदयाऊ फाग अपने उत्कर्ष पर रहीं। 16वीं शती में लावनी का विकास हुआ। जिसने फागकारों को अपनी तरफ खींचा। फलस्वरूप लावनी की फागों का विकास हुआ। छंदयाऊ फाग दीर्घ प्रगति का आनंद देती है। फड़बाजी का आधार छंदयाऊ फाग है। काव्य और संगीत का समन्वय है इनमें। शास्त्रीयता और स्वच्छंदता का सम्मिलन भी है।

टेक - ब्रज में हो रई फाई सुहाई, चलो देखियों भाई।

छंद - जमुना के तीर, गोपिन की भीर, भारत अबीर, भर-भर झोरन।

लई पिचक खींच, मच गई कीच, ब्रज बीच-बीच गलियन खोरन।

उड़ान - रंग की मार मचाई।

टेक - भये सराबोर गोप उर गोपी, रये सकल मिल गाई।।

भक्त महारानी वृषभानु कुंवारि की लोक कविता की यह पंक्ति नई होरी का एलान करती है - 'लाल नई नौखी - होरी खिलाई।' रसिक भक्तों की कविता लोक से जुड़ती चली गई। और होली पर लोकछंदों में बहुत-सी रचनाऐं लिखी गई। होली गीतों में संघर्ष और राष्ट्रीयता की भावना भी प्रति- बिम्वित होने लगी। हुरियारे गाने लगे -

होरी मच रची जमुना के घाट,
दौनऊँ तरफ फौजन के वाट।
उतै से लड़े गोरा फिरंगी,
इतै सें अकेलौ नबाब।।

अंग्रेजों और जमींदारों के शोषण से उत्पन्न निराशा के विरूद्ध लोकोत्सवों के माध्यम से खुशी पैदा करने की कोशिश की गई और होली सामाजिक चेतना का माध्यम बनी। पुनरूत्थान का प्रयास लोकगीतों ने किया। लोककवि ईसुरी ने नेतृत्व किया। ईसुरी ने चौकड़िया फाग का आविष्कार करके फाग गायिकी को एक नई दिशा दी। चौकड़िया के आधार पर गंगाधर व्यास ने खड़ी फाग की स्थापना की।

ऐसी पिचकारी की घालन, कहाँ सीक लई लालन।
कपड़ा भींज गये बड़-बड़के, जड़े हते जरतारन।
अपुन फिरत रंग रस में भींजे, भिंजै रये ब्रजबालन।
ईसुर आज मदन मोहन ने, कर डारी बेहालन।।

चौकड़िया की लय ही, उसकी गायकी का आधार है। बुन्देली लोक गायकी में 'लेद' का आविष्कार एक ऐतिहासिक घटना है। दतिया के बुंदेला नरेश भवानी सिंह के शासनकाल में उनके दरबार में कलाकारों का जमघट लगा रहता था। संगीत और नृत्य को विशेष आदर प्राप्त था। ऐसे वातावरण में लेद गायकी का प्रस्फुटन हुआ। दतिया की

गायिकी के रंग की कोई बराबरी नहीं थी।

''दतिया कौ रंग चिनार, सजन बरके रइयो हुरियारिन सें''

आज के इस यांत्रिक समय में अशांति के रंग इतने गहरे हो गये हैं कि लोक के उत्सव फीके हो गये बदरंग हो गये। पिचकारी घाली जाती है पर मन से नहीं। किन्तु ऐसी मानसिकता के खिलाफ लोक संस्कृति के कुमकुमा घलना शुरू हो गये नई आशा और विश्वास के नये रंग लेकर –

फिर अइयो खेलन होरी लला।
केशरिया रंग घोर धरेंगे,
बस पिचकारी लइयो लला।
संग रहेंगी सखियाँ हमारी,
तुम रसियों संग अइयो लला।।

इस होरी में कुछ शब्द खड़ी बोली के आ गये हैं, जो नया भाषा रूप दर्शाते हैं। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से बहुत सुंदर।

होली बुंदेलखंड के उत्साह, उल्लास, सौहार्द्र, संगीत और संगति का विशेष त्यौहार है। बसंत पंचमी से यह त्यौहार आरंभ होता है और चालीस दिन तक चलता है। गुलाबों से सजा शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, लेद, टप्पा दादरा, धमार, राग बसंत, होली-फाग-रसिया, रावला गायन, ठुमरी की ठमक, ख्याल की गायिकी, ढोलक और नगड़िया की गमक सब एकाकार हो जाती है। फागुन से बैसाख तक उल्लास के गीतों से धरती थिरकने सी लगती है। हवायें कानों में कुछ कहती हैं। हेसू के फूलों की झाँकी बाकी है। रावला के शब्दों में- 'रस चुई चुई जाय''महुआ मदन रस भरे' – के भाव फूट-फूट पड़ते हैं। झूमते – नाचते गाँव सारे दुख भूल जाते हैं, फसलें आने की खुशी में। बुंदेलखंड के अधिकांश क्षेत्रों में – फाग राग की मस्ती – आगे पूरे वर्ष के लिये यथार्थ से लड़ने की तैयारी है।

होलिका – दहन के बाद फागों का सामूहिक क्रम बैसाख तक चलता है। फाग – गायकों की स्पर्धा टोलियाँ एकत्रित होती हैं और चौकड़याऊ तथा छनदयाऊ फाग की गायिकी की प्रतियोगितायें रात-रात भर चलती हैं। सा... फिर नगड़िया की टंकार और मृदंग की झंकार और सारंगी के स्वर साकार हो उठते हैं। संगति का सुख मिलता है। फड़बाजी के आनंद के क्या कहने ?

गांव में घर-घर हुरयारे छैला राधाकृष्ण और गोपियों के भाव भरे होरी खेलते दिखते हैं। देवर-भाभी की होली, जीजा-साली की होली, रंग-गुलाल से सरबोर करने की हुलक देखते बनती है। स्नेह का प्रदर्शन, श्रृंगार रस की सरसता और रसज्ञता के दर्शन होते हैं। माले लुटाये जाते हैं।

आओ आओ तुम नेंक अब डारौ तौ गुलाल,
मार-मार गुलचा, हम करें लाल-लाल,
बड़े बने बाप के तौ हम नइयाँ छोट,
दुकियों नई आज नेंक मैया की ओट।

जहाँ छैला अपनी पिचकारियों के रंग से भौजी की साड़ी को सराबोर करते हुये भागते हैं वहीं गोपी के भाव भरी भौजाई उन्हे चुनौती देती है –

मार दैंय कुमकुम तौ मींड़ है अबीर।
तार-तार कर है तोय जात के अहीर।

देवर जहाँ भौजी को छेड़ते रहते हैं उनकी ये भौजाईयाँ उनकी करतूतों का बदला होली के मौके पर लेतीं हैं-

असली हों बाप के तौ मीड़ौ अब गुलाल।
साँवरौ सौ रूप तेरो करें लाल-लाल।।
होरी खेलवो –
होरी खेलवौ हो बाँके सरताज...........

फागुन मास की पूर्णिमा को हर मोहल्ले की होलिकायें पूरे अनुष्ठानों से जलाई जाती है। बरबुलियाँ बनाई जाती हैं। होली के पूरे जल जाने पर उसकी आग सभी लोग अपने घरों में होली की उस आग से जलाकर नई अग्नि का आवाहन करते हैं। नई बालों को (नवान्ह) को भूनते-प्रसाद ग्रहण करते हैं। नई ऊर्जा प्राप्त करते हैं। ये हमारी बुंदेली संस्कृति की सामुदायिकता का बेजोड़ उदाहरण है।

होली जलने के दूसरे दिन फाग के हुरदंग जनमानस को आनंदित करते हैं। परवा को कीच गुलाये की होरी खेली

जाती है। आत्मिक हुलास का पर्व सब कुछ भूल जाने का पर्व। फाग की अपनी उमंग और मस्ती होती है।

मत मारो पिचकारी, मोरी भींजै रस चूनरी

मंदिरों में भक्ति और संगीतज्ञों की फागें होती हैं। ये होली पड़वा से पंचमी तक चलती हैं। ''उड़त गुलाल लाल भये बादर' - साकार हो उठते हैं। होली समैया के विविध प्रसंग हमारी लोक-चेतना की देन है। बुंदेली के तीन प्रमुख कवि-गायक हमारे गौरव हैं। ईसुरी के साहित्य का अमरत्व ख्यालीराम का गायन और ठसक गंगाधर व्यास की गरिमामयी लोक लालित्य की रचनाएँ आज भी आत्मिक आनंद देतीं हैं।

मन मानी छैल खेलौ होरी
लाज सरम सब दओ टोरी
मइना मस्त लगौ फागुन कौ
अब ना काऊ दैहै खोरी
धरै न नांव पुरा-पाले के
लड़ै न सास-ननद मोरी।
गंगाधर ऐसे औसर पर।
मन की लगन बुझै तोरी।।

होली के ये हुलास जीवन में नई प्रेरणा और शक्ति का संचार करते हैं। समाज को परस्पर जोड़ते हैं और राष्ट्रीय विकास के लिये सामुदायिक उल्लास देने में समर्थ है। ऋतु गीत हमें हमारी मूल विरासत से जोड़ कर खुशी प्रदान करने में सहायक है।

फागुन के दिन चार।
सखी री अपनों बालम माँगै दै दो।
सुन्ना री दूँगी, रूपा री दूँगी,
मोती देऊँगी अनमोल।
जोवना न देऊगी।
मैं रार करूंगी।
सखी री अपनों बालम माँगै दै दो।।

सेंवढ़ा
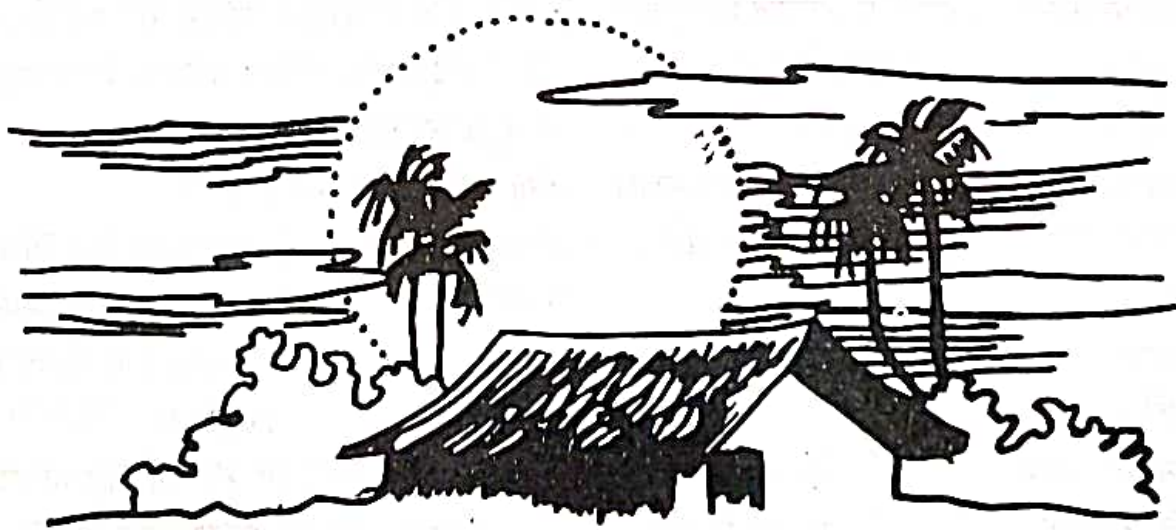
बुन्देली कहावतो में वस्त्राभूषण और खानपान

– डॉ वीरेन्द्र निर्झर

ग्राम्य उक्तियाँ मुहावरे और कहावते जनता के सांस्कृतिक जीवन की सबोल व्याख्यायें होती है। इन्हे देख सुनकर हम ने केवल जनपद के स्थूल सांस्कृतिक सामाजिक आर्थिक कौटुम्बिक एवं वैयक्तिक जीवन की झाँकी ही देखपाते है अपितु इनमें हमे जिंदगी का वह जश्न और वैभव भी देखने को मिलता है जो इतिहास के सन संवती रेगिस्तान में ढूढ़े नहीं मिलता। बुन्देली कहावतो में ऐसी ही शताब्दीयो पुरानी संस्कृति के सूत्र अपनी नैसर्गिक प्रकृति के साथ विद्यमान है। इन्हे हम आवास व्यवस्था वस्त्राभूषण श्रृंगार प्रसाधन, खानपान, तीज-त्योहार, संस्कार, लोकप्रथाये, रीतिरिवाज, लोक विश्वास, आतिथ्य एवं शिष्टाचार मनोविनोद के साधन नारी की स्थिति आदि संदर्भों में देख सकते है किन्तु यहाँ हम बुन्देलखंड में प्रचलित वस्त्राभूपण श्रृंगार प्रसाधान और खानपान जनित कहावतों के आलोक में ही देखेगे।

बुन्देलखण्ड में कौटुम्बिक और सामाजिक मर्यादा की दृष्टि से तथा व्यक्तित्व को आकर्पक बनाने के लिए भी शरीर को विविध वस्त्रों और आभूपणों से अलंकृत किया जाता था। विवेच्य साहित्य में यहाँ प्रचलित विभिन्न प्रकार के परिधानों और आभूपणों का नामल्लेख हुआ है जिससे यहाँ के प्राचीन पहनावे और उसके सांस्कृति स्वरूप की झलक मिलती है। प्रचलित वस्त्रों की कुछ किस्मों के उदाहरण देखे।

मखमल – खौंरयाऊ कुतिया मलमल की झूल।

पाट या रेशम – धूरा को पटोरन ढॉकत।

खादी – पाहिरिये खदा निभैये सदा।

अमौआ – खावे कौ मउआ पैरवे को अमउआ।

छींट और गजी – छींट की घँघरिया गजी कौ तना।

स्त्रियाँ रंगे चुंगे तथा सुंदर छपाई से युक्त वस्त्र पहनती थी। इन रंगे हुए छपकेदार वस्त्रों को छींट कहा जाता था। कहावतों में स्त्रियों के अधोवस्त्र के रूप में लहँगा अथवा घँघरिया तथा वक्ष को ढॉकने वाले वस्त्र में ॲंगिया का उल्लेख मिलता है साथ ही उत्तरीय या फरिया के पहनने की वात भी कहावतो में प्राप्त होती है। कहावते है

1. इत्ते की तौ कमाई नई जित्ते को लहँगा चिंथ गऔ।
2. चौली दामन कौ साथ है।
3. न तर घँगरिया न ऊपर फरिया।

स्त्रियों में साड़ी पहने की भी प्रथा थी। कहावत है – ''फरिया न सारी बड़ी सोभा हमारी''। पुरूषवर्गीय वस्त्रों में सिरोभूपण पाग सम्मान का प्रतीक थी। कहावतो में इसका विशेपकर उल्लेख हुआ है – ''जौंलो लाला जू पाग सॅवारत तौलो दरवाराई उठो जो'' ''पगड़ी की लाज नई राखी'' ''कथरी कौ मुड़ायछो वॉदे गुलाल हॉ ठिनके फिरत'' पाग उछालवो 'पाग बदलवो' आदि। अधोवस्त्रों में धोती लंगोटी तथा फेंट बांधने की चर्चा की कहावते करती है। जैसे – 'धुतिया पैरे जुल्फरखाये भैया फिरै परो कोखाये' होती की धोती न होती की लंगोटी 'लंगोटी में फाग खेलबो' निगत बनैना रजाई की फेंट बॉदे। ऊपरिवस्त्रों में ॲंगरखा या अंगा या कुरते का उल्लेख एक मुहावरे में इस प्रकार हुआ हे – अंगा न टोपी सिपइया नाव'।

उपर्युक्त पहिरने ओढ़ने के वस्त्रों के अतिरिक्त ओढ़ने विछाने वाले वस्त्रों में कम्बल रजाई चादर कथरी गुदड़ी आदि का नामोल्लेख बुन्देली कहावतों में विविध प्रसंगों में हुआ है। कतिपय उदाहरण लीजिए।

1. जो मूँदे कमरा के छेद सौ जानै जाड़े कौ भेद।
2. सूरदास की कारी कमरिया चढ़ै न दूजो रंग।
3. निगत बनैना सुपेती की फेंट बॉदें।
4. बड़ी बड़ाई फटी रजाई।

5. उतने पाँव पसारिए जितनी चादर होय।
6. कत्थर गुद्दर सोंवे मरजादी वैठे रोवे।

अन्य वस्त्रों में रूपयों आदि को रखने के लिए खीसा खलीसा अथवा कपड़े से बनी थैलिया थैला आदि का वर्णन भी मिलता है कहते है - " खीसा तर सो जो भावै सोकर" "भौजी की थैलिया देवरा सराफी करै"। वुन्देलखण्ड में मूल्यवान वस्तुओं को ऑचल या अन्य कपड़ें के छोर में बॉधने तथा धोती की फेंट के अग्रभार में लपेट कर रखने की भी प्रथा थी। जिसकी गवाही बुन्देली कहावते देती है।"एक टका मोई गॉठी टाठी लेंब की माटी" तुमाए ऐसे तौ हमाए टेंट में बंदे।

बुन्देलखण्ड में व्यक्तित्व को आकर्षक और प्रभावशाली बनाने में आभूपणों का अपना विशेष स्थान है। इनसे नारी सौन्दर्य में अभीप्सित अभिवृद्धि होती है साथ ही सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से भी इनका अपना मूल्य है। लोक साहित्य में आभूषणों के नाम पर एक लम्बी सूची मिलती है। कतिपय प्रचलित आभूषणों में नाक में नथ कान में लटकन गले में खँगौरिया हार हमेल बाहुमूल मे बरा, हाथ में कंगन, चूड़ी तथा उँगली में आरसी (कांच लगी अंगूठी) उन दिनों विशेष प्रिय थे। कुछ कहावते देखे:-

1. धेला की नथनी में इतनो गुमान
सोने की होती तौ चलती उतान।
2. जोरा तँगोरी को व्याव चचा लटकनियाँ।
3. ससुर खे परी हार फार की, बऊ खे परी खँगवार की।
4. हिए को हार गरे कौ कठला।
5. नाक नंगी गर हमेल।
6. कोऊ की वहू कोऊ वरा वदलावै।
7. हॉत कंगन कौ आरसी का
8. चुरियॉ लादी पाठे परी .... ।

उक्त आभूपण अधिकांश अभिजात्य वर्ग की शोभा वढ़ाते थे। निम्न वर्ग में तो छोटे छोटे कॉच के टुकड़ों की अथवा बनावटी मूँगों की मालाओं को पहिनने की प्रथा थी। कुछ स्त्रियाँ धागों में विभिन्न प्रकार की गाँठे लगाकर भी पहिनती थी। किन्तु अधिकांश स्त्रियाँ शरीर के विभिन्न अवयवों में गुदना गुदवाती थी। उनका विश्वास था कि दुनिया में सभी कुछ जहाँ का तहाँ धरा रह जाता है केवल एक गुदना चिन्ह है जो मरने पर इस शरीर के साथ जाता है। उच्च और निम्न वर्ग के विभेद को दर्शाती एक कहावत देखें।:-

"कोऊ खे मलियाँ डुरियाँ नई जुरती और कोऊ सोने से लदो फिरत।"

स्त्रियों में उक्त आभूपणों के अतिरिक्त कुछ अन्य श्रृंगार प्रसाधनों की भी चर्चा कहावतों में प्राप्त होती है जिसे वे अपने भिन्न भिन्न उपांगों में सजाती थी सँवारती थी और सौभाग्य चिन्ह के रूप में धारण करती थी। जैसे नेत्रों में काजल ऑक-टॉक उर काजरे देव टका भर आगरे। ऑख में अंजन दॉत में मंजन नितकर नितकर नितकर।"

माथे में विन्दी -

'टिकुली सेंदुर में गए तौ का खावे में ई बज्जुर परऐ।'

'मॉग में सिंदूर - पराये सेंदुर पै मुंड़ फोरवो'

हथेलियों एवं पैरो में महेंदी " - पावन में का मॉदी रचायें।"

पैरो में महावर और वालों में चोटी बॉधने की भी परंपरा का उल्लेख कहावतो में है। उक्त साधनों के अतिरिक्त पान खाने की प्रथा भी श्रृंगार प्रसाधन का एक अंग थी। कहते है - " तन में नइयॉ लत्ता पान खायें अलबत्ता।"

पुरूपों में आभूपण धारण करने के विषय में कहावती साहित्य मौन है केवल सिर में तेल डालने, तिलक लगाने, इत्र लगाने दाढ़ी मूँछ रखाने तथा पाग सॅवारने के अतिरिक्त दूसरे किसी श्रृंगार का वर्णन इनमें नहीं मिलता। कहावतों से ऐसा प्रतीत होता है मानो पुरूपों के लिए पौरूप ही प्रमुख श्रृंगार था और मूंछे उसकी प्रतीक थी कहते है:-

" मर्द मुछारो बर्द पुछारो।"

वालको के श्रृंगार में काजल तेल आदि ही प्रमुख थे। उन्हे विशेष कपड़े तथा गहने आदि पहनाने की प्रथा नहीं मिलती। इसका कारण सम्भवत: बच्चों को नजर आदि लगने से बचाना था जैसा कहावत से स्पष्ट होता है:-

" ऑखे न सॉखे कजरौटा नौ ठउआ "

हॉ कठला पहनाने की प्रथा अवश्य थी जो ताबीज और हाय एक हाँ या हाय लिखा आभूषण विशेष बघनरवा आदि को एक धागे में साथ साथ गूँथ कर बनता है। यह भी वच्चो को नजर से बचाने के लिए ही पहनाते थे। बुन्देली कहावत में बच्चे की तरह प्रिय की व्यंजना के लिए इस आभूषण का प्रयोग देखे – "हिये कॉ हार गरे कौ कठुला।"

खानपान या भोज्य विधान में बुन्देखण्ड में प्रचलित विभिन्न प्रकार के पकवानों का नाम कहावतों में आया है। विविध संस्कारों एवं अवसरों पर बुन्देलखंड में अनेक प्रकार के व्यंजन और पकवान बनते है जो यहॉ की सुविकसित स्वादवुद्धि का परिणाम कहे जा सकते है। कच्चे भोजन में कढ़ी, दार, भात, वरा, माड़े, रोटी तथा पक्के भोजन में लुचई हलुआ, लड्डू, खीर आदि की प्रधानता रहती थी। कहावतों में इनका इस प्रकार वर्गीकरण तो नही मिलता लेकिन प्रमुखता के आधार पर कच्ची और पक्की दोनों प्रकार की रसोईयों के प्रचलन की वात अवश्य मिलती है।"दोऊ दीन से गये पॉड़े हलुआ मिले नमाड़े" कहावत में हलुआ पक्की रसोई का अगुआ है और माड़े कच्ची रसोई के मुखिया। वैसे आम तोर पर जनसामान्य के भोजन में दार, भात, रोटी, साग तथा भाजी ही प्रचलित है। कहावतों से प्रमाण देखे:-

1. दार भात रोटी और वात खोटी।
2. रोटी ऊपर साग मौरे तौ नित्तई फाग।
3. दयरी की भाजी घर भर राजी।

रोटी बनाने की यहॉ कई विधियॉ प्रचलित है जिनके आधार पर उनके अलग अलग नामकरण किये गये है जैसे पानी लगाकर हाथ से पई गई रोटियों सें को पनपथू कहते है "वही हाथ से बढ़ाई गई वह रोटी जो अंगारों में सीधे सेंकी जाती है उसे गकरिया कहते है। कहावते है – "अपुन हथू पनपथू" पेट भरे से काम गकरिया काऊकी। चकला वेलन से बढ़ाकार तवे के माध्यम से बनाई जाने वाली रोटी फुलकिया कहलाती है तथा पलेथन लगाकर हाथों से बढ़ाई गई रोटी जो तवे के माध्यम से अध्यपकी हो जाती है और फिर आग में सेंकते है पई रोटी कही जाती है। भोजन में फुलकियों के महत्व को प्रतिपादित करते कहावत कहती है – "पई न मांगे" फुलकन हॉ रोवे। कहावतों में एक और प्रकार की रोटी माड़े का भी नाम आया था। यह पतली और बहुत बड़े आकार की रोटी होती है तथा बहुत स्वादिष्ट भी। तभी तो पांडे जी की स्थिति "हलुआ मिले न माड़े" की हो गई।

इसी प्रकार बुंदेलखण्ड में पूड़ियाँ भी कई प्रकार की बनती है। गेंहू के बाटे से बनी सादी पूड़ियों को यहॉ सुहारी या लुचई कहते है।" दिउनन चढ़ी सुहारी कुकुर खायें चाय बिलारी। ये पूड़ियाँ घी में पकाई जाती है किन्तु बेसन की पिठी भरी हुई पूड़ी जिन्हे पुरी कहते है तेल में पकाई जाती है। गुना भी एक प्रकार की पूड़ी ही है। जो मीठी तथा नमकीन दोनो रूप में बनती है। इनकी कोरे गुठी हुई होती है और ये आकार में बड़ी होती है। दहेज में भेजी जाती है। कहावतो में इनके प्रमाण देखे:-

1. जॉ देखे गुना पुरी तॉ जायें लुरी लुरी।
2. बई वाई ससरार को बेई गुना गोंठवे कों।

बुंदेलखण्ड में किन्ही विशेष अवसरों पर एक प्रकार की और पूड़ी बनती है जिसे फरा कहते है। ये पानी में पकाई जाती है। कहते है:- "बड़ी बऊ ने जी करो फरा पैघी फरो"

अन्य पकवानों में खिचड़ी खीर लपसी महेरी बरा मगोड़ा आदि है जिनका उल्लेख कहावतों में हुआ है कहावते है।"घी कितै गओ कई खिचरी में""खीर में सोंज महेरी में न्यारे""लपसी सी चाटत""तेल न फुलेल मगौरा बनै

कड़ी मुरैना बरिन हाँ हॉत पसारे। कुछ कहावतों में यहाँ के लोगो के खानपान आर्थिक स्थिति और अभिरूचि का परिचय कुछ इस प्रकार मिलता है:-

1. आई सतुअन की बहार बालम मूँछे मुड़ा डारौ।
2. ....कोदो की रोटी खो भैंस कौ मठा।
3. मउआ मोरे भुँजे धरे है लटा धरे है कूट
   ग्योंड़े होके साजन कड़गए कौन बात की चूक।।
4. कत की कौरी टटोउत की कर्री

मिष्ठान्नों में लड्डू, गुलगुला, बतासा, घीगुर, और खॉड़के घुल्ला का नाम कहावतों में मिलता है दूध सेवनी मिठाई के नाम पर मलाई का उल्लेख है कुल मिलाकर कहावतों में वर्णित वस्त्राभूषण व्यंजन और पकवानों से बुन्देली लोक संस्कृति की सुन्दर अभिव्यक्ति के साथ साथ तदयुगीन समाज की आर्थिक स्थिति और जीवनता का सम्यक परिचय भी प्राप्त होता है।

संदर्भ :-

1. आमके पत्तो के रंग में रंगा मूँगिया रंग का एक कीमती कपड़ा
2. खादी
3. चौमासा वर्ष 8 अंक 25 फरवरी - जून 1991 पृ0 36 (लेख गोदना निरंजन महावर) वही पृ0 46 (गोदना बसन्त निरगुणे)
4. नये गुण्डा अंड़ी कौ फुलेल।
5. ठॉड़े तिलक मधुरिया बानी दगाबाज की येई निसानी।
6. सौकीन गुंडा रेंट कौ अतर।
7. हातभर के ज्वान सवा हात की डाढ़ी
   हात पॉव के कायले मो में मूँछे जायँ।
8. गुर खाने ठर पाग राखने

एम.बी.-120, न्यू इंदिरा कालोनी,
बुरहानपुर (म.प्र.)
मो. 09425951207

"विलुप्त होते लोक वाद्य-चिंतनीय आयाम"

– डॉ. जवाहर लाल द्विवेदी

बुन्देलखण्ड अपनी उत्सव प्रियता के लिए विख्यात उत्सव हमारे जटिलतम समय में से अवकाश प्रदान करने का सशक्त माध्यम है। उत्सव के पश्चात् मनुष्य नवीन ऊर्जा और नवउल्लास का अनुभव करता है जिससे केवल जीवन क्रम ही आगे नहीं बढ़ता बरन उसमें जीवन्तता का संचरण तीव्र वेग से हो जाता है। उत्सव होगा तो संगीत होगा और संगीत होगा तो गीत होने की पूर्ण आश्वस्ति रहेगी। जिस प्रकार बादलों के मड़राते ही मोर मुक्त कंठ से पुकारने लगता है तथा आम में बौर आते ही कोयल कुहुकने लगती है। ठीक उसी प्रकार जीवन की सुख-दुख की अनुभूतियों को उद्घाटित करने के निमित्य संगीत स्वत: प्रस्फुटित होता है उसे लोक संगीत कहा जाता है।

मानव भावना ही लोक गीत वादन और नृत्य के रूप में परम्परा से प्रभावित होती आ रही है। यहीं जन भावना नाद का आश्रय लेकर लोक गीतों के रूप में प्रगट होती है। अत: लोक गीत सर्वव्यापी है सच्चे अर्थों में धरती का यही संगीत है। "गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रय संगीत मुच्यते" अर्थात् गीत वाद्यं और नृत्य - ये तीनों मिलकर संगीत है। यथार्थत: तीनों कलायें एक दूसरे से स्वतंत्र होते हुये भी। एक दूसरे के अधीन है क्योंकि -

नृत वद्यानुगं प्रोक्तं, बाद्य गीतानुवर्ति च।
अतो गीतं प्रधानत्वाद भादावभि धीयते।।

अर्थात गान के अधीन वादन और वादन के अधीन नृत्य है। इन तीनों कलाओं में गान को प्रधानता दी गई है। लोकगीत प्राय: गति प्रधान होते हैं अत: ताल वाद्यों में मुख्यत: लय का स्थान सर्वोपरी होता है। लोक संगीत या लोक नृत्य के साथ जिन वाद्यों का प्रयोग होता है उन्हें लोक ताल वाद्य कहा जाता है। भारतीय वाद्यों को चार श्रेणियों में विभक्त किया गया है। यथा - 1. ततवाद्य 2. सुशिर वाद्य 3. अनवद्ध वाद्य. 4. धन वाद्य उक्त आलेख में वाद्यों की चार श्रेणियों के आधार पर बुंदेली लोक वाद्यों की पड़ताल करने का प्रयास किया जा रहा है।

1. **तत्वाद्य** - तत वाद्यों को तात वाद्य या तंतुवाद्य भी कहते हैं। इस श्रेणी में तारों के द्वारा सुरों की उत्पत्ति होती है। यह भी दो प्रकार के होते हैं। तत् वाद्य तथा वितत् वाद्य।

- **तत् वाद्यों** की श्रेणी में तार के वे साज शामिल किये जाते हैं। जिन्हें मिर्जाव अथवा किसी अन्य वस्तु की टंकार देकर वजाते हैं जैंसे तानपूरा, इकतारा। तत् वाद्यों में इकतारा अपना प्रमुख स्थान रखता है किसी तुम्बे को काटका चमड़े से मढ़ दिया जाता है। इसके बाद बाँस में लगी खूँटी के सहारे से एक या दो तार लगाकर बजाया जाता है। इसमें किसी गाने की सरगम नहीं निकलती अधिकतर घुमक्कड़ या साधू या सूरदास इसका उपयोग करते हैं।
- **वित्त वाद्य** - ऐसे वाद्य जिनको गज की मद् से बजाया जाता है यथा - सारंगी। यह बुन्देली वाद्य यंत्रों में सर्वाधिक प्रचलित वाद्य है। जिससे केकड़ी भी कहा जाता है। इसमें एक दो या तीन तार लगाये जाते हैं। गीत के बोलों के अनूरूप अल्प स्वर समुदाय को वादन के द्वारा इतना मुखर कर दिया जाता है कि ऐसा लगने लगता है कि जैंसे सारंगी के स्वर एवं गीत के शब्द एक रूप हो गये हैं। इसका देवी गीतों या किसी विशेष राग में ही प्रयोग किया जाता है। कुछ दशकों पूर्व ग्रामीण परिवेश के शादी के मौकों पर रावला में उपयोग किया जाता था। आज तो रावला के अस्तित्व को ही नकार दिया गया तो सारंगी की आवाज इतिहास का विषय बनकर रह गई।

2. **सुशिर वाद्य** - जिन वाद्यों को फूंक या हवा के माध्यम से बजाया जाता है उन्हें सुशिर वाद्य कहते है। जैसे - बांसुरी, हारमोनियम, शहनाई बीन शंख आदि। बुन्देली लोक

वाद्यों की श्रेणी में लुप्त होते वाद्य है – अलगोजा, बीन तुरही रमतूला। **अलगोजा** – तीन या चार छिद्रों वाली बांस निर्मित दो बांसुरी ही होती है। जिन्हें एक साथ मुंह में दबाकर फूंक से बजाया जाता है। दोनों अलगोजा परस्पर पूरक होते हैं। यह कुछ दर्शकों पूर्व पशु चारण करते या मेला को जाते समय ग्रामीण क्षेत्रों में दिखाई दे जाता था। **बीन** – यह छोटी तुम्बी में बांस की दो नलिकाएं लगाकर बनायी जाती है। बनाने वाले हिस्से में लकड़ी की एक पीली नली रहती है। दोनों ही नलिकाओं में तीन या चार छिद्र होते हैं। यह एक या सवा हाथ लम्बी रहती है। इसका प्रयोग सपेरा जाति के लोगों द्वारा सांपों को नचाने में किया जाता है। **रमतूला** – यह तांबा या पीतल धातु से निर्मित अंग्रेजी के 'एस' अक्षर की आकृति का वाद्य है जो दो हिस्सों में बंटा होता है। इसकी प्रस्तुति एकल होती है। वादन ध्वनि की तीव्रता हेतु हवा की फूंक प्रवलता विस्तार करती है। सामान्यत: इसका उपयोग विवाह, जन्मोत्सव तथा देवी देवता के पूजन में किया जाता था पर अब यह वाद्य विलुप्त होने की कगार पर हैं जो एक चिंतनीय विषय है।

3. **अनवद्ध** – ये वाद्ययंत्र भीतर से खोखले तथा चमड़े से मढ़े हुए होते। इनमें हाथ या अन्य किसी वस्तु के आघात से स्वर पैदा किया जाता है जैंसे मृदंग, ढोलक, ढपली, डमरू, ढपला चंग तथा ढोल आदि।

4. **घन वाद्य** – इस श्रेणी में उन वाद्यों को सम्मिलित किया जाता है जिन पर चोट या आघात से स्वर उत्पन्न होता है जैंसे मंजीरा, करताल, झांझ, घुंघरू, चमीटा तथा दण्डताल आदि।

युगीन प्रभाव से बुन्देलखण्ड के अनेक लोक वाद्य और उनके वादक समाप्तप्राय हो चुके हें। जिसका प्रमुख कारण यह रहा है उन्हें न तो किसी का आश्रय मिला और न ही यथोचित सामाजिक प्रोत्साहन। वर्तमान भोग वादी और आपा-धापी के दौर में निज सुख संचय ही एक मेव साध्य होने से लोक सृजन के विषय अर्थ हीन होते चले गये संगीत की विधा में पाश्चात् जीवन शैली का स्पष्ट प्रभाव बढ़ने से डी.जे. जैंसी असाध्य व्याधि को वरण करने की विवशता झेलना पड़ रहीं है। आज गांव-गांव में जीवन के प्रसंगों से जुड़े उत्सवों में फूहड़ गीत अनियंत्रित मांसलता तथा विवेकहीन मादकता का वर्चस्व दिखाई देने लगा है जो नैनिहालों के साथ युवक-युवतियों को जो उत्तेजना (थ्रिल) का प्रतिसाद देते हैं, वह आत्मघाती कदम है। गांव की चौपालों पर वर्ष पर्यन्त गूंजते नगड़िया के स्वरों को किसकी नजर लग गई? उपभोक्तावाद बाजारवाद और अवसरवाद की घातक तिकड़ी से लोकरंजन ही कैंसे अछूता रह सकता था। नि:संदेह हम और हमारा समाज विश्व-ग्राम बन गया परन्तु लोक अस्मिता को अक्षुण्ण बनाये रखना एक अनिर्वायता सी लगती है।

बुन्देली लोक संगीत के लोक वाद्य उपकरण हमारी अमिट धरोहर है। जिनमें समाज की भावना अभिव्यक्ति और संस्कृति की झलक का समावेष है। हर्ष-शोक राग-विराग, सभी की सहज अभिव्यंजना सिर्फ लोक वाद्य के वादन से संभव हो पाती है। दुखद पहलू यह है कि कुछ वाद्य यंत्र ऐसे हैं जिनकी प्रतिष्ठा शास्त्रीय संगीतज्ञ नहीं करते हैं। फलत: ऐसे वाद्य यंत्र काल के गाल में बेहाल बन अपनी नियति पर अश्रुपात करते रहते है। इस प्रकार की उत्तरोत्तर बढ़ती घातक सोच ने कुछ जातीय अहंता से और कुछ सामाजिक उदासीनता से वादकों का रोजगार छीन लिया है। आज ऐसे वादक ग्रामीण परिवेश से पलायन कर गये हैं और महानगरीय नारकीय जीवन के अंग बन गये हैं। 'न वे घर के रहे न वे घाट' हम सबको समय रहते ऐसे वाद्य यंत्रों तथा उनके वादकों को खोजकर सूचीबद्ध करना होगा तथा उनके संरक्षण और संवर्धन की दिशा में सार्थक पहल की ईमानदार कोशिश करनी होगी। अन्यथा लोक संस्कृति के प्रतीत यह वाद्ययंत्र सदा के लिये लुप्त होने से नहीं रोके जा सकेंगे। शासन के स्तर पर भी इन वाद्ययंत्रों की वार्षिक प्रदर्शनी तथा जिलास्तरीय वादक सम्मेलन आदि का आयोजन की रूपरेखा बनानी चाहिए। बुन्देली उत्सवों में लुप्त होते वाद्ययंत्रों की सुमधुर तान सुनने को मिलने का प्रबंध हो ताकि भावी पीढ़ियाँ इससे बिलग न रह जायें।

प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय,
राघौगढ़, जिला-गुना (म.प्र.)

कलात्मक रूचि का प्रतीक साँझी उत्सव-

प्रीतम दोऊ साँझी खेलत

– विनोद मिश्र ''सुरमणि''

आज से तीन दशक पूर्व का जीवन चक्र देखे तो लोग चाहे वह वरिष्ठ हो कनिष्ठ हों या बाल अवस्था के अंकुरित स्वरूप में हों। सभी वर्ग के साथ रचनात्मक प्रवृत्ति से जीवन जीने के आदि दिखते थे पारम्परिकता जैसे कि उनकी दिनचर्या का अभिन्न अंग ही हो उसी में लिप्त रहने के आदि थे। प्रत्येक दिवस को किसी न किसी परम्परागत संस्कार या रीति रिवाज के साथ जुड़े रखना, जुड़े रहना व जोड़ने की प्रवृत्ति हमारे लिए महत्व रखती थी। फलस्वरूप, सद्भाव, सम्वेदना, परस्पर प्रेम, सहानुभूति प्रोत्साहन उन्नयन आदि शब्दों को आज की तरह खोजना नहीं पड़ता था शब्दों के भावार्थ को सिद्ध करने के लिए आयोजनों की आवश्यकता नहीं पड़ती थी क्योंकि यह सब हमें स्वत: ही हमारी परम्पराओं अपने व्यवहार में हुये देती थी और कृतज्ञ होती थी। पर, आज ऐसा नहीं है हम जैसे किसी अन्यत्र प्रवास के लिए जाते वक्त अपने गांव को छोड़ते नजर आते है। उसी तरह उन रीति रिवाजों को भी अपने से अलग कर रहे है, जो हमारी मातृशक्ति का स्वरूप है मातृशक्ति जन्म भूमि, जन्मजात संस्कार व जन्मजात गुणार्थ भी होती है।

मैंने देखा है कि जब हम 10 से 15 वर्ष की आयु में विचरण कर रहे थे तब हमें भाद्र शुक्ल पक्ष में गणेश चतुर्थी एवं डोलग्यारस के बीच हमारे अपने घर परिवार या मोहल्ला के परिजन निर्देश दे दिया करते थे कि चील, वटे, रंजीन, पत्थर ग्यौरी, चूना तृतीया पत्थर आदि को एकत्र करने। उन्हें लुंढ़िया से पीसकर रखो। सूती कपड़े से छान कर रखों। बड़ों का निर्देश का पालन में न करने की प्रवृत्ति एवं साहस दोनों ही नहीं दिखायी देते थे। खड़ेरे (खण्डहर) आसपास के टीले आदि से उक्त सामग्री एकत्र की जाती व घरेलू पद्धति से रंग निर्माण किया जाता कागज की पुड़िया या किसी भी प्रकार की डिब्बी में इन्हें सुरक्षित रखा जाता।

सभी तैयारियों के उपरांत हम सबसे बड़े यानी 15 से 20 वर्ष के युवा घर की 'पौर' में किसी मंदिर की दालान में घर के बाहरी बरामदें में एक मण्डप का निर्माण करते, जिसमें घर में उपलब्ध माँ-बहिन की ''रंगीन धोतियां, चद्दर आदि वस्त्रों को उपयोग में लाया जाता था। फिर घर में एक बड़ी टोकरी या दो -तीन टौकरी में रखे खिलौनों को उठाया जाता। एक सारोंट (चौकोर पटा) चौकी को बीच में रखा जाता उसके आसपास तरह तरह के खिलौने रखे जाते चौकी के अग्रभाग में मिट्टी और ईंट या गुम्मों से एक जलाशय बनाया जाता। जलाशय पर स्नान करती हुई महिलायें तैयार होती महिलायें पानी भरती हुई महिलायें आदि खिलौने (मिट्टी के) रखे जाते। विस्तार की दृष्टि से, राजाशाही बैण्ड खेल दिखाता भालू, बन्दर, जमूड़े या सेठ सेठानी आदि खिलौने रखे जातें। कही पहलवानों की कुश्ती का दृश्य, तो कहीं मसक (पानी छिरकने वाला) तो कही शिकार करते लोग आदि की झाँकी खिलौने से लगाई जाती। इसमें सबसे अधिक आकर्षण दिखाई देता तो वह दतिया महाराज गोविंद सिंह जू देव का दशहरा चल समारोह का चित्रण, घोड़े पर ध्वज लिये लोग, ऊँट, हाथी, तमाशाचीन लोग नांच करती नर्तकी, शाही बैण्ड, नागिन बैण्ड पैदल सिपाही, घुड़सवार ऊँचे सवार हाथी सवार सिपाही सिपहसालार, दिमान आदि आदि और अन्त में राजशाही हाथी पर सवार महाराज चौर झुलाते खिदमतदार छत्र, ढाल, तलवार आदि लिए सैनिक शाही पौशाक में महाराज विराजे। यह दृश्य मिट्टी के खिलौनों से प्रदर्शित किया जाता था। फिर तैयारी होती है। चौकी पर उस

चित्रांकन की जिसके लिए ही उक्त तैयारी की जाती थी, जिनकी चर्चा की जा चुकी है। दरअसल यह पारम्परिक उत्सव ''साँझी'' है।

दतिया की साँझी परम्परा वृंदावन की साँझी परम्परा या मालवा की साँझी लोक परम्परा से अपना अलग महत्व रखती है। अश्विन प्रथम से (पितृपक्ष)प्रारम्भ यह लोक परम्परा हमारी अपनी विरासत रही है। घर-घर में मनाई जाने वाली साँझी मोहल्ला में एक जगह पर स्थिर होकर रह गई थी। इस परम्परा को संरक्षण प्रोत्साहिन देने में मंदिरों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है दतिया के कृष्ण एवं राम सम्प्रदायी मंदिरों में साँझी खूब पली फली और उत्कृष्ट शिखर पर पहुंची साँझी उत्सव के 15 दिवसों में दर्शानार्थियों की कतारे लगती थी। दर्शनों को उत्साहित लोग शाम से ही तैयारियाँ प्रारम्भ कर देते थे। राधावल्लभीय मंदिर उत्सव पद्धति अनुसार अश्विन प्रथम में फूल समर्पित किये जाते है। यानी साँझी 'फूल डालना' से प्रारम्भ हो जाती है; आश्विन कृष्ण पक्ष की एकादशी से 'रंग' की साँझी प्रारम्भ होती है; एक बड़ी चौंकी पर साँझी उल्छाई जाती; इसे बनाने हेतु कागज के कटाव की जरूरत पड़ती है ये कटाव दतिया के कुछ विशेपज्ञ मोची या अन्य जानकार बनाते थे या वृन्दावन से लाया जाता था; राजस्थान के जयपुर में भी कटाव मिलते है; वर्तमान में दतिया के राधावल्लभ मंदिर में 'वन' श्रृंगार की झाँसी प्रस्तुत की गई जिसकी विशेपता यह थी कि इसमें चार वन दर्शाये गये राधेश्याम, कुमुदवन, वधुवन, तालवन यह चित्रण श्री कृष्ण की लीलाओं से जुड़े कथानक को लिये है उनकी लीलाओं के संकेत इस चित्रांकन में मिलते है। सेवायत पं. राधावल्लभ नगार्च वड़ी रूचि से निर्माण करते हैं।

साँझी में मूलत: कागज पर निर्माण की गई कलाकृतियों में वृक्ष, पशु, पक्षि के साथ-साथ कृष्ण लीलाओं को भी उकेरा जाता था। साँझी निर्माण में रगों का संयोजन चित्र एवं उसके भाव पक्ष के आधार पर किया जाता था जो देखते ही बनता था। दतिया के अटल बिहारी जी नंदकिशोर, केरूआ वालों का मंदिर, लाड़िली दास का मंदिर, बिहारी जी मंदिर राधा वल्लभ, बड़े गोविन्द जी व बिहारी मंदिर प्रमुख रूप से जाने जाते थे जहां साँझी की एक से एक बढ़कर कलाकृतियाँ प्रदर्शित की जाती थी। साँझी उत्सव में जहाँ प्रत्येक अवसर पर अलग-अलग झांकियां, चित्राकंन का प्रदर्शन होता था वहीं अन्तिम दिवस 'कल्पवृक्ष के रूप में सजाया जाता था। मान्यता है कि कल्पवृक्ष से मांगने पर मनोकामना पूर्ण होती है। 'साँझी में कल्पवृक्ष का निर्माण एवं झाँकी हरभजन जी का राधामाधव मंदिर मे सबसे अच्छा माना जाता था लोगों का आकर्षण इस दिन सिर के धड़ से अलग दिखने की झॉकी होती थी। आज सॉझी दतिया में नहीं है सॉझी के अवसर पर गाये जाने वाले पद, कवित्त दोहे साखी आदि भी सुनाई नहीं देते। एक समय था जब मंदिरों में जहाँ साँझी उकेरी जाती थी वही पर साँझी के पद का गायन विष्णु पद समाज गायन शैली अनुसार ही होता था। साँझी के पदों की रचना हित हरिवंश प्रभु से प्रारम्भ हुई।

वन की लीला लालहि भावे
पत्र प्रसून बीच प्रति विम्बई
नख सिख प्रियहि जनावें

– श्री हित हरिवंश चंद्र प्रभु

इस पद का साँझी उत्सव में नित्य गायन होता था इसके उपरांत अन्य पदों का गायन। साँझी के पदों में नागरिया जी का पद-

फूलन बीनन हों गई, जहाँ जमुना फूल द्रवन की ओर

गोस्वामी रूप लाल जी लिखते है-

खेलत साँझी लाड़ली मोहे अति अलवेले भांति हो

अपने पद में प्रेमदास जी कहते है- रंग रंगीली लाड़ली व्यारी खेलत साँझी साझ हो। हरिदास जी अपनी अभिव्यक्ति इस तरह प्रस्तुत करते है

कीरति कुल मंडल गाइये, वृषभान नृपत की बाल हो

साँझी पद रचना कर हरिराम व्यास जी कहते है कि –

श्याम सनेही गाईये ताते श्री वृन्दावन रूप पाइये हो

वृंदावन धाम में इन वाणीकारों ने साँझी को भी उतना महत्व दिया जितना अनेकों उत्सवों के पदों को यहाँ पर यह भी स्पष्ट कहना जरूरी होगा कि प्रभु हितहरिवंश जी, हरिव्यास जी के साँझी के पदों का गायन करते करते विष्णु पद गायक हित परमानंद जी महाराज वाणीकार भी अपने भाव को रोक नहीं पाये साँझी पोथी में उनके अनेकों पद प्राप्त हुए है।

साँझी खेलत रंग महल में
छवि अलवेली राधा।
वीनत फूल नवीन सखी संग
पावन रूप अगाधा।
अपनी नेह सहेली पूजै
वारत नेह अवाधा
राधा बल्लभ हित परमानन्द
आनंद निधि सुखदाता।

हित परमानंद जी आगें के पद में लिखते है-

श्री वृंदावन कुँज महल, राधिका वल्लभ लाल
साँझ समय साँझी की रचना बनावहीं।

यह पद स्पष्ट करता है कि साँझी संध्याकाल में ही वनाई जाती है। साँझी शब्द के भावार्थ में जाये तो 'साँझा' यानी मिलकर अर्थात साँझी एक दूसरे से परस्पर बनाई गई वस्तु या मिलकर तैयार कोई अभिव्यक्ति या परस्पर एक दूजे को सजाने सवारने की एक प्रक्रिया है। कालांतर में कृष्ण राधिका द्वारा इस माह के पावन का परम आनंद संध्या काल में उठाने हेतु प्रभु फूलों से श्रृंगार करते है या एक दूजै में फूलों को समर्पित करते है। फूलों की सेज तैयार करते है। परमानंद जी कहते है।

हित परमानंद वृषभान की दुलारी प्यारी
प्रान प्यारी प्रीतम पर फूलन बिनावहि।

चूँकि हमारी परम्परा में संध्या काल के अन्तर्गत वृक्षों के निकट जाना माना है तो क्या इस वर्जना का उल्लंघन जुगल कर रहे है या वीने हुए पुष्पों को संध्या समय श्रृंगार या सजावत में तैयार कर रहे है। यह विषय साँझी के एक ऐसे भाव को भी ला सकता है। जो निराकार भाव में सम्पन्न होता रहा हो। हित परमानंद जी साँझी के माध्यम से जिस लीला का वृतांत देते है वह समझने योग्य है।

श्री वृषभान कुमार किशोरी,
श्री राधिका साँझी को खेल वनावत
रूप को लोभी भयो सखी श्याम,
सवई मिलके नित फूल विनावत
कोंऊ सखी कहे जान कह्यों,
रूठे हाहा करे ता हे मनावत
नैन लखों नैन मिले परमानंद
श्याम को श्याम से प्रेम जगावत।
पूछँत प्यारी जू सो प्रेम सखी को,
लखि यह कौन लहि यह आवत
नख पै सिख सुन्दर श्याम बनी,
मन कौ मोहे मधुरेश गावत
चंचल नैनी निहार रहे रस
बाबरी सी नित मोहे हसांवत
परमानन्द राधिका वल्लभ सौ
वतयात है फूल यह छवि पावत

परमानंद जी के इन पदो ने साँझी के अदृश्य भाव को रखा है। हित परमानंद जी के इन साँझी पदों को पं. विष्णु मोहन नगार्च जी ने दूरभाष पर सुनाकर मुझे भावनात्मक रूप से, जो आनंद प्रदान किया उससे साँझी के संरक्षण हेतु मुझे प्रेरणा का अहसास हुआ। साँझी के पदों को अनेकों विद्वान वाणीकारों ने रचा। कुछ वाणीकारों में नागरिदास, घनश्याम जी, चाचा वृंदावनदास, श्री वल्लभ रसिक जी आदि प्रमुख है। श्री हरिप्रिया की साँझी पद भी पढ़ने को मिलते है-

साँझी साँझ मिलि खेल ही दोऊ नव जीवन समतूल हो

वदन चंद्र की चंद्रिका चित चिताहि चुराये लेत हो
हित सहेली श्री हरिप्रिया जीवत नित नैन निहारि हो
हरिप्रिया के एक अन्य पद में-
प्रिय संग विहारिन लाड़िली मिलि खेलत साँझी साँझ हो,
सुख विलास विलसत साँझी साँझी माँझी सुख सानी हो
श्री हरि प्रिया निहारि नवल छवि, वारि वारि जीवें पानी हो।

विष्णु पद गायकी में इन पदों को गाने वाला स्वयं आनंदित हो जाता था। भाव और भक्ति का चर्मोत्कर्ष अगर है तो वह हमारे उत्सव में गाये जाने वाले पदों में। आज यह परम्परा हमसे दूर हो रही है। मंदिरों में फल फूलने वाली साँझी आज लोग भूल रहे है। जहाँ है वहाँ लोगों का न पहुंचना हतोत्साहित भाव उत्सव करता है। मंदिर इन दिवसों में सूने से लगते है।
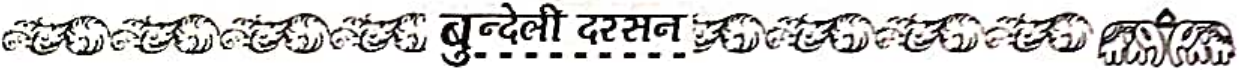
कई मंदिरों के पुजारियों को इसका पता भी नहीं है प्रसाद आरती तक की सीमायें उन्हें ज्ञात है। परम्पराओं को लुप्त करने में हम पाश्चात्य संस्कृति को दोषी ठहरा देते है परन्तु हम इसके लिए कितने जिम्मेदार है इस पर चिंतन नहीं करते।

आज के ऐसे वातारण में भी राधावल्लभ एवं गोविन्द जी के मंदिर में साँझी उछारने की परम्परा लघु रूप में देखने को मिलती है। सॉझी विशेषज्ञ श्री शरद त्रिपाठी अपने मंदिर केरूआ वालों का मंदिर में 'जल सॉझी' का उत्कृष्ट प्रदर्शन करते है। गौ सेवक बाबा लखनदास "खिलौने की साँझी अपने निवास पर लगाते है। जैसे कोई मरीज वेन्टिलेटर पर पड़ा अंतिम सांसे निता है उसी प्रकार सॉझी जैसी अनेकों परम्परायें आधुनिकता की शिकार होकर अंतिम सांसे ले रहीं है। संस्कृति कर्मी, इतिहासकार तो संरक्षण में जुटे ही है परन्तु आम व्यक्ति अपना रूझान बढ़ाता है तो इन परम्पराओं को प्रोत्साहन रूपी ऑक्सीजन मिलने की संभावना है।

- संगीत गुरूकुल
दतिया म.प्र.

आधुनिक ढड़भोजी विवाह लील गये रसीले बुन्देली लोकगीत

-डॉ. कुंजी लाल पटेल 'मनोहर'

बुन्देलखंड के लोकजीवन में प्रात: स्मरणीय प्रभुराम के चरित्र गायन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। यहां के ग्रामीण लोकमानस में रामनाम की महिमा का पूर्ण समन्वय हो जाने के फलस्वरूप ही, संभवत: इस जनपद के अनेक रामनगर, रामपुर, रामगढ़, रामटौरिया, जनकपुर और जनकगंज जैसे ग्राम स्थापित किये गये होंगे। यहां की पावन धरा में स्थित कतिपय घाट, कुण्ड, कूप, बावरी, वन और बाग मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम की तत्कालीन जीवनयात्रा के मूकसाक्षी प्रतीत होते हैं। इतना ही नहीं, रामजानकी, लक्ष्मण-भरत आदि नाम तथा उनके पर्यायवाची शब्दों के आगे प्रसाद, प्रताप, दास, लाल, दयाल, पाल, सेवक शरण, सिंह, सखी, लली, दुलारी, देवी, बाई शब्द जोड़कर नामकरण की परम्परा के पीछे रामनाम की महिमा लोकजीवन में फलीभूत होकर बुन्देलखण्ड के ग्रामीण समाज में आज भी पल्लवित हो रही है।

विवाह मानवीय जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार माना गया है। जन्मोत्सव के आकांक्षीय लोकगीतों से ही यहां का प्रत्येक माता-पिता राम जैसा पुत्र तथा सीता जैंसे पुत्रवधू की चाहना करने लगता है। इसीलिये हमारे लोकजीवन के मांगलिक कार्यों में राम जानकी विवाह की परम्परा का सर्वाधिक प्रभाव लोकाचारों में देखने को मिलता है। बुंदेली के वैवाहिक लोकगीतों में राम, जानकी, लक्ष्मण, भरत, जनक सुनयना, दशरथ, कौशल्या के नाम बड़े आदर से गाये जाते हैं। हमारी लोक मान्यताओं के अनुसार वैवाहिक लोकगीतों में उक्त नामों का गायन किये बिना विवाह संस्कार निर्विहन सम्पन्न होना कुछ असंभव सा प्रतीत होता रहा है।

बुंदेलखण्ड में 'ओली-पक्यात' से ही 'वर-वधू' पक्षों में मांगलिक लोकगीतों की सरस, सुरीली और सुमधुर ताने गूजने लगती है। वरपक्ष में पक्यात हो जाने के कुछ दिन बाद 'कन्यापक्ष' में लगुन की तैयारी होने लगती है, जिससे कि - वरपक्ष वालों के यहाँ जल्दी लगुन भेजी जा सके। 'लगुन' चाहे जिसकी भी बेटी की लिखी जा रही हो, हमारे लोकमानस का लोकगीत अपनी पुत्री को भगवती 'सियाजू' के अनुरूप मान्यता प्रदान कर गाने के लिये प्रेरित करता है। लगुन लिखते समय जो लोकगीत गाया जाता है, उसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है। -

सो आज मोरी जू कि लगुन लिखते है।
लगुन लिखते है ढिग चाँक पुरत है।
चौक पूरत है शुभ कालसा सजत है।
सो आज सोने के कलसा पै दियला जलत है।
दियाला जलत है शुभ व्याव सुधत है।

लगुन लिखने के बाद पंडित जी तिथिवार विवाह के पूरे कार्यक्रम बांच के सुनाते है। फिर बिटिया वाले की श्रृद्धानुसार लगुन में सोने चांदी से मढ़े या सादा हल्दी, सुपारी, नारियल, चाँवल आदि के साथ ऊने अंक में रूपया डाल जाते हैं। वस्त्राभूपण के साथ जो सामान लगुन में जाना है, वह सभी को दिखाया जाता है। पूरी तैयारी साथ निर्धारित तिथि को लगुन जाती है। इसमें जाने वालों को हमारे यहाँ 'लगुनियाँ' कहते हैं।

बुन्देली समाज में चाहे किसी भी जाति के वर की लगुन चढ़े वर या दूल्हा को रामके रूप में ही मान्यता प्रदान की जाती है। लगुनोत्सव पर वैंसे तो अनेक लोकगीत स्त्रियों द्वारा गाये जाते हैं। लेकिन सर्वाधिक गाया जाने वाला एक पारम्परिक लोकगीत यहाँ प्रस्तुत है -

सो आज मोरे राम जू को लगुन चढ़त है।
लगुन चढ़त है मन मोद बढ़त है।।
कानन कुण्डल मोरे राम जू को सोहें।
सो गलुवन बिच मुतियन लरें उरमत है।।
सो आज मोरे राम जू को सोहैं।
सो गरे बिच गोप जेंजीरें लसत है

केसर खारें मोरे राम जू को सोहैं।
सो गरे बिच गोप जँजीरें लसत हैं।
कंचन चूरा मोरे राम जू का सोहैं।
सो हांतन बिच मुदरी दरसत है।।
सो आज मोरे अंगना में रस बरसत है।

लगुन के साथ ससुराल से दूल्हा के लिये जो वस्त्राभूषण आते है 'बुलौबा' में आई गौवपुरा की स्त्रियां प्रत्येक वस्तु का नाम लेकर एक और लोकगीत 'लगुनोत्सव पर बड़े चाव से गाती है, जिसमें दूल्हा को रघुवर एवं उनके ससुर को जनक शब्द से सम्बोधित किया जाता है। लोकगीत की कुछ पंक्तियां उदाहरण स्वरूप देखिए -

सो बना छवि लख भीरौ जिया हुलसत है।
हिया हुलसत है उमंग बढ़त है।।
रघुवर बसन लसत कुसुमानी।
सो मुदरी जंजीरन पै हिया हुलसत है।।
जनक भवन से जो आई लगुनियां।
सो सुन सुन सखी मौरौ हिया हुलसत है।।

लगुनोपरान्त अनेक लोकाचार क्षेत्रीय रीति-रिवाज के अनुसार बुन्देली लोकगीतों की गायकी परम्परा के साथ सम्पन्न होते हैं। अनेक प्रसंगों में भगवान के आदर्श रूप को लोकगीतों में स्त्रियों द्वारा गाया जाता है। 'मैर' या मायने की करैयां चढ़ाते समय वर-वधु दोनों पक्षों में अपने मूल मुल्क के देवी-देवताओं के साथ भगवान के अद्वितीय भक्त हनुमान जी को प्राकृतिक आपदाओं से निजात पाने के लिये लोकगीतों के माध्यम से स्मरण करते हुये उन्हें कैंसे आमंत्रित किया जाता है, एक लोकगीत की निम्नलिखित पंक्तियों में देखिये-

हनुमत है रखवारे पवन जू के,
हुनमत है रखवारे।
आदी बैहर के बधा वधत है।
बाजत है ढोल नगारे।
हनुमान बाबा ऐसे गरजत है।
जैसें हो इन्द्र नगारे।।

'मायने' के दूसरे दिन बारात की तैयारी की जाती है। बारात प्रस्थान के पहले दूल्हा को सजा-संवार कर पालकी या घोड़े पर बैठाकर गाँवखेरे के सभी देवी-देवताओं को पान-बतासा चढ़ाकर उन्हें बरात के लिये आमंत्रित कर वैवाहिक कार्यक्रम निर्विध्न सम्पन्न होने की 'मनोती' के निमित्त 'राछ' फिराई जाती है। इस अवसर पर जो लोकगीत गाये जाते हैं, वे 'बनरा' कहलाते हैं। इन बनरागीतों में दूल्हा भगवान से तथा उसके भाइयों को लक्ष्मण-भरत के समान रूप देकर गाया जाता है। बनरा लोकगीत की कुछ पक्तियां यहां उदाहरणीय हैं -

बना मौनौ पूनौ कैसों चाँद, बना सब जग उजियारे री।
ऐसे सज गये जैंसे लक्ष्मण राम, भरत को आँगें करलये री।।
मेरे दो गोरे दा स्याम, बना कुल के उजियारे री।
मेरे राम लखन से बनरा, आली को बिलमा लये री।।

इधर गाँव-कुल के रीति-रिवाजों का निर्वहन करते हुये "दुल्हा निकासू" होता है, उधर कन्यापक्ष में बारात आगमन की प्रतिक्षा होने लगती है। बारात के स्वागत में कन्यापक्षीय महिलायें 'उवनी' के अवसर पर जो मांगलिक लोकगीत गातीं हैं, उसमें रघुपति रूपी दूल्हा के आगमन से कन्यापक्ष के प्रदेश की सूखी प्रकृति पूर्णत: हरीभरी दिखती है। एक लोकगीत की कुछ कड़ियाँ अवलोकनार्थ यहॉ प्रस्तुत है -

जब रघुपति दूल्हा मेड़े में आये,
सो दूब रई हरआय, भले जू।
जब रघुपत दूला तालौ पै आये,
सो ताल हिलोरे लेय, भले जू।।
जल रघुपति दूला बागों में आये,
फूल रहे मुसकाये भले जू।

बुन्देलखण्ड में कही-कही पुष्पवाटिका एवं गोरीपूजन के प्रसंग पर आधारित एक वैवाहिक लोकगीत कन्यापक्षीय नारियों द्वारा बड़े हाव-भाव और भाव के साथ गया जाता है। इस लोकगीत की बानगी प्रस्तुत है -

खोरन-खोरन पूछे जनक दुलारी जू
कौन बाबुल जू के बाग, भले जू।
हरी-हरी दूबा बेटी फूली जा चमेली,
बेई बाबुल जी के बाग भले जू।

ऊबनी अथवा द्वारचार के अवसर पर 'शिव-गौरा' विवाह से संबंधित हास-परिहास पूर्ण अनेक लोकगीत तो

गाये ही जाते है, लेकिन हमारे यहाँ प्रत्येक विवाह में इस अवसर एक पारम्परिक लोक गीत अनिवार्यतः गाया ही जाता है, जिसमें मिथिला तथा अयोध्या के संबंधों को नकारा नहीं जा सकता। 'ऊबनी' के लोकगीत की लोकप्रसिद्ध कुछ पंक्तियां देखिये –

राम-राम-राम चढ़ व्याहन आये।
कौना के भले मालिया, जिनने बाग लगाये।।
कौना की बेटी कोकिला, जिनने फूल मँगाये,

ऊबनी के बाद चढ़ाव चढ़ना महत्वपूर्ण ही नहीं एक अनिवार्य रिवाज है। इसमें सर्वप्रथम कन्या को मण्डप के नीचे बिल्कुल साधारण रूप में लाया जाता है। वरपक्ष वाले इस समय कन्या को बिल्कुल कन्या के रूप में ही देखते हैं। फिर कन्या को मैर या भंडार वाले घर में ले जाकर ससुराल से आये वस्त्र आभूषणों से सुसज्जित कर मंडप के नीचे लाया जाता है। इस अवसर पर हमारे यहां के लोकगीतों में कन्या को सीता के समान मान्यता दी जाती है। 'चढ़ाये' के समय बुन्देलखण्ड की अनुभवी रमणियाँ सुरीली, भावुक तथा मनोहारी लय में जो लोकगीत गांती है, उसकी कुछ पंक्तियों अवलोकनीय हैं –

सीता बेटी के चढ़त चढ़ाये,
तौ सीता बेटी राम को रची।
उनके ससुरे कौ सुघर सुनार,
सौ बेदी उनकी अजब बनी।
उनके ससुरे को सुघर सुनार,
सो करदौनी उनकी अजब बनी।

इसी प्रकार बुन्देलखण्ड में प्रचलित सभी आभूषणों के नाम जोड़कर चढ़ाय पर्यन्त यह लोकगीत गाया जाता है। इसी अवसर पर "सीता बेठी चढ़ाय के चौक, औसर नौनों लगै" लोकगीत महिलाओं द्वारा तन्मयता के साथ गया जाता है।

चढ़ाय के बाद बारातियों को भोजन जिवाने के लिये पंगत कराई जाती है। पंगत या ज्यौनार के अवसर पर गाये जाने वाले अनेक लोकगीत पूरे बुन्देलखण्ड में प्रचलित हैं। पंगत के अधिकांश लोकगीत स्वागतात्मक, परिचयात्मक, रचनात्मक, हास्यात्मक, विवरणात्मक तथा व्यंजनात्मक होते हैं। जिस समय बारात पंगत के लिये मंडप के नीचे आती है, उसी समय बुन्देली बालाये बारातियों के मार्ग में आने वाली अड़चनों तथा गलियों की स्थितियों एवं कठिनाईयों के बारे में सुरीली तानों में इस स्वागतात्मक लोकगीत के माध्यम से कैंसे पूछतीं हैं। आप भी देखिए –

जौन गलियाँ तुम आये अयुध्या वाले,
वे गलियां कहौ कैंसी, अहीरे लाला।।
डांगा डंगीली उर पथरीली,
डरझत सुरझत आये, अहीरे लाला।
भाई की गंगा बहिन की जमना,
उखरत बूड़त आये, अहीरे लाला

इस लोकगीत के बाद पंगत की व्यंजन प्रधान अनेक गारियाँ गाई जाती हैं। जिनमें बारातियों को पंगत में जिवायें जाने वाले खट्टे मीठे एवं नमकीन व्यंजनों के नाम गिनाये जाते हैं। पक्की पंगत के एक प्रसिद्ध लोकगीत की कुछ पक्तियां देखिए –

आतर परसी सो, पातर परसी।
झट परस दई दुनियां, जनकपुर की सखियाँ।
आलू परसे, रतालू परसे।
सो परस दई घुइयाँ, जनकपुर की सखियाँ।
पापर परसे, सो पूरी परसी।
झट परस गई गुजियाँ, जनकपुर की सखियाँ।
लडुआ परसे, जलेबी परसीं।
सो परस दई बुंदियाँ, जनकपुर की सखियाँ।

हमारे यहां जब तीन दिन के विवाह होते थे तब लाकौर का प्रचलन था। भाँवरन के दिन सुबह दस ग्यारह बजे के लगभग कन्यापक्षीय महिलायें इस दस्तूर को सम्पन्न कराने के लिये जनवासे में जातीं थीं। लाकौर के इस रिवाज में दूल्हाराजा तथा उनके भाइयों को हास परिहास में जो ताने मारे जाते थे, उनमें भगवान राम तथा उनके भाइयों पर यथार्थभरे सीधे मजाकिया व्यंग्य प्रहार किये जाते थे। लाकौर में गाये जाने वाले लोकगीत की निम्नलिखित पक्तियों दृष्टव्य हैं –

चलो सखी लाकौरी लैके, जो प्रभु राम बिराजे बे।
दो भइया हें स्याम सलौने, दो है, गोरेनारे बे।
मिथलापुर में राम बिराजे, छवि निरखत नरनारी बे।

लाकौर का नैंग मात्र एक दस्तूर नहीं, बल्कि भौंवरों के लिये कन्या पक्षीय महिलाओं की ओर से आमंत्रण होता था। विवाह में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यक्रम भांवरों का होता है। इसमें गाये जाने वाले अधिकांश लोकगीत राम-जानकी विवाह से सम्बन्धित ही होते हैं। भांवरों में जो लोकगीत सर्वाधिक गाया जाता है, उसकी निम्नांकित पंक्तियां उल्लेखनीय हैं -

बने दूला छवि देखौ भगवान की, दुल्हन बनी सिया जानकी।।
जैसई दूला अवध बिहारी, बैसई दूल्हन जनक दुलारी,
जाऊँ तनमन से बलिहारी,

इसी समय में 'रामसिया की परती भाँवरे, सुख उपजत हिये में भारी, गमन होत है 'नर नारी' नामक लोकगीत भी मनोमुग्धकारी स्वर में गाया जाता है। इसके अलावा और भी अनेक लोकगीत भावरों में गाये जाते है। साथ ही अनेक लोकाचार सम्पन्न कराये जाते हें। जिनमें कई प्रकार के लोकगीत गाने की परम्परा बुन्देलखण्ड में प्रचलित है।

भाँवरों के बाद बहुत ही महत्वूपर्ण कार्यक्रम 'कुँवरकलेवा' का होता है, जो 'सारी-सरजो' को दूल्हा तथा उसके भाइयों से हाँसी-मजाक, हास-परिहास का भरपूर अवसर प्रदान करता है। कुँवर कलेवा के लिये जब दूल्हा का आगमन होता है तब जो लोकगीत गाया जाता है उसकी कुछ पंक्तियों देखिए -

गलन गलन में घोड़ा नचत है,
बाजत है ढोल नगारे, ललन जू करन कलेऊ पधारे।

कुँवर कलेवा में सारी सरजों की ओर से अनेक लोकगीतों के साथ एक अन्य लोकगीत भी सभी जगह गाया जाता है, जिसकी कुछ पंक्तियाँ यहां प्रस्तुत है -

लगत रहो नीकौ लाला, आये इते जी दिन सें।
नार ताड़का तुमें देखकें, दौरी आई बन सें।
कछु करतूत बनी ना तुमसें, छेद दई बानन नें।

कुॅवर कलेवा मे ही ''दशरथ कुँवर कन्हैया, तुम करौ कलेवा, 'कलेऊ' के बाद विदाई की तैयारी होने लगती है। सारी सरजें 'कुँवर कलेवा' की अन्तिम घड़ियों में, एक लोकगीत के माध्यम से बड़े विनम्र शब्दों में, अगली मुलाकात के सम्बन्ध में सही-सही कहने के लिये पूछती है -

साँसी कही मोरे लाल लखन जू।
अबके मिलन कब होय मोरे लाने।।
आउत रइयो भूल नई जइयौ।
प्यारे सुमित्रा के लाल मोरे लाल।।

नारी-सरजो द्वारा अगली मुलाकात का जबाव बुन्देली लोकगीतों के अनुरूप लोकमानस में प्रचलित है। कब होगी यह अगली मिलन का मुलाकात एक लोकगीत की सिर्फदो पंक्तियों में देखिये -

बनरी चलियों हमारे साथ, कलयुग में रैवी दोऊ जने।

कुँवर कलेवा के बाद कुलकुटुम्ब की कुछ अन्य औपचारिकताओं का निर्वहन करते हुए विदाई का अवसर भी आ ही जाता है। दुल्हिन विदा होकर मायके से ससुराल आ जाती है। अनेक ऑचलिक दस्तूरों के बाद कंकन छोरने का कार्यक्रम सम्पन्न कराया जाता है। इस समय ''कंकन छूटे नहीं रघुनाथ सें, सिया जू के आज हाथ से'' लोकगीत गाया जाता है। इतना ही नहीं कहीं-कहीं 'कंकन छोरबे' की एक और गारी भी गाई जाती है। जिसकी कुछ पंक्तियां उद्धृत है -

जौना हौबै धनुष कौ टोरबो, कठिन कंकन गांठ छोरबौ।।
तुमने जनकपुरी पग धारे, शिव के धनुष टोरकें डारे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बुन्देलखण्ड के अधिकांश वैवाहित लोकगीतों में ओली-पक्यात से लेकर कंगन छोरवे तक प्रत्येक वर-वधु के विवाह में ''बने दूल्हा छवि देखौ'' भगवान की, दुलहन बनी सिया जानकी'' का स्वरूप सर्वत्र दिखाई और सुनाई देता है। अत: स्पष्ट है कि बुन्देलखण्ड में भगवान राम एवं या भगवती सीता के आदर्शों ने जनमानस को बहुत ही गहराई तक प्रभावित किया है। लेकिन आधुनिक वैवाहिक कार्यक्रमों में ग्रामीण अंचलों के पास्परिक रीति रिवाजों की झलक अब कहीं देखने को नहीं मिलती है। परिणय मंडपों के ठड़भोजी पूरी तरह से लील गये हैं विवाह के बुंदेली रसीले इन सारे लोकगीतों को। जो संभवत अब भविष्य में कभी साकार रूप नहीं ले सकेंगे।

सहायक प्रध्यापक
33/208, रेडियो कॉलोनी के सामने,
तिरछी गली, छतरपुर (म.प्र.)
मोबाइल नं. - 9425879773

लोक महाकाव्य आल्हा में मानवीय मूल्यों की अवधारणा

– डॉ. राहुल मिश्र

अपने प्रचलित अर्थों में 'मूल्य' शब्द अर्थशास्त्र और बाजार व्यवस्था से जुड़ा हुआ होता है लेकिन दर्शनशास्त्र और नीतिशास्त्र के स्तर पर मूल्य का अर्थ अर्थशास्त्रीय 'मूल्य' से एकदम अलग और व्यापक होता है। मानवीय व्यवहारों और आचरणों का समूह मूल्य की अवधारणा के रूप में स्थापित होता है। इसी के आधार पर भले-बुरे, उचित-अनुचित और सही-गलत की पहचान विकसित होती है। जीवन के साथ जुड़े होने के कारण मूल्य की यह अवधारणा साहित्य के साथ भी जुड़ जाती है। भारत में पाश्चात्य दर्शन के प्रभावों से मूल्य को उसके व्यापक अर्थों में परिभाषित और व्याख्यायित करने की परंपरा विकसित हुई है। भारतीय दर्शन समाज में जिन आदर्श तत्त्वों की स्थापना की बात कहता है, उनकी उपादेयता का मूल्यांकन करके पाश्चात्य दर्शन 'मूल्यवाद' की अवधारणा को स्थापित करता है। इतना ही नहीं, पाश्चात्य दर्शन पारलौकिक या अभौतिक तत्त्वों के साथ ही लौकिक या भौतिक तत्त्वों की उपादेयता का विचार भी करता है और उन्हें अलग-अलग वर्गों में विभक्त करके मानव तथा मानवता के लिए उपयुक्तता के क्रम का निर्धारण भी करता है। इस तरह भारतीय साहित्य के मूल्य आधारित अध्ययन में भारतीय दर्शन और नीति शास्त्र द्वारा बताए गए आदर्शों का भौतिक और अभौतिक, दोनों ही स्तरों पर मूल्यांकन संभव हो पाता है।

लोक महाकाव्य आल्हा अपने स्वरूप और लोक-विस्तार के कारण सैकड़ों वर्षों से उस भूमिका को निभाता चला आया है, जिसकी आवश्यकता समाज में मूल्यों और आदर्शों की स्थापना के लिए होती है। आल्हा युद्धों का गीतात्मक और वीरतापूर्ण वर्णन मात्र नहीं है। आल्हा चरण काव्य परंपरा में शासक राजाओं की प्रशंसा का काव्य मात्र नहीं है। आल्हा ऐसी अनौपचारिक पाठशाला है, जिसमें मनोरंजन के साथ ही नीति और आदर्श की नसीहतें बड़े सरल-सहज ढंग से सुलभ हो जाती हैं। इसीलिए आल्हा की लोकप्रियता तुलसी के मानस, कबीरी और गुरुबानी से कम नहीं है।

दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में 'मूल्य' के व्याख्याता अर्बन ने मनोरंजन के मूल्य की व्याख्या करते हुए उसे अन्य सामाजिक मूल्यों से कमतर बताया है। लोक महाकाव्य आल्हा के संदर्भ में यह धारणा एकदम विपरीत साबित होती है। समूचे उत्तर भारत में, बुंदेलखंड, ब्रज, राजस्थान, बैसवारा, अवध और भोजपुर में विभिन्नताओं के साथ आल्हा गायन की, अल्हैती की व्यापक परंपरा प्रचलन में रही है। बरसात के समय, किसानों-मजदूरों के फुर्सत के समय गाँवों की चौपालों, अथाई और बैठकों में होने वाली अल्हैती सभी को एक सूत्र में जोड़ देती थी। एक साथ मिलजुल कर बैठने के लिए, आपसी वैमनस्य को, कटुता को, झगड़ों को भुलाकर समय व्यतीत करने के लिए आल्हा के माध्यम से मनोरंजन का जो साधन सुलभ हो सका, उसमें मनोरंजन का मूल्य भले ही अनुत्पादक हो, मगर साहचर्य का, मैत्री और सद्भाव का मूल्य अपनी समग्र उत्पादकता के साथ विकसित हुआ। समाज को जोड़ने का कार्य अल्हैती ने जिस तरह से किया, वह अपने आप में महत्त्वपूर्ण है।

लोक महाकाव्य आल्हा में साहचर्य का मूल्य सभी जाति-धर्म के लोगों को साथ लेकर विकसित होता है। महाकाव्य का एक प्रमुख पात्र तालन सैयद आल्हा के पिता दस्सराज, चाचा बच्छराज और राजा परमाल की मदद करता है। महाकाव्य का नायक आल्हा तालन सैयद को अपने पिता के समान मानता है और उनसे मदद की उम्मीद रखता है।

ताला सैयद को ललकारा, चाचा तेरी लेउँ बलाय।
जब से मर गए पिता हमारे, गोद तुम्हारी गए बिठाय।।
राम का मित्तर जामवंत था, औ पांडो का कृष्ण अवतार।

आल्हा का ताला सैयद है, काम करे जो सोच विचार।।

ऐसा ही साहचर्य देवी-देवताओं के स्मरण में भी देखने को मिलता है। संकीर्णता को त्यागकर सभी का स्मरण होता है -

सुमिर भवानी दाहिनी, सनमुख रहें गनेस।
पाँच देव रक्षा करें, ब्रह्मा, विष्णु, महेश।।

इसके साथ ही देश के प्रसिद्ध देवस्थानों और स्थानीय देवी देवताओं का स्मरण भी होता है -

काली सुमिरौं कलकत्ते की, जगदम्बा के चरन मनाय।
अन्नपूर्णा तिरवा वाली, जगमग जोत रही छहराय।
सुमिर भवानी कलपी बाली, मनिया सुमिर महोबे क्यार।।

आल्हा में जातीय बंधन भी टूटते नजर आते हैं। आल्हा, ऊदल और मलखान ऊँचे कुल के राजाओं के साथ ही तत्कालीन समाज के उपेक्षित लोगों को भी बराबरी का मान देकर समाज को एक सूत्र में बाँधने का तथा सभी को साथ लेकर चलने का प्रयत्न करते हैं -

हाथ जोरि कै रुपना बोलो, हम नहिं मूँड़ कटैहैं जाय
सेवा लेवैंए मेवा खावैं, भेजौ बड़े-बड़े सरदार
ठसक दिखौआ ठाकुर भेजो तँबुअन तोंदैं रहे बढ़ाय
हँसकै ऊदल बोलन लागे, रूपन अक्किल गई तुम्हार
ऐपनबारी तुम लै जाओ, हुई रई घरी-घरी की बार
घोड़ा बेंदुल पै बनि बैठो, संग लै लेव ढाल-तलवार
नाई-बारी हौ तुम नाहीं, घर के भैय्या लगौ हमार
मान महोबे का रख लेबौ, दोनों हाथ करौ तलवार।

अपने देश-काल के लिए समर्पण की भावना, नीति और मर्यादा की रक्षा की भावना आल्हा की कथा में स्थान-स्थान पर देखने को मिलती है। राजा परमाल द्वारा अपमानित होने के बाद जब आल्हा ऊदल महोबा छोड़कर कन्नौज चले जाते हैं और बाद में जब उनके पास महोबा में पृथ्वीराज के आक्रमण का संदेश आता है तो वे अपमान को भुलाकर अपने 'देश' की रक्षा के लिए चल पड़ते हैं। उनकी माता देवल देवी भी आदर्श क्षत्राणी का धर्म निभाते हुए उन्हें जाने का आदेश देती हैं। परमाल की पत्नी मल्हना या मलना, आल्हा-ऊदल की माँ दिवला, मछला और बेला जैसे नारी पात्र भी हैं, जो मध्ययुगीन भारतीय महिलाओं का आदर्श प्रस्तुत करती हैं और वीरांगनाएँ भी हैं। आल्हा, ऊदल, मलखान और इंदल के चरित्र को विस्मृत नहीं किया जा सकता, जिनके प्रश्रय में कथा का विस्तार होता है। राष्ट्रीयता की उदात्त भावना के साथ ही नैतिकता, आदर्श, सच्चरित्रता जैसे मानवीय मूल्य भी आल्हा में स्थान पाते हैं। इनके साथ ही उदारता, धीरज, संयम जैसे मूल्य भी जुड़े हुए हैं। महाकाव्य का नायक आल्हा अपने संयम को व्याख्यायित करता है.

पहली गारी पै ना बोलूँए ना दूजी पै करिहौं वार।
तीजी गारी के कड़ते खनए मुँह में धाँस देहुँ तलवार।।

महाकाव्य का नायक आल्हा अपने भाई ऊदल की अपेक्षा धीर-गंभीर है। वह समाज के सभी लोगों को साथ लेकर चलता है। सोच-समझकर कार्य करता है। महोबा का राजा परमाल राजा होने के बावजूद कायरता, स्वार्थ और भीरुता का प्रदर्शन करता है। लोकपरंपरा ऐसे शासक के गुणों (अवगुणों) को स्वीकार नहीं करती, शायद इसी कारण जगनिक कृत 'परमाल रासो' अपनी लोक परंपरा में 'आल्हा' के नाम से प्रसिद्धि पाता है।

नीति और आदर्श की नसीहतें भी आल्हा की अपनी विशेषता है। यह विशेषता पूर्ववर्ती साहित्य की लौकिक परंपरा की सद्य: प्रवाहित धारा के अंश के रूप में आल्हा में आती है। धर्म का व्यावहारिक और लोककल्याणकारी पक्ष भी खुले रूप में प्रकट होता है। पेश है एक बानगी -

पानी जैसो बुलबुला है जो छन माँहीं जैहे बिलाय,
सदा तुरैया ना वन फूलै यारों सदा न सावन होय।
सदा न मइया की कुक्षा में धरिहौ बार-बार अवतार,
जस अम्मर कर लेव जुद्ध में, काया छार-छार हुइ जाय।।

मूल्यवाद की अवधारणा प्रत्येक मानवीय मूल्य को साधक और तात्विक मूल्य के स्तर पर, स्थाई और अस्थाई मूल्य के तौर पर तथा उत्पादक और अनुत्पादक मूल्य के तौर

पर देखती है। लोक महाकाव्य आल्हा के संदर्भ में जैविक मूल्यों, अर्थात् शरीर की विभिन्न जरूरतों को पूरा करने हेतु साधन जुटाने के प्रयासों, धन कमाने के प्रयासों के तौर पर देखा जाए तो आल्हैती की परंपरा साधक मूल्यों से संबद्ध प्रतीत होगी। आल्हा का गायन कब से प्रारंभ हुआ और तब से लेकर आज तक अल्हैती करने वालों ने कितनी कमाई की साधक मूल्यों से जुड़े ऐसे प्रश्नों को एक क्षण के लिए त्यागकर विचार किया जाए तो उस समय, जब सिनेमाघर नहीं होते थे, औपचारिक पाठशालाएँ भी गिनती की ही होती रही होंगी, तब आल्हा का सामाजिक अवदान साधक मूल्यों मात्र से जुड़ा नहीं रहा होगा। आल्हा में बार-बार दोहराई गई नसीहतें, नीतियाँ, मर्यादाएँ, शिष्टाचार, आदर्श, सद्भाव और मैत्री जैसे उदात्त मानवीय मूल्य आल्हा सुनने वालों को जरूर प्रेरणा देते रहे होंगे। इस तरह साधक मूल्य या अनुत्पादक मूल्य या अस्थायी मूल्य अपनी स्थिति बदलकर तात्विक मूल्य या उत्पादक मूल्य या स्थायी मूल्य की परिधि में आ जाते होंगे।

लोक परंपरा सदैव उन मूल्यों को साथ लेकर चलती है, जिन मूल्यों से लोक के कल्याण की भावना के आग्रह को तृप्त किया जा सके। राजा परमाल की लोक अस्वीकार्यताय पृथ्वीराज, धान्दू, चौंड़ा, कड़ंगाराय और माहिल जैसे पात्रों के प्रति लोगों की घृणा और आल्हा, ऊदल, लाखन, मलखान, मल्हना और देवल देवी जैसे पात्रों के प्रति जनआस्था-लगाव इसी का परिणाम है। आल्हा के प्रतिपात्रों की उपस्थिति, उनके मानवता विरोधी कार्य, उनकी दुश्चरित्रताएँ उनके छल-कपट समाज में मानवीय मूल्यों के विरोधी तत्त्व बनकर नायक और उसके सहयोगी पात्रों के गुणों को पूर्णता के साथ प्रकट करने के, उनकी लोकग्राह्यता के माध्यम बन जाते हैं।

अपने इसी गुण के कारण सैकड़ों वर्षों की वाचिक परंपरा में लोक महाकाव्य आल्हा जीवित और जीवंत बना रहा। अलग-अलग क्षेत्रों में गायन की अपनी रीति के बावजूद, अनेक परिवर्तनों के बावजूद अपने अंदर मानवीय मूल्यों की कल्याणकारी धरोहर समेटे हुए आल्हा ने आज के आधुनिक दौर तक का सफर पूरा किया है। आज टेलीविजन और इण्टरनेट जैसे तमाम संचार माध्यमों के युग में और साथ ही जैविक मूल्यों के अर्जन की व्यस्तताओं के युग में लोक महाकाव्य आल्हा का अस्तित्व सिमट रहा है। बरसात के फुरसत वाले मौसम में अथाई-चौपालों पर ढोलक-मंजीरे की धुन के साथ आल्हा सुनाई नहीं देता है। शायद आज की लोक परंपरा ने उन मूल्यों को त्याग दिया हैए जिनके बल पर सैकड़ों वर्षों तक आल्हा लोकजीवन का अभिन्न अंग बना रहा।

प्राध्यापक, केंद्रीय बौद्ध विद्या संस्थान
लेह-लदाख (जे.के.)

असि और मसि के धनी महाराज छत्रसाल जू

लेखक – कपिल देव तैलंग

उँसे तो जा बुन्देली भूम वीरन की भूम कहाउत है। पै उन सब में महराज छत्रसाल जू जैसो आन-बान-सान को धनी भौतई कम भए - ना के बराबर। महराज छत्रसाल जू तो सांचे बुंदेली भूम के मेड़ धरैया और सांचे रखवैया हते। उनके जमाने में काउ ने टेढ़ी नजर से निहारवें की हिम्मत नई कर पाई। औरंगजेब तो हमेशा विदकत रओ। एई सें कोनउ कवि ने सांची कई हती कें –

इक हांडा बुंदी धनी, एक महेवा बाल
सालत औरंगजेब कों जे दौनों छत्रसाल।।

महराज छत्रसाल कोरे युद्धवीर नई हते। वे तो पांच-पांच वीर हते। वे धर्मवीर हते, कर्मवीर हते, युद्धवीर तो हतेईते वे दानवीर और काव्यवीर सोउ हते। लड़ाई में उनकी तलवार चलतती और लिखाई में उनकी कलम। एक तरफ तलवार और दूसरी तरफ कलम असि के संगे मसि के धनी हते।

धर्मवीर तो वे हतेई, महामति प्राणनाथ जू और कई संतन की किरपा उनपै बरसी। कर्मवीर तो वे इत्ते हते कि बुन्देलखण्ड की मेड उनई की बाँची कई जात हैं के –

इत जमुना उत नर्मदा इत चंबल उत टोंस
छत्रसाल सों लरन की रई न काहूँ हौंस।।

युद्धवीर की का कने। महाकवि भूषण ने उनपे छत्रसाल दसक में दस कवित्त लिखे। दानवीर की का कने बुन्देलखण्ड के भूषण कए जावें वारे लाल कवि खों तो उनने जागीरें लगा दई तीं जो आज लों अजयगढ़ के लिंगा दग्धा गाँव लाल कवि के वंशधर खाए पिंए जाएए। छत्रसाल जू इतने दानी हते, इतने दानी हते, कै संकल्प के पानी की नदिया तक बहा दईती। लाल कवि को जो कवित्त उनकी दानसीलता खौ उजागर करवें के लानें भौत है। सुन लओ जाए वो कवित्त - प्रसंग है नाएं सें तो छत्रसाल जू के संकलप दान के पानी की नदी बउत जा रई और मांए से गंगा जू बउत आई दोउन ने एक दूसरे खों देखो तो गंगा जू सें नई रई गई और वे पूंछती है–

अक्षत दरभ युत तरल तरंगनि तें
को है तू कहाँ ते आई कीने वेस सारी को।

तो संकलप सरिता ने ज्वाव दओ –

संकलप सरिता हो सलिल बढ़त आवें
महाराज छत्रसाल दान व्रतधारी को।।

गंगा जू बोलीं –

एतो क्यों गुमान कीनों, मोहे न प्रनाम कीनों
लाल कवि कहै बोली बोल भर भारी को।

तो संकलप की नदी में जुआव दओ के मैं तो तो सें बड़ी हो काए सें –

महादानि पानि तें निकास मेरो जान गंगे
पॉयन कढ़ी है तू वामन भिखारी के।।

जा हती दानबीरता महराज छत्रसाल जू की।

अब पांचवीं वीरता काव्य वीरता हती। उनने छत्रविलास की रचना करी जो भक्ति प्रधान है। पांच भाग हैं जी के। राधाकृष्ण के कवित्त सीताराम की वन्दना, अक्षर अनन्य जू सौ प्रश्न, आद आद। राम और कृष्ण में कोनउ भेदभाव नई हतो दोउ उनके आराध्य हते।

छात्र विलास संग्रह स्यात् 1969 में पुराने छापाने में छपी हती। जी को उदाहरन सुन लओ जाए –

सुदामा तन हेरे तो रंक हूँ ते राव कियो
विदुर तन हेरे तो राजा किये चेरे तें।
कुबजा तन हेरे तो सुन्दर सरूप दियो
द्रोपदी तन हेरे तो चीर बढ़ो टेरे तें।।
कहत छत्रसाल प्रहलाद की प्रतिज्ञा राखी
हिरणाकुश मारो नेक नजर के फेरे तें
ऐसे अभिमानी गुरूज्ञानी भए कहा भये
नामी नर होते गरूड़गामी के हेरे तें।।

भगवान के प्रति अनन्यता को उदाहरन इन पंक्तियन में मिलत है –

सब है विपच्छ कोउ पच्छ न हमारो गहे
मोरपच्छ वारो एक मोर एच्छ वारो है।।

ई में यम अलंकार को अनोखों उदाहरन है। भगवान राम के रकार और मकार के वरनन में छत्रसाल जू ने जो लिखों के –

रकार पिता राम है मकार माता जानकी

अन्त में एक प्रसंग और बताउत है जो काव्यवीर होवे के संगे संगे कवि के सम्मान करवे को जो अनोखे उदाहरन है राजा भोज सें बढ़कें। राजा भोज तो धन से सम्मन करत ते पे छत्रसाल जू ने तो अनमन से कवि भूषण को सम्मान दओ और कवि भूषण की पालकी खों अपने कंधन पे ढोई। महाप्राण निराला जू ने कोनउ बुन्देलखण्ड के राजा से परिचय कराओ तो निराला जू बोले आप खों में नमस्कार करत हों काए से आपके बाप के बाप के बाप ने हमाए बाप के बाप के बाप के बाप की पालकी ढोई ती। राजा की परंपरा में बाप के बाप के बाप का मतलब महाराज छत्रसाल जू से हतो और कवि की परंपरा में बाप के बाप के बाप को मतलब महाकवि भूषण सें हतो।

सो धन्य है बुन्देली भूमि धन्य है वीर छत्रसाल और धन्य है ई भूम की सेवा करवे वारे। फिर तो छत्रसाल जू देवतन में गिने जान लगे। जा कई जात है कै –

कृष्ण, मुहम्मद, देवचन्द्र, प्राणनाथ छत्रसाल
इन पांचन कौं जो भजे, दु:ख हरे तत्काल।।

एस. 11 मन्दाकिनी कालोनी,
कोलार रोड भोपाल (म.प्र.)

बुन्देली संस्कृति के संवाहक - "लोकगीत"

श्रीमति ब्रजलता मिश्र, प्रवक्ता

किसी भी क्षेत्र के सांस्कृतिक संवर्द्धन में उस क्षेत्र की महिलाओं की महती भूमिका होती है - यह निर्विवाद सत्य है। फिर बुन्देलखण्ड के विषय में तो कहना ही क्या ? दतिया के सुप्रसिद्ध साहित्यकार का निरूपण इस प्रकार किया है -

छत्रपति छत्रसाल की मिसाल मिलै कितै,
दुस्ट-दल-दर्प की दरा है जौ बुन्देलखण्ड।
दानबीर बीरसिंह देव की तुला-सी भासी,
वासुदेव न्याय मुख्य है जौ बुन्देलखण्ड।।
धर्मवीर हदौल मधुकुरसाह जू की,
जन्मभूमि पावन धरा है जौ बुन्देलखण्ड।
हुलसी के नन्दन ने चन्दन घिसौ है इतै,
भारत कौ तुलसीघरा है जौ बुन्देलखण्ड।।

इस गौरवशाली बुन्देलखण्ड की संस्कृति बहुत समृद्ध होने के कारण यहाँ का लोकसंगीत बहुत व्यापक है। हमारी ऋतुएँ, पर्व, तीज-त्यौहार, जन्मोत्सव, विवाहोत्सव आदि की परम्पराएँ तथा रीति-रिवाज अपने आप में अनूठे हैं। बुन्देली लोकगीतों से जन-मानस जन्म से मृत्यु पर्यन्त जुड़ा रहता है। स्व. मुंशी अजमेरी ने बुन्देलखण्ड को संगीत-भूमि कहा है। उनके शब्दों में -

ग्राम-गीत ग्रामीण यहाँ मिलकर गाते हैं।
सावन-सैरे, फाग-भजन उनको भाते हैं।।
ठाकुर-द्वारे यहाँ अधिकता से छवि छाजैं।
मन्दिर के अनुरूप जहाँ संगीत-समाजैं।।
यह हरिकीर्तनमयी प्रसिद्ध पुनीत भूमि है।
स्वर-संकलित बुन्देलखण्ड संगीत-भूमि है।

ग्राम गीत अर्थात लोकसंगीत की भूमि बुन्देलखण्ड में ऋतुराज बसन्त के शुभागमन पर उसका अभिनन्दन इस प्रकार किया जाता है -

दिन ललित बसन्ती आन लगे।
हरे पान-पियरान लगे।।
बोलत मोर कोकिला बन में,
आमन मौर दिखान लगे।

बसन्त ऋतु में पीले वस्त्र पहनने का प्रचलन है। हमारी इस परम्परा को दर्शाने हेतु इस बुन्देली गीत में कृष्ण भक्त नायिका अपने प्रियतम का बसन्ती श्रृंगार करके उसे 'बसन्त' बन जाने का आग्रह करते हुए कहती हैं -

मेरौ मन लग रहौ राधेबर सों,
कन्त कौ में आज बसन्त बनै हों।
पीरौइ कटि लहँगा पहरै हौं, पीरी चूनर उड़ैहों
पीरे फू ल मँगा मालिन सौं, पीरे हार पहरौ हों।
कन्त कौ में आज बसन्त ब्रनै हौं।।

लोकगीत के साथ-साथ ग्रामीण महिलाएँ हस्तकला में भी पारंगत रही हैं। एक ओर ठण्ड की ठिठुरन को दूर करने के लिये वे सोरा-सुपेनी (रजाई-गद्दे) आदि की व्यवस्था करती है, तो इसकी ओर ग्रीष्म की तपन को शान्त करने के लिये वे हरे-पीले, सुआपंखी, रंगों के झालर, मोती तथा गो से सुसज्जित पंखे अपने हांथों से बनाती है। हस्तनिर्मित इन पारम्परिक साधनों की जानकारी इस देवी-गीत के माध्यम से लीजिये:-

हंस चालमृग नवल लाड़ली के भुअन कहाँ ?
तेरे भुअन कहाँ, तेरे रमन कहाँ, तेरे मगन कहाँ, अस्थान कहाँ
हंस चाल मृग.............................
काहे कौं चइये भैया सोरा सुपेती
जाड़े कौ चइये भैया सोरा सुपेती
काहे कौ, हां तेरे गर्मी कौं चइये हरे पीरे बिजना
झालर दार बिजना, गोटादार बिजना, सुआपंखी बिजना
मोती बारे बिजना। हंस चाल.........................

पांवस ऋतु में रिमझिन की फुहारों के साथ सावन,
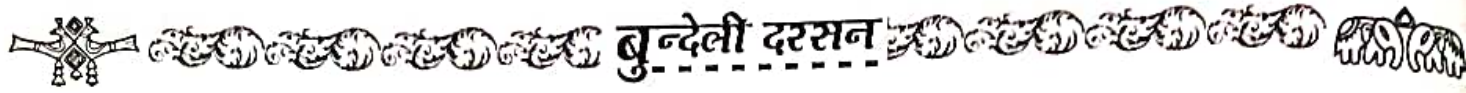
मल्हार, विरहा, कजरी आदि लोकगीतों की स्वर-लहरियाँ तन और मन को भिगो देती है। सावन-तीज के अवसर पर बृषभानु-नन्दिनी राधा से झूला झूलने के लिये किया गया निवेदन दृष्टना है -

झूलन चलौ हिंडोलना बृसभानु नन्दनी।
सॉउन की तीज आई, घनघोर घटा छाई,
मेघन झरीं लगाई, बरै बूंद नन्दनी। झूलन चलौ

सावन में रिमझिम के तरानों के तरानों के साथ बजती हुई बाँसुरी की धुन मन मोह लेती है, भादों में मयूर का नृत्य मन को लुभाता है। हमारी संस्कृति में मातृत्व से नारी-जीवन की पूर्णता या सार्थकता मानी गई है। अर्थात् स्त्री भी तब ही सुहावनी लगती है, जब उसका प्यारा सा बेटा पौर के द्वार पर खेले। प्रस्तुत सैरे नामक जीत में भी यहीं परिलक्षित है -

हाँ हाँ रे, सॉउन सुहानी, अरे मुरली बाजे,
भादो सुहानी मोर।
तिरिया सुहानी अरे तमई लगै,
हो बारौ खेलै पौर के दोर।।

''नारी रूपं पतिव्रतं'' - इस सूत्ती के आधार पर नारी का वास्तविक श्रृंगार उसका पतिव्रत धर्म है। बुन्देलखण्ड की नारी को अपने पति के सामने सोलह श्रृंगार करना रूचिकर है, पति के परदेश-प्रवास में वह सादगीपूर्ण जीवन-यापन करती है। इसीलिये नायिका अपने प्रियतम से सावन में घर में ही रहने का निवेदन इस प्रकार कर ही है -

आसों के सॉउन राजा घर करौ, पर के करियो विदेस
रै हौ तौ ओड़ो हरी चूनरी, जाऔ तौ दक्खिन चीर।
जाऔ तौ राँदौ राजा खीचरी, रै हौ तो राँदों रस खीर।

वर्षा ऋतु के बाद शरद ऋतु के आगमन से नर-नारी आह्लादित होते हैं। यमुना-तट पर श्रीकृष्ण का महारास, राधा और कृष्ण का प्रेम भरा मनुहार भला किसे आकर्षित नहीं करेगा। सुकवि श्री भैयालाल व्यास के बुन्देली गीत में देखिये:-

बरखा के बीते दिना चार,
सरद की ऑउन गई।
चन्दा चमकौ समुन्दर पार,
सरद की ऑउन गई।।
छिटकी घर-घर जोत जुनैया,
जमुना-तट पर कुँवर कन्हैया,
रात के रास कौ एक जनैया,
राधा से रऔ हार। सरद की

इसी प्रकार विभिन्न तीज-त्यौहारों में बुन्देलखंड की संस्कृति की झलक देखी जाती है। चैत्र में वासन्ती नवरात्र पर जन-मानस भक्ति विभोर होकर शक्तिस्वरूपा माँ दुर्गा की आराधना कर आशीर्वाद माँगता है -

मेरी लाज की रखैया मैया तुमई तौ हो।
माया दीन्हीं सम्पत दीन्ही और दीन्हीं संसारी,
एक तौ जगतारिन भैया ऐसौ दीजौ -
सेवा कौ करैया मैया, माया कौ बिलसैया मैया,
पर कौ लगैया मैया तुमई तौ हौ मेरी लाज

चैत्र शुक्ल नवमी को यहाँ राम नवमी का पर्व मनाते है। राम के जन्मोत्सव में राजा दसरथ हांथी, घोड़े, वस्त्राभूषण बड़े उदार मन से दान दिये। देखिये -

जनमें राम अबध चलौ सजनी
राजा दसरथ ने हांती बगसे,
बचौ हाती एक ऐरावत इनमें
राजा दसरथ ने घुड़सा बगसे,
बचौ घुड़ला एक सूरज के रथ में
राजा दसरथ ने सारीं बगसी,
बची सारी एक कौसिल्या के तन में
राजा दसरथ ने मोती बगसे,
बचौ मोती एक कौसिल्या की नथ में
राजा दसरथ ने गाँनों बगसौ,
बचौ ककना एक कौसिल्या के कर में।

वैशाख शुक्ल तृतीया अर्थात् अक्षय तृतीय के दिन लड़कियाँ बट वृक्ष की पूजा करके प्रसाद बांटतीं हैं एक नवविवाहिता की ससुराल से उसके लिबऊआ आकर उसी बरगद के पेड़ के नीचे ठहरे हुए हैं, जहाँ उसे अपनी सखियों

के साथ अकती खेलने जाना है तो वह कह उठती है –

अकती खेलन कैसें जाऊँरी, वर तेरै मेले लिवऊआ
पैले लिवाऊआ मोरे ससुरा जू आए,
ससुरा के संगै ना जाऊँ री। वर तेरे......................

आश्विन माह के कृष्ण पक्ष में बुन्देली वालिकाएँ बेरी के कँटीली डाल को सजाकर किसी तालाव में विसर्जित करने जातीं हैं, इसे मामुलिया कहा जाता है, वे गाती है –

मामुलिया के आगए लिवऊआ,
झमक चली मामुलिया।
ल्याऔ चम्पा चमेली के फूल सजाओं मेरी मामुलिया।
लयाओ घीमा तुरैया के फूल सजाओं मेरी मामुलिया।

इसी के वाद शुक्ल पक्ष में नवरात्र के दिनों में वालिकाएँ सुआव खेलते हुए गीत गातीं हैं –

हिमाचल की कुँवर लाड़ाएँवी,
नारे सुअण गौरा वाई जेरा तोरा नाँय।
तौ नइयो वेटी नौ दिना तारे सुअण माई
दसरे चौ परमा परे।
परना परे मेड़े लड़े, नारे सुअरा माई
हमरे सूरज कहाँ जाए ?

शिवपार्वती को दूब से दुग्धाभिषेक करते हुए यह जीत विभिन्न धुनों में गाया जाता है। इन्हीं दिनों शारदीय नवरात्र में देवी गीत, लंगुरिया आदि मंगलमय गीत गाये जाते हैं –

लगं तौ लागे रे, पिया मोरे कँवार दसैरे आन
सो दुरगा पूजन जाएँ रे हो माय।

इन गीतों में सर्वे भवन्तु सुखिना की भावना समाहित रहती है –

जो जैसौ मांगै रे भवानी मैया ताय तैसौ दीजौ रे,
वेमुख कोऊ न जायरे हो माय।

कार्तिक माह में पूरे एक माह तक व्रम्ह मुहूर्त में किसी नदी या तालाव में स्नान करके व्रत करते हुए गोपियों की भावनाओं से कार्तिक गीत गाये जाते हैं।

ऐसे कपटी स्याम, कुंजन वन छोड़ गए ऊधौ।
जो में होती मोर सखी री,
स्याम लगाते मुकुट सीस विच रहती रे ऊधौ।

माघ में संक्रान्ति पर्व पर या तीर्थ यात्रा के समय बम्मुलिया गीत गाये जाते है।, जो भक्तिपरक, श्रृंगारिक या चेतावनीपूर्ण होते हैं:-

चलन चलन सब कोड़ कहैं, चलवौ हँसी न खेल।
चलवौ साँचौ वाई कौ, जीखों भैरों बुलावें टेर।।
चलत हाँ अरे हो।
चलत हो तोरी वैयाँ रौकें,
तोरी बैयाँ रौकें मैरो लाला
वचाय लइयो लाज रे। चलत हाँ अरे हो ....

फागुन में रंग-गुलाल उड़ाते हुए पारम्परिक सौहार्द्र, हर्ष, उल्लास से भरे होली गीत, फागें आदि गाई जाती हैं –

होरी हो व्रजराज दुलारे
भौत दिनन सों तुम मनमोहर। फागहि फाग पुकारे।
आज देख लेओ सैल फाग कौ, पिचकारिन के फुआरे
अरे हाँ, पिचकारिन के फुआरे, चले जहाँ कुमकुमा न्यारे
होरी हो ....

जिनके प्रियतम, रंगभरी होली में परदेश में हों, उनके लिये होली का कोई महत्व नहीं। वह होली चाहे आज जले या कल। विप्रलम्भ श्रृंगार रस की इस होली में विरहिणी के भाव देखिये –

मेरौ मदनमोहन मौसें आज मिलौ होरी आज जरे चाय काल फागुन में परदेश सिधारे सौ ऐसौ निठुर मोये से नहीं डरे होरी दिन नई चैन रात नई दिदिया सो तड़प-तड़प सारी रैन कटै होरी

इस प्रकार है कह सकते है कि ऋतुओं तीज त्यौहार, जन्म से मृत्यु तक विभिन्न संस्कार पारिवारिक सामाजिक और राष्ट्रीय संबंधों में विश्वबन्धुत्व भावना का बोध कराने वाले ऐसे अनेक लोकगीत हैं। जो हमारी बुन्देलखण्ड की संस्कृति के संवाहक है। इनका क्षेत्र अति विस्तृत है। समयाभाव से सबका उल्लेख करना असम्भव है।
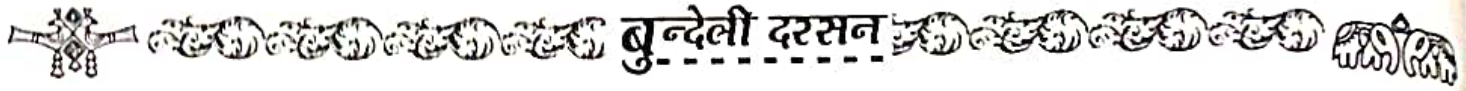
पहले के समय में इन गीतों को हम अपने संयुक्त परिवार में रहकर वयोवृद्ध महिलाओं जैसे नानी, दारी, माँ, बुआ, मौसी, चाची, भावी आदि से दिन प्रतिदिन सुनते रहते थे। जैसे घर में पुत्र जन्म पर सोहर, पूजन आदि के गीत, विवाह के मांगलिक अवसर पर बन्ना, बन्नी, साजन, दादरा, गारी आदि गाते हुये संयुक्त परिवारों का वातावरण भी संगीतमय रहता था। परिवार के सभी सदस्यों के कार्यों का विभाजन पुत्र जन्म पर इस प्रकार रहता था। कि सभी को यथायोग्य मान-सम्मान दिया जाए, जैसे कि लोकगीत में हैं –

सासो जो आवें, चरूआ चरावें,
जिठनी जो आवे, लड्डुआ वंदावें
बहुआ जो आवे थारी सजावें,
नंनदी जो आवे सॉतियां धरावे
देवर जो आवें बंसी बजावें
सखियाँ जो आवें, मंगल गबावें। आदि.............

किन्तु दुर्भाग्य है कि आज संयुक्त परिवार का ह्रास हो गया है। पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित होकर हम अपने सीमित परिवार में सिमट गए हैं। मिल-जुलकर काम करना, वैरचारिक सामंजस्य तथा सहिष्णुता वयोवृद्धों का सम्मन आदि संस्कार हमारी पीढ़ी को कहाँ से प्राप्त होगें, जो हमने लोकगीतों के माध्यम से सीखे हैं। पहले महिलाओं द्वारा घरों में चक्की पीसते समय, तथा स्त्री-पुरूषों द्वारा खेतों में फसल बोते, काटते समय लोकगीत गूँजता था, जो काम समय साध्य और श्रम साध्य थे, आज वे सब धन-साध्य होकर मशीनों से हो रहे। टी.वी. आदि के अधिक प्रभाव से जनसाधारण की रूचि पाश्चात्य संगीत की ओर वढ़ रही है और हम अपनी संस्कृति को भूल रहे हैं। वृद्धजनों की उपेक्षा इसी का दुष्परिणाम है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है –

''हम कौन थे, क्या हो गये है। और क्या होगें अभी?
आओ, विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।।

भारतीय संस्कृति प्राचीन समय में सर्वश्रेष्ठ थी, जैसा कि किसी कवि ने लिखा है –

हमने ही इसे दिया था, सांस्कृतिक उच्च सिंहासन,
माँ जिस पर बैठी सुख से करती थी जग का शासन।
अब कालचक्र की गति से वह दूर गया सिंहासन।

इसलिए आज के युग में विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय तथा सभी छोटी-बड़ी संगीत संस्थाओं में बुन्देली लोक-संगीत का प्रशिक्षण होना चाहिये साथ ही, समय की पुकार, सामाजिक परिस्थिति शासन की नीति, विश्वबन्धुत्व तथा सदाचार परक लेखन होना चाहिये। अपनी संस्कृति के संवर्द्धन में हमें तन-मन-धन से जुट जाना चाहिये-

अपना तन-मन-धन देकर हम करें पुनः संस्थापन।

क्योंकि बुन्देलखण्ड का साहित्य, संगीत तथा संस्कृति हमारी अमूल्य धरोहर है।

केशव कुल, 352, नानकगंज,
सीपरी बाजार, झाँसी
फोन - 0510-2361479

बुंदेली ललित निबंध:-

ऑंगना में बरसत जुन्हैया

- आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल

दिवारी आठ दिना बाद, आधौ चन्दा आसमान में खिल रऔ। ठाकुर की बारी की फूलन की नौनी बास महक रई, मन कछू अनमनो हो रऔ। दूर से धुन आरई है मोरे अँगना में बरसत जुन्हैया

यार तुम देखत काय नईयाँ।

पाछे मुरक के देखो, तो ऊपर दिखाने बात जैसे चमकत दमकत तीन तरा। जौहैं सिरबन कुमार की बँहगी। ई मेबे अपने मताईबाप को तीरथ कराउते। पै हमे तो सुनने ते बेई मीठे बोल, सो नई सुन परे वो मनमार कै भीतर लौटे, ओढ़ कै पर रए। मन है बड़ौ विचित्र। मन चाहै तौ बाँध देबै, मान चाहै तो छोर देवै। मन आँगे दूर दूरनों चलौ जाय मन पाछे जाय घूम जाय। पाँच - पचास बरसन की बातन कौ ऐसे दिखादेवै जैसे वे अबै आज की होंय। और बे बाते जो कभऊँ भई नईयाँ उनकौ रचके आँखन सामे ठाड़ौ कर देय। मन नईयाँ काल के बस में। बड़ी मिहमा है मन की। आँखे मिची और मन ने अपनो स्वाँग भरो।

सत्तर बहत्तर साल पैले अपने गाँव के बड़े ताल पै हम ठाड़े हैं। वैजनाथ कक्का दिवारी गा रए है।

''भैंस बियाँनी ओड़छा पड़ा हुसंगाबाद।

लगवइया है कालपी, चपिया रेबा पर''।।

भैंस ओड़छा में वियानी है। हुसंगाबाद नो पड़ा है। भैंस को दूध निकारवे वारौ लगवइया काल्पी में है। नर्वदाजू के वापार है चपिया। जा है कठिन बात। जा कौ होने है समाधान। जानकारन के मत अलग-अलग। कछू कत है के जा दिवारी में अपने बुंदेलखण्ड की हदद बताई गई है। और कछू दूसरे कहत हैं दिवारी सो दिवारी मतलब से का मतलब? मतलब है तो है दिवारी के खेल से। एसे जितेक मौ उतेक बाते जितनी ढपकी उतने राग। काहै जा दिवारी को मतलब का है जाकौ इसाँरो जो वई समझपरौतौ। अब आरऔ कछू कछू समझ में। जा पक्की सीजी उमर में तनक समाधान भऔ सो मन को मिलौ नैक चैन। रचलऔ संसार उड़न लगौ अकास।

मन कै रऔ - दिवारी वारे कक्का वैजनाथ पढ़े गुने तौ है नइयाँ ? सो का होत जासै? कक्का है सूदे साँचे। कक्का में नइयाँ नेकउ छल छिददुर छिपाव दुराव। वैजनाथ कक्का नें करी जिन्दगी भर छिरयाँ बुकरियाँ भेड़े और मिढ़कन की सेवा। इनकौ हतौ अपने काम से काम , जो मिलौ वासे राम राम।

सो ऐसे आदमी कौ का होने सो सुनकी। ग्यानी महाविग्यानी मुनी जागवल्क (याज्ञय वल्क्य) महाराज ललकार के आए है:-

सुनो बेटा। बुकरिया की देह कौ साधारन न जानो। बुकरिया बनी है तपस्या से। जा है अगिन मई। परजापतत महाराज ने जब जा सृष्टी बनाई तब उनकी आँखन से जो तेज निकरौतो बासें बनो है बुकरिया कौ सरीर। सब पसुअन को रूप है जाके भीतर। जा है देव वानी कौ रूप - ' वाचो जन

वाग का अज

अग्नियो वा अज

'तस्याक्षिभ्यामेव तेजाअस्रवत।

सोअज: पशुरभवद धूम:।

सो ऐसी है जा छिरिया बुकरिया। और भेड़ वा सोउ कौनऊँ ऐसौ बेसौ पसू नइयाँ। भेड़ साक्षात देवता है। सीधौ साँचौ देवता है भेड़। भेड़ धरती माता कौ रूप है। देवतन के महाराजा बरून देवता और देवतन के चतुर कारीगर त्वष्ठा देवता की परमप्यारी है भेड़ :-

- अवि: वै नाम देवता ऋतेनास्ते परीवृता

- वारूणी च त्वाष्ट्री च अवि:

– इयं पृथिवी वा अवि: इयम

सो ऐसी है भेड़। ऐसी छिरियाँ और भेड़न की सेवा कर बे वारे हं कक्का बैजनाथ। सो कक्का नै जाने अन जाने करी है अगिन की सेवा परजापति महराज के तेज की उपासना, देववानी के रूप की खुसमद। उनने करी है धरती माता की सेवा। सौ बैजनाथ कक्का कौ सरीर होगऔ देवतन कौ घर। उनकी बानी हो गई देववानी। उनके सुर में ईसुर कौसुर बजरऔ है। हमाऔ मन सुनरऔ और गुनरऔ है।

ग्यानी जन बताउत है – सपनों विकास है देखवे वारे के भीतर बैठे जीव के ज्ञान कौ सपने उ ग्यान को फैलाव है खेल चल रऔतो सो अब पर्दा बदलौ सीन बदल गऔ।

बेतवन्ती के किनारे तुगारन्न में बड़ी आवाजाई चलरई है डंडकमंडल घाटी रिसी मुनी सब तरफदिखाई पर रए है एक रिसी से कौनँ लरका नै पूंछ दऔ – महाराज इतै का हो रऔ? रिसी जू बताउन लगे है ''सुनौ बेटा ! इतै जौ ''तुगारन्न'' है ज बिन में सारस्वत रिसी ने रिसियन कों बदे पढ़ायेते। कछू दिनन में उन सबई रिषियन को वे वेद बिसर गए।

वेद है धरम की मूर। जर–मूर मिट जायं तो धरम कैसे बचे सो अंगरा रिसी जू के बंस के एक रिषी ने विधी से ओंकार कौ उच्चारन करौ। उननें करौ उच्चारन सो उन सब रिसीयन कौ भूले बिसरे वे वेद सबई सुमरन हो गए। सब ने चारउ वेदन को खूब ऊचे सुर से पाठ करौ। बड़ी आनंद भऔ। इकट्टी सब को सुर ईसुर नौ पौंचो ब्रम्हा जू, नारान, महाराज, भोले शंकर अगिन, बरून और सबई बड़े देवता रिषी उतइ आ गए। ब्रम्हा जू ने ''भिरगू'' (भृगु) रिषी को आग्या दई जौ खुसी सदा जा तुंगारन में एसंइ यै बनी रवै जा के लाने बेटा तुम और अंगरा रिषी की संतानें मिल जुर कै एक महाजग्ग इतैइजा तुंगारन्न बन में कराव् जा कहकें बेउर सब देवता तो अपने अपने ठौर को चले गए ते तभई। अब हो र ओ है वौ महाजग्ग ! देखौ वे ऊचे आसन मै बिराजे है महाराज 'भिरगू' रिषी। उनके चरन नौ बेठै है अंगरा रिषी के सोरा ब्रम्हचारी बेटा अद्‌भुत है। जो जग्ग जा में पूरौ वेद को बसंक कुल एक संगै बिराजौ है दरसन करौ इनके। रिषी जू आँगें बढ़ गए।

रिषीयन की हम देख रए हैं। उनै, सुन रए हैं। उनके मन्तरन की धुन गूंज रए है – ओंकार की विधी से उच्चारन भौ तौ सो भूली बिसरी वेदवानी की सुमरन हो आय तौ। ओंकार की विधी से उच्चारन सबौंनाद की धुन की गूंजन है। सबई धुनियन के उच्चारनन की मूल बीजभूत है जा। कौनऊ वर्न शब्द धुन अलग टूटी नइयां जा में। सबकौ रस है जा एक बूंद में जौ वेद कौ बीज है। जा धुन कौ जो लेत है सहारौ सो सांद – अभय अजर – अमर लोक पालेत है।

ओंकारेणै वायतनेन आन्वेति विद्वान यत शांत अजर अमृत अभय परंचेति ओंकार है परब्रमी कौ रूप जा है पर विधा।

जा है पंडतन की भाखा में अव्यक्त वाक जा है गूढ़ भेद के जानवे वारे रिषियन की भाखा में गौरी। हमाई तुमाई भाषा में भैंस। जा की मिहमा वेद बरवानै। वे कह रए जा है बरून के लोक की प्रान–शक्ति (प्राणशक्ति) जा है गौरी। गौर का अरथ है भैंसा वेद की संसकिरत (संस्कृत) में गौर है 'महिष' और 'गौरी' है 'महिषी'। महिष जौन बात से बनौ है वा को मतलब है पूजा कर वौ महिष को अर्थ भऔ पूज्य, पूजा के जोग, महान और महिषी कौ मतलब भओं पूज्यनीये। गौरी महिषी भैंस कौ प्यारौ है जल जैसो गौ कौ प्यारो है प्रकाश सो गौरी भैंस प्यारी है बरून देवता कौं और गौ (गईयाँ) प्यारी है इन्दु देवता कौ। सो वेद की विद्या में जा सृष्टी की पैली अवस्था की प्रतीक है गौरी और बाद की दूसरी अवस्था की प्रतीक है गो सो वानी को पैलों रूप है गौरी और दूसरों रूप है। गौ गौरी है बानी कौ अव्यक्त रूप महानाद ओंकार है वेद कौ बीज है। ई को (इसारो) प्रतीक है भैंस (गौरी)

''बेटा भैंस या भैंसा को ऐसौ ऊसौ न जानौ। बड़ी महिमा हैं जा की। जाने जानी बानै मानी और बखानी। सुनौ जे अनमोल बोल महाँ बलवान भैसा ने विश्नू जू भगवान के हॉत से निचौरोगओ सोमरस पियौ है ऐसो पियो जैसौ ऊनै सोचौं तो विचारौ तो। सौ ऐसो पियौ सोमरस भैंसा नै कै ऊके

प्रान मन सबई पूरन रूप से तिरपत हो गए है।'' जौ गीत गारए है रिषी गित्समदः-

त्रिक दुकेपु महिषो यवापिरं तुविष्मस तृपव सोमम अपिबत्

विष्णुनासुतं यथावशत...............

जिनकी धुन आज नौ भोपाल के भोजपुर से लेके सावरमती नो गूज रई है। और जे है रतै बे रिषी जो देवतन दानबन-दोउन के गर्ज परै के गुरू है। त्रिसिरा जू महाराजा जिनके तीन सिर तीन मौझ एक मौसे पियतजे दूध, दूसरे से सोमरस और तीसरे से पियतजे मदरा-मतलब जौ के मानुस, देवता और राकछस तीनऊ इनैसमान। ऐसे ज्ञानी समक्षसी रिषी महाराज बता रए है भैसां है अगिन कौ बौ रूप जो जल में पैदा होत है उतै बढ़त है फिर रँभात है बैल जैसो शब्द करत है और ऊपर ऊचे सूरज सौ प्रकाश करत है और धरनी में अगिन रूप में वास करत है ऐसौ जौ महां ग्यान कौ सरूप प्रान-रूप अगिन भैसा कौ रूप। समझौ तौ जानौ

''प्र केतुना वृहता याति अग्नि या रोदसी वृषभो रो रवीति।

दिवः चिंदता उपमा उपानट् उपांउपस्थे महिषो ववर्धा''

एक और भ्रिगूवंस के महाज्ञानी महाराज ने तौ भौतई साफ साफ बात सुनाई है जिनकी बुद्धि शुद्ध होत है बेई ज्ञानी जन जानत है भैंसा की बानी में देव वानी की परम जोत कौ, दूसरें का जानें ?

'जानन्त रूपं अकृपंत विप्राः मृगस्थ घोषं महिषस्थ हि ग्मन्'

ई बात को जानत ते अबै के ग्याने सुर महाराज (संत ज्ञानेश्वर)। जा जमोन में उनने बुल बायते भैंस के मौसें वेद और बड़े बड़े पग्गड़ धारी, घमंडी पड़तन को सुनवायते सौ जौन तुमाइ भैंस ओड़छा में बियानीती सो बा कौ मतलब अब तौ तुमें समझ में आगओ हू है इत्ती बात कहकें वे महाराज सपने में अंर्तध्यानि हो गए।

अब हम समझ रए है भैस की बानी को भैस कौं।

भैंस बियानी है ओड़छे में। ओड़छा के तुंगारन्न में बेदवानी प्रगटी है तभई तौ राम राजा सरकार साकेत छोड़ कै कंकरीली पथरीली भूम में पधारे है इतै। इमरावती से जादां सुंदर अयुध्या सी नगरी सतवंती सरजू जी कौ किनारौ छोड़ रानी गनेस कुंवर के संगै बे चले आये और ऐसे आये के कलजुगी गंगा बेतवन्ती के तीर पै रम गए रामराजा। जो हतौ पुरानौ पुन्न जा भूम कौ इते भैंस वियानी ती इतै वेद वानी फिर से प्रिकटी ती भूले बिसरे बेदन कौ फिर सैं दूसरें जनम भौ तो इतैई जा बात कौ समाधान मिलौ मन महाराज कौ सो उननै लगाइँ कुलाचै।

ग्यानी कहत है। मन अद्भुत है मन दिव्व जोत है मन देवता है और मन राक्षस है तरा तरा के रूप धर लेत है मन पै खुद मन कौ कौनऊ रूप नइयां मन चाहै तो भगवान से भेंट करा देवै और चाहें तौ नरक में ढकेल देवै। मन हलकौ भऔ सो उठौ ऊपर पौचौ बेतवन्ती की जनम भूम में परियाम परवत के ऊपर बहेड़ा गांव की झिरी में।

कालपी बोर महाराज व्यास जू ने अपने एक 'पुरान' में जा बात कही है के बेतवन्ती साधारन नदिया नईयां। बेतवन्ती है देवतन के राजा धिराज बरून देवता की महारानी। बेतवन्ती ने एक समै खुद बताऔ है

अहं जलपते पत्नी वरूणस्य महात्मनः

उननै कहीं है के हम है महात्मा बरून देवता की घरवारी हमाव जन्म कैसे भव तौ सो सुनौ - एक समय की बात है वृत्रसुर नाव को असुर बड़ों प्रतापी हतौ ऊ असुर ने परियात्र पहार के ऊपर एक-बहुत भौत गैरो कुआ खौदो सो ऊ कुआ से बड़े-बड़े पापन कौ विनाश कर वेबारी में बेतवन्ती निकरी हो। (प्रगट भई है)

''वृत्रेणैव कृतो कूपो महागंभीर संज्ञकः।

कृपात्सा निसृता देवी महापापौध नासिनी।।

जितै बो कुआ खौदो गयो तो उतै हम पौंच गये। हमने अंजुरी भर बेतवनती को मीठो नीर अंचओं। मन निरपत हो गओ। मन है चिरैया सौ पियै चौच भर नीर चिरैया सागर से का करैने। इमरत घूट गरे से नीचे उतरी और मन फिर ऊपर उड़ों। मन आ गओ उते जितै राजा भोज महाराज ने अपने

ताल किनारे बेतवन्ती के तट पै महादेव जू कौ कभऊँ मंदिर बनवाव तौ।

भोजपुर में मन कौ सुख ओर दुखः दोउ बराबर हो गए। सुख भऔ भोलाशंकर के दरसन-परसन कौ दु:ख भऔ टूटे ताल को बेहाल देखकै। जितै कोनऊ समय राजा भोज कौ इत्तौ बड़ौ ताल हतौ। ताल की कीरत दूर दूर नौ फैली ती। कनातं कई जात ती-ताल है भोपाल ताल और है तलईयां। सौ कौनऊ हो संग साहे कौ भई जरन। काय चलै राजा भोज को नाव। सो ऊ हुसंगसाह नै जो बहाबूदी कौ काम करौ तल टोर दऊ सो ताल टूट गओ सालन पानी बहौ जरन बरन से करौ गऔ जो काम सो पोत गओ हुसंगसाह के मॉथे पै कलंक की करौंच सो जो भऔ दु:ख जब दु:ख सुख दोउ बराबर हो जात तौ मन अपने निजभाव में पौंच जात सांत हो जात सो मन हो गऔ सांत।

भारी आबाज ऊँचों सुर सुना परौ पारियात्र पहार की पहारीयन में ऊको दोहरादओं कौउ कह रऔ है सुनो सुनो हमाये मन वासना को जो कछु बुरो धुंआ हतौ पैलै वो अब तपस्या से शांत हो गऔ। सबई बराबर दिखान लगें है हमें। हम हैं गौतम:-

''गोदमो दमतोअधूमो अदमस्ते सर्वदर्शनात्। विद्वी मांगोतमम्''

सुनी हमने सो हम आंनद से भर गऐ। दीर्घतमा रिषी के बेटा, बामदेव, नोधा, और सतानंद जू के पिता अहिल्या माई के पति ऐसे रिषी महाराज गौतम जू जिनकी बिनती करत बड़े बड़े देवता। उनकौ हम सुन रए है धन्न है हमाए भाग्ग वे रिषी महाराज बोले जा रए मधुबाता ऋतायते, मधुक्षरन्ति जा हवा जो पानी जे बिरछा जे बिरव जे संजा, जे भुनसारे, जे रातें, जे दिन, जै धरनी, जौ आकाश, जै सूरज, जै चंदा, जै पहार, जै पहरिया और जे नदियां जे नारे सबई अमृत से मीठे हो जात हे ऊकै लाने जो होवै छल छिदुर से दूर जौ होवै सूदौ साचौ। हम गुन रऐ ते गौतम के वचन। इतैकइ में दूसरौ सुर सुना परौ वे कै रए हम जानतै है देवतन के सब जनमन कौ भेद।

आवेंद अहं देवाना जनिमानि विश्वा'' हमनें जा बात सीखी है अपने इनई पिताजू से तन्मापितु गोतमात अन्वियाद।

तुम हो जाव सूधे, साँचे तौ तुमाये मन में ऐसी आनंद की हिलौरे उठ है जैसी हमाय मन मे उठ रई है हम समझ गये है जै है गौतम रिषी के बेटा ज्ञानीयन के सिर मौर आतम ज्ञानी बामदेव और इतैइ हतौ गौतम के पिताजू महाराज दीर्घतमा रिषी के आसरम जिनने बताइती सौ बातन की एक बात। वेद को अक्षर है परम लोक में। उतैई ऊमें बसत हे सबरे देवता। जो जानत है जा बात, सो बौऊ बसत है उपरम लोक में। जो नँई जानत जा बात, बौ जानत रऔ सबई वेद मंत्र कछु नँई होने ऊकौ। जा है वा गुपत बात जो बताई ती गौतम के पिता महाराज दीर्घतमा नैं।

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन यास्मिन देवा अधिविश्वे निषेदः।

यस्तन्त वेद किमृचा करिष्मति य इतद्विदुस्त इने समासते।।

जा बात में वेद को जी आरवर (अक्षर) है ऊकौ मतलब है ओंकार वेद कौ बीज। परा। परावानी। उद्गीथ। रिषी ईकों ईसारे से कत है गौरी - भैंस। अब मन भैंस की मिहमा में बिचरन लगौ। पारियात्र की पहारियॉ पहार मौन समरथन करन लगे। वे कैह रए इतैजानौ-इतैजानो।

गौतम रिषी ने बेद के जो मंत्र गाये ते, बाद कौ चलके व्यास जू ने इनई मन्त्रन में साम बेद संधिता (संहिता) की परपूरनता मानी है। और जिनई पहार पहारियन के बीच दीर्घतमा (गौतम जू के पिता) महाराज ने जौन मंत्रन को उच्चारन करौ तो उनसे बाज सेनी संहिता की पूरनता भई है इतैई इनई पारियात्र की पहारियन में इनई के कुल वंस में भये रिषी संवनन महाराज उनने जो मन्त्र पढ़े ते ऊचे सुर में उनसे व्यास जू महाराज ने रिगबेद संहिता कौ समापन करौ है। ऐसे रिषियन को कुलबंस इतै हतौ। बोई तौ मूल बेद वानी कौ बेटा कहाव। ओड़छा में जो भैस वियानी ती ऊकौ पड़ा जोई तो कहौ गऔ है। जोई कुल बंस है ऊ ओड़छा को भैंस को पडा। महिष - अगिन कौ सरूप। रिषी जिनने बेद मन्त्रन कौ

अरथ देखौं तो जिनने पियोतो वो इमरतरस जे हो गये सब अगिन रूप। उनकौ कहौ गऔ है महिष पड़ा - भैंसा। वेदन में पूरे पूरे जजुर्वेद कौ जानौ तौ याज्ञय वल्क्य (जागवल्क) मुनी नै। सो बे कैरए है सुनवौ हाय ऋषय: वै प्राणा: ऋषि प्राण है प्राणा: वै महिषा रिषी प्राण रूप है प्रान महिष रूप है और अग्नि महिष है सीधी बात जा है। के रिषी अगिन रूप प्रानरूप पड़ा कहे जात है। पुराने मध्यप्रदेश के हिरदय में जेजाक मुक्ति जग्ग भूम में जिनकौ एक पुरानौ क्षेत्र है पारियंत्र के पहार पहारियॉ। उतैइ विचरौ तो जो गौतम, दीरथ नमा, नामदेव नोधा सवनन कौ कुल वंश।

एक पुरानी बात धियान में आरई एक हते राजा ययाति उनके दो रानी देवयानी और शर्मिष्ठा। वड़ौ राज हतौ उनको उनकी राजधानी हती प्रतिष्ठानपुर उन राजा ने देवयानी के वेदायदु को दऔ चम्वल वेतवन्ती और केन से सीचौ (चमावती वे वेत्रवती शुक्तिमती से सिंचित) प्रदेश कौराज जौ है पुरानौ बुंदेलखण्ड जे जाकमुक्ति। यद कैभए दो वेटा उनमें हतौ बहुत प्रतापीं सहस्तजित ऊकी संतान कहाई हैहय। हैहय महिष्मन्त नै मांधाता राजरिषी के बेटा मुचुकन्द कौ हराऔ और उनके किले पै ऊँकारेसुर में अपनी पताका फेहरा दई। जा तराँ से बुन्देलखण्ड के एक वेटा नै नर्मदा जू के पार जेजाक भूम गाड दई ती धुजा। वौ बेटा हतौ भैंसा वालौ राजा महान पूजनीय राजा महिष्मन्त।

अव रई वात चपिया की। चपिया तौ अवैनो नर्वदा जू के पार ई हैं। वेद कौरस भरवे कौ वासन है चपिया। चपिया है वेद कौ भाष्य वेद में जो वात वताई गई हे ऊको आसान भाषा में समझावौं है भाष्य। अवैनो वेद के सवरे भाष्य (रेवा) नर्वदा जू के ऊपर भये हे। महाराज दुर्ग स्कन्दस्वामी महेश्वर उद्‌गीथ वररूचि वेंकट, माधव, आत्मानन्द, सायण दयानन्द और कपाली शास्त्री जू ने रिगवेद पै 'भाष्य' लिखे है इनमें से एकऊ नर्वदा जू के ईसान की नइयाँ। सो चपिया भई नर्वदाजू के पास।

हॉं लगवैया है इतै। कालपी के व्यास जू महाराज ने लिखे है अठारा पुरान और महाभारत। महाभारत के पाँचमें वेद कई जात हे। के जो बात महाभारत में नइयाँ बा कहूँ अपने भारत देस मे नइयाँ (यन्नभारते तन्नभारते) अपनें पुरानें ज्ञान कौ इतहासहै महाभारत में। और पुरान वेद में कही गईं बातन को सीधे सीधे से किस्सा कहानियन के जरिये से और कैईतरा से समझाइस दई पुरानन नें। सो बिना महाभारत और पुरानन की सहायता के वेद कौ अरथ लगाई नईं सकत है। भैंस के ईसे लगवइया भये महाराज कालपीवारे व्यास जू।

सो कक्का बैजनाथ की लिखीं में इन्हें लिखाने बुंदेलखंड की महिमा। गौरी - भैंस - की महिमा। वे कै गए हैं।

भैंस वियानी ओड़छा पड़ा हुसंगाबाद।
लगवैया है कालपी चपिया रेवा पार।।

ओड़छा में वेदवानी कौ पुनरजनम भयौ जा वेदवानी कौ रस जिनने जानो है वौ निर्विकुल पारियात्र के पहार पहारियन में विचर रऔ है। जौंकौ लगवैया है इतै कालपी में और चपिया है नर्वदा जू के कगार। जौ है अपनी भूम कौ महत्तम। अपने पुरखन की बानी कौ निहना। बुंदेलखण्ड के जस की जुन्हैया और सबसे ऊपर ओड़छा की महिमा कौ उजयारौ। वोई उजयारेकौ हेर है जौंके नैनन में हू है नौनी जोत।

तौरे ऑंगन में बरसत जुन्हैया यार तुम हेरत काय नइयॉं। अब सुर ऊचौ हतौ सौ ऑंख खुलगई नींद टूट गई। सॉंचऊ नींद टूट गई है। उर ऑंख खुल गई है।

- नूतन बिहार कालोनी
ढोंगा, टीकमगढ़ (म.प्र.)
मो.09406783980

सुरहिन की लोक गाथा
(मानवीय भावनाओं का प्रतीक)

– डॉ. दुर्गेश दीक्षित

बुंदेलखण्ड का सांस्कृतिक स्वरूप स्वर्णिम और लोक-कल्याणकारी रहा है। यहाँ के पर्वों, त्यौहारों, पारिवारिक संबंधों में आत्मीयता और अपनापन दिखाई देता है। प्रेम, सहानुभूति, करूणा और परोपकार-प्रियता मनुष्य के अतिरिक्त पशु-पक्षियों में भी दिखाई देती है। बाबा तुलसी भी कह गये हैं -

'सर्वे भवन्तु सुखिन:, सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मां कष्चिद् दुखभाग भवेत्।

बुंदेलखण्ड का हर पर्व इस पुनीत भावना से भरा पड़ा है। किन्तु नव-रात्रि का पर्व विशेष महत्वपूर्ण हैं। चैत्र और क्वांर मास में नौ दिन तक आदि शक्ति माँ भवानी की पूजा-आराधना की सारे बुंदेलखण्ड में धूम रहती है। इस अवसर पर माँ की भक्ति भावना के बुंदेली गीत गाये जाते हैं। जिनमें 'जगदेव कौ पवारो' बहुत प्रसिद्ध है। नवरात्रि के अवसर पर बुन्देलीवास नर-नारी भक्ति भावना से लोकवाद्यों के साथ पवारे का गायन किया करते हैं। पवारवंशीय राजा जगदेव देवी जी का परम भक्त था। उसने आदिशक्ति की आराधना करते-करते उनके चरणों में अपना सिर काटकर चढ़ा दिया था और उनकी कृपा से जगदेव के धड़ में से नवीन सिर उत्पन्न हो गया और वह जीवित हो कर खड़ा हो गया था। ऐसी होती है आदिशक्ति की महान कृपा। इस अवसर पर बुंदेलखण्ड के भक्त-गण सुरहिन लोक गाथा का गायन किया करते हैं। जिसमें संबंध भावना का भलीभाँति निर्वाह हुआ है। हिंसक पशु में भी मानवोचित गुण प्रदर्शित किये गये हैं जिसमें गाथाकार की कलात्मकता दिखाई दे रही है।

सुरहिन की गाथा समाज में अंदर तक जुड़ी चली आ रही है। जिसमें बुंदेली का सांस्कृतिक स्वरूप प्रतिबिम्बित हो रहा है। गाय हमारी समस्त सांस्कृतिक अवधारणाओं का प्रतीक है। गाय हमारी माता, रक्षक और मोक्षदायिनी है। उसके अमृतमय दुग्ध हो जन-जन का पोषण हो रहा है। भगवान श्री कृष्ण को गोपाल की संज्ञा दी गई है। भारतीय समाज गाय के अनंत उपकारों को कभी भूल नहीं सकता। यह मनोवांछित फल प्रदान करने वाली कामधेनु है। इसमें सभी देवताओं का निवास है। इसमें आसुरी-प्रवृत्तियों को शमन करने की क्षमता विद्यमान है। यह भू का भार हरण करने के लिए सर्वशक्तिमान ईश्वर के अवतार की प्रार्थना करती है। साहित्यिक दृष्टि से यह वात्सल्य, रस का उत्तम उदाहरण है। एक माता के मन में अपनी संतान के प्रति कितना स्नेह होता है यह इस लोकगाथा से स्पष्ट हो रहा है। इसमें कौटुम्बिक-भावना और संबंधों का विधिवत् निर्वाह किया जा रहा है। स्वार्थ-परायणता और अह-भावना के कारण आज सारे परिवार विखंडित हो रहे है।। नैतिक मूल्यों का क्षरण हो रहा है। हर परिवार में लंकाकांड की स्थिति निर्मित हो रही है। उस स्थिति को कविवर वियोगी हरि स्पष्ट कर चुके हैं -

'भरो विभीषण-पुंजते, यह भारत ब्रम्हांड।
क्यों न होय गृह-भेदते घर-घर लंकाकांड।'

सब अपनी-अपनी धुन में मस्त है। कोई किसी की सुनने वाला नहीं है। बाबा तुलसी के शब्दों में -

'पर उपदेश कुशल बहुतेरे, ते आचरहिंनर न घनेरे'

यहाँ यह संस्कृत की उक्ति सत्य-सिद्ध हो रही है -

'पय: पानं भुजंगानां, केवलं विष-वर्धनम।
मूर्खाणां उपदेशाय क्रोधाय न शांतये।'

आज इस विषम् परिस्थिति और विषाक्त-वातावरण में इस लोक-गाथा का शुभ संदेश जन-जन तक प्रेषित करना आवश्यक है। साहित्यिक दृष्टि से इस गाथा में मूल्यवान

सामग्री समाहित है, सूर्योदय होते ही सुरहिन (गाय) अपने बछड़े को दूध पिलाकर कजरी वन में चरने के लिए निकल जाती है।

'दिन की ऊँगन किरन की फूटन,
सुरहिन वन खाँ जाय हो माय।
इक वन चाली सुरहिन दूजी वन चाली,
जीते वन पौची जाय हो माय।
कजरी वन चंदन वारौ विरछा,
जा सुरहिन मौं डारौ हो माय।'

सुरहिन प्रथम और द्वितीय जंगल को पार करके तीसरे जंगल में प्रवेश करती है। यह बहुत ही सघन और चंदन के वृक्षों से हरा भरा जंगल था। वह कुछ देर स्थित होकर ज्यों ही चरने के लिए घास में मुँह डालती है। उसे देखते ही सिंह अपने शिकार पर झपट कर गर्जना करने लगता है -

'इक मौ घालौ सुरहिन दूजौ मौ घालौ,
तीजे मौ सिंह हुंकारों हो माय।
अब की चूक बगस मोरे सिंघा,
घर बछरा नादान हो माय।'

गाय सिंह को शिकार की मुद्रा में देखकर निवेदन करती है कि हे सिंह दादा, अब की बार आप मुझे क्षमा कर दीजिए। मैं अपने छोटे से नादान बछड़े को घर में छोड़कर आई हूँ, मैं उसे दूध पिलाकर फिर लौटकर आपके पास आ जाऊँगी। फिर आप मुझे खाकर अपनी क्षुधा शांत कर लेना। सिंह बोला कि मै तेरे ऊपर कैंसे विश्वास करूँ। मुझे अपना शिकार छोड़कर कहीं पछताना न पड़े। तेरी वचन बद्धता का साक्षी कौन है ?

'को है साखी तोरों सुरहिन गइया।

सुनते ही सुरहिन कह उठती है -

:चंदा-सूरज मोरे लागें लगनियां,
वन के बिरछा जमान हो माय।

सिंह तुरन्त उत्तर देता है - कि अरे चंद्र और सूर्य के तो उदय और अस्त होने का क्रम है और वृक्ष मुरझा जाते हैं। ऐसी स्थिति में मुझे उनका साक्ष्य स्वीकार नहीं है -

'चंदा-सूरज दौड़, ऊगें अथैवें,
वन-विरछा मुरझांय हो माय।'

अंत में सुरहिन शेष नाग और धरती माता का सक्ष्य प्रस्तुत करती है जो सदैव विद्यमान रहते हैं -

'धरती के वासुक मोरे लागें लगनियां,
धरती मोरी जमान हो माय।'

सिंह बासुकि नाग और धरती के साक्ष्य को स्वीकार करके सुरहिन को मुक्त कर देता है। सुरहिन अपनें घर की ओर चल देती है -

'इक वन चाली सुरहिन, दूजे वन चाली,
तीजे में बगर रैंभानी हो माय।
वन की हिरानी, सुरहिन बगरन आई,
बछरें राँभ सुनाई हो माय।
आऔ-आऔ बछरा, पीलो मोरौ दुदुआ,
सिंघें वचन दें आई हो माय।'

सुरहिन जंगलों को पर करती हुई, अपने बगर में आकर रैंभानी लगती है। माँ के रैंभाने की आवाज सुनकर बछड़ा उछलता, कूदता हुआ माँ के समीप पहुँच जाता है। सुरहिन ने अपने बछड़े से कहा कि आऔ मेरे बछड़े जल्दी से दूध पीलो, मुझे शीघ्र ही लौट कर जाना है। मैं सिंह को वचन देकर आई हूँ। यह सुनते बछड़ा दृढ़तापूर्वक कहा माता जी में दूध नहीं पिऊँगा मैं आपके साथ चलूँगा। गाथाकार एक गौ शावक में भी शक्ति और साहस भर देता है -

'वचन कौ बाँधौ दुदुआ न, पीहों मोरी माता,
चलहों तुमाये संग हो माय।
आगें-आगें बछरा, पीछे-पीछे सुरहिन
दोऊ मिलवन खाँ जांय हो मांय।
इक वन चाली सुरहिन, दूजे वन चाली,
तीजे वन पाँची जाय हो माय।'

अंत में जंगलों को पार करते हुए गाय और बछड़ा सिंह की ओर बढ़ते चले जाते है। उधर सिंह गाय की प्रतीक्षा

में ऊपर चढ़-चढ़ कर देख रहा था -

'उठ-उठ हेरैं वन-वारौं सिंहा,
सुरहिन अभंऊ न आई हो माय।'

इसी बीच सुरहिन को बछड़े के साथ आता हुआ देखकर सिंह उसकी वचन-बद्धता को स्वीकार करता हुआ कह उठता है, अरे ये तो एक के बदले अपने आप दो दो आ गये है -

बोल की बाँधी, वचन की सांथी,
एक गई दो आई हो माय।'

सिंह के समीप पहुँचते ही बछड़ा सिंह से मामा कहकर कह उठता है - 'मामा जी पहले आप मुझे खा लीजिए, इसके बाद आप मेरी माता जी को खा लेना -

पैलें ममैया हमई खौ भख लो,
माछें हमाई माई हो मांय।'

भले ही सिंह हिंसक था। किन्तु बुद्धिमान भी था और वह बछड़े की बुद्धिमत्ता को देखकर आश्चर्य-चकित हो गया। अरे! इसको इतन अधिक ज्ञान किसने दे दिया ? मामा का पवित्र संबोधन सिंह के हृदय में चुभ गया -

कौनें भनेजा तोय सिख-बधु दीनी,
कौना लगे गुरू कान हो मांय।'

सुनते ही सुरहिन ने कहा कि मुझे ये मूल्यवान शिक्षा देवी जालपा ने ही दी है और वीर'-लंगुर मार्ग-दर्शन किया करते है। सिंह देवी जी का वाहन है। जिस पर माँ जालपा की कृपा होती उसका सिंह भी बाल-बाँका नहीं कर सकता। यही कारण है कि इस गाथा का गायन नव-रात्रि के अवसर पर किया जाता है।

बुन्देलखण्ड में मामा का रिश्ता पूर्ण पवित्र और पुण्य कारक माना जाता है। हर मामा अपने भांजे-भांजियाँ को अपनी संतान से भी बढ़कर मानता है। शादी विवाह के अवसर पर मामा की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। मामा के बिना वैवाहिक कार्यक्रम अपूर्ण माना जाता है। लाल हरदौल भी प्रेत-रूप में अपनी-भांजी के विवाह में सम्मिलित हुए थे। यही कारण है कि वैवाहिक कार्यक्रम में हरदौल (मामा) की पूजा अनिवार्य है। कंस और माहिल तथा शकुनि ने इस पुनीत संबंध को कलंकित भी किया है। मनुष्य की तो बात ही अलग है, हिंसक पशुओं में भी इस संबंध के प्रति आदर भाव होता है। अपने आपको सुरहिन का भाई और बछड़े का मामा मानकर अहिंसक हो गया। उसकी हिंसात्मक प्रवृत्ति अपने आप समाप्त हो गई। उसने सुरहिन और बछड़े के चरणों पर मस्तक रखते हुए कहा कि हे बहिन सुरहिन आप धन्य है। आपने अपने वचनों का परिपालन किया। दूसरे आज से आप हमारी बहिन हो चुकी है। अब आज से आप इस कजरी वन में निश्चित हो कर विचरण कीजिएगा।

'कजरी वन मैंने तोइखौं दीनों,
छुटक चरों मैंदान हो मांय।
सौ मऊ आगें सौ गऊ पाछें,
हुइयौं बगर के सॉड़ हो मांय।'

इस गाथा में बुंदेली संस्कृति का प्रभाव दिखाई देता है। इस छोटी सी गाथा में गाथाकार ने हमारी सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक अवधारणाओं का संप्रेषण एक साथ किया है। सुरहिन हमारी माता, जीवन रक्षिका और पुष्टि-दायक मानी गई है। इसी प्रकार वृक्ष देव-तुल्य है। गाथा में सूर्य-चंद्र, वृक्षावलि, वासुकि और पृथ्वी को प्रमुख स्थान दिया गया है। ये सब मानव-जीवन के अवयव है। इस गाथा में मानवीय संबंधों और संवेदनाओं का विराट-स्वरूप प्रदर्शित किया गया है। हिंसात्मक प्रवृत्ति हावी होती जा रही है। किसी कवि ने सत्य ही कहा हैं -

'आज आदमी नहीं आदमी, मनुज खून का प्यासा है।
मानव-दानव बना हुआ है, एक यही परिभाषा है।।"

इन मृत मानवीय भावनाओं में नव जीवन का संचार करने के लिए इस प्रकार की गाथाएँ संजीवनी औषधि का काम कर सकती है। अतः इस मूल्यवान सामग्री को जन-जन तक प्रेषित करना आवश्यक है।

- कुण्डेश्वर (टीकमगढ़) म.प्र.

कथा-कहानी

चुलिया

भाति भातिं की संवदेना से बने इन पकवानों का आप स्वाद लें। सामाजिक समस्याओं से लेकर हास्य व्यंग्य परक अनेक प्रसंगो को समेटे ये कहानियाँ हमारी तरफ से अक्षर कटौनी है इन्हे आप भी पढ़े अनुभव करें और दूसरों को भी इनको चखायें। कहानियों की ये चुलिया आपके लिए।

बुन्देली मेला

बुंदेली लघुकथा

छोटू चूहा

– कु. सौम्या पाण्डे

एक था छोटू चूहा-बड़ा चंचल बड़ा नटखट अपनी मम्मी का दुलारा भाई बहिनों का प्यारा। उसकी मम्मी उसे सबसे अधिक प्यार करती थी उसके क्रिया कलापों से उसे सभी प्यार करते थे। था भी बड़ा प्यारा। उसकी मम्मी उसे अकेला बाहर नही जाने देती थी जहाँ जाती साथ ले जाती। एक दिन उसकी मम्मी नहाने गई बाहर का दरवाजा खुला था। अब तो छोटू को मौका मिल गया बाहर भागने का। छोटू ने दौड़ लगाई आँखे खोली। जब उसने आँखे खोली तो देखता क्या है कि किसी की रसोई में खड़ा है। पकवानों की सोंधी-सोंधी खुशबू से उसे भूख महसूस होने लगी। उसने एक छलांग लगाई और उसने अपने आपको डांइनिक टेबिल पर पाया। टेबिल पर तरह-तरह के पकवान पड़े थे और आस-पास कोई नजर नही आ रहा था उसने जी भर कर कूद कूद कर खूब स्वाद ले लेकर पकवान खाये। पेट भर जाने पर अब उसने राहत की सांस ली और अपनी मूंछे साफ करने लगा तथा वही आराम से लेट कर सोचने लगा काश मेरी मम्मी भी आ जाती तो कितना अच्छा होता। सोचते सोचते उसकी नींद लगने वाली थी कि उसकी नजर कुर्सी पर सोती हुई बिल्ली मौसी पर पड़ी।

सोने के कारण उसका पेट ऊपर नीचे हो रहा था उसके मुंह से फू-फू की आवाज निकल रही थी। अब तो छोटू को चुहल सूझी और वह बिना सोचे समझे बिल्ली मौसी के पेट पर कूद गया। उसके पेट पर चढ़कर झूले का आनंद लेने लगा। उसके कान में झांका। नाक में काटा मूंछे खीची पेट पर कूद-कूद करमजे लेने लगा। ऐसा करते हुये उसे काफी देर हो गई उसने फिर से बिल्ली की मूंछे खीची। मूंछे खीचते ही बिल्ली की नींद खुल गई। उसने आँखे बंद करे करे ही जोर से कहा मेरे ऊपर कौन कूद रहा है। किसने मेरी मूंछे खीची किसने मेरे कान में काटा। अब तो छोटू की सिट्टी पिट्टी गुम हो गई। अब क्या करें कहाँ जाय उसके समझ में नहीं आ रहा था। उसे रोना आने लगा मम्मी याद आने लगी पीछे मुड़ कर देखा पीछे बर्तन का स्टैण्ड पर कूद पड़ा। उसके कूदते ही एक एक कर बर्तन गिरने लग। वह गिलास के पीछे दुबक कर बैठ गया। बिल्ली अभी चिल्ला ही रही थी। जैसे जैसे बिल्ली चिल्लाये वैसे वैसे छोटू बर्तनों के पीछे छिपता जाय और बर्तन गिरते जाय। गंजी गिरी लोटा गिरा कड़ाही गिरी। अब तो बिल्ली को भी डर लगा। उसने समझा भूकंप आ गया है और भूकंप आया भूकंप आया कहती हुई बाहर भागी। बाहर कुत्ता बैठा था। बिल्ली को देखकर कुत्ता उसके पीछे भाग। अब बिल्ली आगे आगे और कुत्ता पीछे पीछे। जहाँ जहाँ बिल्ली जाये पीछे पीछे कुत्ता उसे मारे दौड़े। छोटू रेक पर बैठे बैठे यह सब देख रहा था। ऐसी विषम समय में भी उसे हंसी आ रही थी। उसने भागने का मौका देखा और लगाई आँखे बंद कर दौड़। घर पहुँचा तो वहाँ का नजारा ही कुछ और था। उसकी मम्मी का रो रो कर बुरा हाल था उसके भाई बहिनो को बहुत डॉट पड़ी थी। छोटू को आया देखकर सब बहुत खुश हुये दौड़ कर छोटू को छाती से लगा लिया। छोटू भी मम्मी से लिपटकर बोला मम्मी अब आज से में कभी बाहर अकेला नही जाऊगा सबके साथ ही जाया करूंगा। मम्मी ने छोटू को गोद में उठा कर पलंग पर लिटा कर सुला दिया और भगवान का शुक्र मनाया कि छोटू सही सलामत घर लौट आया।

ज्ञानगंगा इंटरनेशनल स्कूल
जबलपुर

बुन्देली अहाने

– अजीत श्रीवास्तव (एडवोकेट)

- एक -

एक गांव वारो हतो, बौ इतेक आलसी हतो कि घरै धरो रत तो, या ओढ़ पिछोरा सोत रत तो, काम कौ ना दाम कौ, नौ सेर अजान कौ। ई बातन से ऊ की घरवारी भौतई खुनसाई रत ती। एक दार गांव में भगवत बैठी सो लुगाई नैं उनके पिछौरा खेंच कैं कई, ''इतै परे रात, अरे कछु नई तौ भगवतई सुन आऔ कछु तौ ज्ञान कान में परै कत है ज्ञान कौ किरका-किरका काम आउत।''

वे बेमन से पिछौरा कंधा में डार के भगवत सुनबे कड़ गये। उतै भीड़ में ठाड़े हो गये सो काऊ नैं कई आऔ फिर काऊ नै कई बैठो सो बैठ गये। और बैठतई पता नही कैसें सो गये। जगे जब कौनऊ नें कंधा हिलाके कई जाऔ। वे घरै आ गये। ऊ की घरवारी नैं पूंछी कैसी रई कथा ? वे कन लगे ''हू-ह तनक सी तौ कथा हती, आओ बैठो जाओ घरवारी ने कई ''एें दइया ऐसी कैसी कथा हती।''

रात भई वे सो गये और सोत सोत बोलन लगे आओ बैठो जाओ।''बेर-बेर कत रये।

भुनसारे गांव को एक लरका उनके घर ताई चक्कर काट रओ तो घरवारी झाड़ू लगा रई ती उन्नै देखो सो पूंछी - काये लाला काये आ बेर-बेर चक्कर लगा रहे। वो लरका हांथ जोर कें कन लगो ''दाऊ जग गये ? उने कई ऑ हां वे तौ अबे घुरक रय काये? लरका ने कई भौजी रात कैं हम तुमाये घरै चोरी करने आये सौ दाऊ ने लओ वे कन लगे आओ हम दुबक के बैठ गये सो कन लगे बैठो हम भगे सो कै रये ते जाओ हम माफी मांगन आये जानै कैसे गलती हो गई। घरवाई ने ऊ लरका खों माफी दे के भगा दओ फिर पति खों सबरी बात सुनाई फिर कन लगी देखी कथा ने चोरी बचा लई। ये ई से कत ज्ञान कौ किरका-किरका काम आत''।

-दो-

भौत पैले की बात है एक जनन की मौड़ी कानी हती सो उन्नै खवास सें कई कि ईखो मौड़ा ढूंढ़ा दो। कछु दिनन में खवास एक जनन खों लिवा लाये। औ पानी भरत ऊ मौड़ी खों दिखा दओ कि मौंड़ी के चला ढाल देख लों। उनै मोड़ी जम गई अब मौड़ा दिखावे मोड़ी वारन खो लै गये सो एक चौंतरा पै बैठो लरका दिखा दओ। वौ उनै पसंद आ गओ।

वौ लरका के दोई गोड़े काम नई करत ते ब्याह आ गऔ लरका खो फूफा ने उठा कै घुरवा पर धर दओ टीका में मामा ने उठाकें पटा पै धर दऔ। फिर लरका के मित्रन ने उठा के वरमाला मंच में बैठा दऔ। कछु देर में घूघट डार कै बहु आई सो एक खवासन ने कई हीरा से लरका खों मिल गई कानी। सौ खवास जू ने कई ''ठाड़ो कर लो तौ हम जानी।''

-तीन-

एक ढीमर बंशी लै कैं तला मछरियां मारबे पौंचो नमी से एक कैंचुआ खो दो दो टूंका करे एक टूंका बंसी में पो दओ। कैंचुआं कौ मौं ताई बंसी में फंसो तो औ वौ जल्दी मरत भी नईया। ढीमर ने बंसी पानी में डारी सो एक मछरिया ऊ ये खाबे लपकी तबई कैंचुआ नै कई -

'' मोये मारो तोरे लानै।

तैं न अइयों मोये लाने।।

जौ तें आई मोय लानै।

सो बाहर ठांड़ो तोय लानै।।

'राजीव सदन' नायक मोहल्ला
टीकमगढ़ (म.प्र.) - 4720001
मो. 08827192845

वुंदेली कहानी

गुबरीला

– डॉ. लखनलाल पाल

मोवाइल की घंटी वजतई मैंने फोन उठा लओ। दूसरे कोद से आवाज आई – हैलो आप अमित वोल रहे है ?

– जी हाँ। आप कौन?

– मैं उमा..................नहीं पहचना?

– सॉरी ....मैंने आपको ....।

– मैं उमा.........................लक्ष्मीकांत गुप्ता की वेटी.......................आपकी क्लासफैलो।

– ओ ....उमा तुम...............मैंने तुम्हे पहचान नहीं पाया था ....वहुत दिन तो हो गये .... दिमाग से पूरी तरह उड गया था।

– अमित यह स्वाभाविक है तुम भी मुझे फोन करते तो शायद मैं भी इसी तरह से ....।

– तुम्हे मेरा फोन नम्बर कहाँ से मिला ?

– वुन्देली पत्रिका में तुम्हारी कहानी पढ़ी थी। तुम्हारे बायोडाटा में जन्मस्थान पढ़ा तो मै समझ गयी कि आप ही है।

मोखे सब कछू याद आ गओ। जूनियर हाईस्कूल में मोय संगै पढ़त वाली उमा। सुन्दर उमा ....प्यारी उमा। जहाँ कहूँ मैं गिरो ओनै अपनौ हाँत वढ़ाखे सहारौ दओ।

उमा ने मोई कहानी की अच्छी समीक्षा करी ती। मोखे लगो कि मो लिखवो सफल हो गओ। अधूरी इच्छाएँ आदमी खें लेखक वनाउत। जुन वास्तविक जीवन में न कर पाऊ ऊ कल्पना में करखें खुश हो लेव।

कित्ते दिनन वाद आज उमा से वात भई ती। जैसे एक जुग वीत गओ होय। ई समय के अन्तराल ने कितनौ कछू वदल दओ तो। विस्थापन ऊ का चीज है? कोऊ खें कहूँ पटकत और कोऊखे कहूँ। पै ई सदी के सवसे क्रान्तिकारी आविष्कार मोवाइल ने मनुष्य की दूरियन खें घटाखें नजदीक ठाड़ो कर दओ तो। को जानत तो कि मै कभऊँ उमा से मिल हो। यौ चलत-फिरत वालौ डव्वा आदमी कौ महत्वपूरन अंग वन गओ।

उमा मोय संगै पढ़नवारी हंसमुख और जहीन लड़की। और में अक्खड़ न उन्हा पहरवे कौ सऊर और न वात करें की तमीज। वा पढ़ें में जोग और में औसत दर्जे कौ ऐसौ छात्र जुन गणित टीचर के कभऊ भै मुक्त नई हो सको। दूसरे विषै ठीक – ठाक ते नाटकन में भाग लैवे में सबसे ऑगू रहत तो। ईसें कोऊ मतलव नई हतो कि किरदार केखौ निभा रओ हो। राजन महाराजन वाली डेऊस पहरवे खे मिल गई तो मोसें वड़ौ कोऊ राजई न हतो। मैले कुचैले फटे पुराने अपने रोज के उन्हन से उतनी देर के लानै निजात का मिल जात्ती सारी दुनिया कौ वादसा वन जात्तो।

इस्कूल के नाटकन में वादसा के अलावा में या तो भाई कौ किरदार निभाउत तो या ठस देहाती पति कौ। हमाए माड़साव मोखें देहातियन में ठस देहाती तो मानतई हते। चहाँ जित्तौ मारौ मोखे कछू नई समझनै। नाटक में पत्नी सुशिक्षित पति अनपढ़ गंवार। पत्नी अपने अनपढ़ गंवार पति के कारन हीन भावना से ग्रसित। ऊ समै नई पता हतो कि हीन भावना का होत पै किरदार खूब अच्छी तरां निभाउत तो। घर में पिताजी कौ रौब मोय किरदार में समा जात्तो। उमा कभऊँ मोई वहन बनत ती तो कभऊँ मोई पढ़ी-लिखी सलीकेदार पत्नी। उमा गाउत बहुत अच्छी हती। नाटक की समाप्ति मै जुन संदेस गीता गाओ जात्तो वा अपनी सुरीली आवाज से सवखें मंत्रमुग्ध कर देत्ती।

उमा खें हर सुंदर चीज पसंद हती। बुरई चीज सें वा

बहुत चिढ़त ती। पै पता नई ओखें मोय जैसे बेसऊर के भीतर कौन सी अच्छाई दिखानी कि मोई हर बात पै टोका-टाकी की ओखी आदत सी पर गई ती। अगर ओखे मानक के हिसाब से दिखो जाय तो मै न तो ज्यादा सुंदर हतो और न सऊरदार। मोमें अकेली एकई खासियत हती की अपने टीचर से मार खावे के बाद उनसे कहवो कि माड़साब कल से पढ़खे आहो। मोई जादा बाले की आदत जो हती।

पिता जी की मार के आंगू मोखे काऊकी मार कौ डर नई हतो। पिताजी की मार से बच गए तो जग जीत लओ। दूसरी बात सहपाठियन के गुबरीला कहे से बच गओ सो समझो जीवन सफल।

जाने कौन ससुर यौ गणित बना खें हमाए लानै धर गओ। अपना तो न जानै कौन नरक में सड़ रहा हो है। हमॲऊ खें ई नरक में सड़े के लानै अपने दिमाग कौ कूड़ा - करकट इतै फेंक गओ। इस्कूल में खूब मार परत ती। पंडिज्जी मो मूँड़ श्यामपट पै दै मारत ते। तऊ समझ में नई आउत तो। सवाल समझे से जादा मो धियान ई पै जादा रहत तो कि मार से कैसे बचो पंडिज्जी मोसें हड आए ते। एक दिना क्रोध की पराकाष्ठ में उनके मुख बिवर के जीभ और औठन के घर्षण से गुबरीला सबद की।

मो गुबरीला नाव गणित वाले पंडिज्जी न धरो तो। गणित में तो मैं बहुतई गधा हतो। ऐसी नई कि में गणित के सवाल नई लगाउत तो खूब माथा पच्ची करत तो पै वे सवाल मोखे कभऊ नई बने। जाने कौन ससुर यौ गणित बना खें हमाए लानै धर गओ। अब तो ना जाने कौन नरक में सड़ रहो हुए है। हमऊ खें ई नरक मे सड़े के लानै अपने दिमाग कौ कूड़ा करकट इतै फैंक गओ। इस्कूल में खूब मार परत ती। पंडिज्जी मोरो मूँड़ श्यामपट पै दे मारत ते तऊ समझ में नई आउत तो। सवाल समझें से जादा मोरो धियान ई पै जादा रहत तो कि मार से कैसे बचों। पंडिज्जी मोसें हड़ आए ते। एक दिना क्रोध की पराकाष्ठा में उनके मुख विवर के जीभ और औठन के घर्षण से गुबरीला सबद की निष्पत्ति भई। गुबरीला जुन गोबर में रहत। रात दिना गोबर के गोला बनाउत। गोबर के गोला बनावो तो ठीक हतो। या उपाधि गोबर तक सीमित रहती तो कोऊ बुरई बात नई हती। पंडितजी ने गू के गोला बनाउत वाली बात कहखें ई सबद खें जुगुप्सा नामक स्थायी भाव में लपेट खें वीभत्सता के चरम पै पहुँचा दओ तो। वीभत्सता से भरी-पूरी या उपाधि ऐसी चली की अरबन-खरबन रूपइया कमाउत वाली फिल्मन तक खें मात कर दओ तो।

अध्यापक कहों सिच्छक कहौ या टीचर कहों वे आठई दस लरकन के आदर्स होत। ओई हुसियार लरका और मास्टर इस्कूल की धुरी बने रहत। बाकी लरकन खें तो वे मास्टर काल दिखात। ये मास्टर सिच्छक कम गुंडा जादा होत। मार मार खें लरकन की बुद्दि कुंद बना देत। जब वे मार से अघा-जात तो अपनी भड़ास निकार के लानै अनेक तरां की उपाधियन कौ आयात करखें लरकन के मूड़ पै थोप देत। फिरऊ ये लरकन कौ भविष्य बनाउत वाले विधाता और कुम्हार जैसी पवित्र पदवी पाखें क्रूरता कौ नंग नाच करत। मार और भैं से चाय लरका मूतें या हगें उनकी बला से उन्हे तो अपनौ धरम निभानै। आधे से जादा लरका येई गुरूअन के आतंक से पढ़ाई छोड़ देत।

मो गुबरीला नाव खूब चल निकरो। कम्पनी तो माल बना खें बजार में भेज देत ओखौ उपयोग हजार आदमी करत। येई हालत मोई हती। पूरे इस्कूल में मैं गुबरीला के नाव से प्रसिद्ध हो गओ। अमित नाव तो रजिस्टर और परीच्छा की कापी तक सीमित रह गओ तो। को एजूकेशन में

या उपाधि मोय जी कौ जंजाल बन गई। इतनी हीनता कौ बोध मोखे कभऊँ नई भओ तो। गुबरीला नाव सुनखे मो मुँ लाल हो जात्तो। सरम से जमीन में गड़ जात्तो। कोऊ खें या चिन्ता थोरी हती कि मोखे बुरओ लगत कि अच्छो। उनके लानै तो मै फुल मनोरंजन कौ साधन बन गओ तो। लड़कियन के सामूँ तो ऐसौ लगत तो जैसे भरे दरबार में मोखे नंगौ कर दओ होबै। सहपाठी जानबूझ खे उन्हई के सामूँ जादा गुबरीला कहत ते। मोखे तौ यो लगन लगो तो कि इस्कूल छोड़ दऊँ।

आज सोचत हो कि उमा में ऊ उम्मर में इतनी बुद्धि कहाँ से आ गई ती कि मोई ई कमजोरी खे भाँप खे ओने मोखे ईसे मुक्त होवे कौ तरीका खोज लओ तो। ई बात कौ पतो ओने मोखे कभऊँ नई परत दओ।

उमा ने मोखे गुबरीला कहबो शुरू कर दओ। ओखी कहन में एक आकरषन हतो। सुन्दर और बुद्धिमान के इस्पर्स से बुरई चीज अच्छी हो जात। उमा के ओंठन में संजोग से गुबरीला सबद में लचक आ गई ती। जैसे गंगा के सम्परक से मानुप के पाप ध्रव जात ऊसई उमा ने ई सबद की जुगुप्सा धो पोंछ डारी ती। ई सबद खे ओनै बिलकुल शुद्व साफ करखें मोय मूंड़ पै ज्यो कौ त्यो धर दओ तो।

यौ सबद अब मोय उपनाम के रूप में व्यावहारिकता में आ गओं तो। ई उपनाम से अब मोखे कोऊ परेसानी नई हती।

परेसानी तो मोय सहपाठी मोहित मिसरा और सोहन मिसरा खें हती। जौन उपाधि खे ये गाली के रूप में इस्तेमाल करत रहे अब ओई सम्माननीय हो गई ती। उमा ने ओखे धारन जोग बना ई ती। अब या मोय लानै गाली नई रह गई ती सही अरथन में उपाधि हो गई या उपाधि सोहन और मोहित खें पसन्द नई आ रही ती। उनकी चिढ़ की वजह उमा हती।

देहात में लड़कियन के लानै घर के काम और इस्कूल के अलावा कछू करें के लानै जादा इस्कोप नई होत। लरकन के लाने इस्कोपई इस्कोप है। उन्हे अपनी प्रतिभा दिखायें के लानै सामाजिक समस्याएँ बहुत बड़ी बाधक हो। जादा से जादा इस्कूल के नाटकन में अपनी अतिरिक्त प्रतिभा दिखा सकत। मोखे अपनी प्रतिभा दिखाये के लानै पूरौ आकास हतो। यौ आकाश मोखे रामलीला के मंच के रूप में मिलो।

गाँव में हर साल होत वाली रामलीला में मैं बाल कलाकार के रूप में कई किरदार निभा सकत तौ पै मोखे हमेसा बाल राच्छस कौ अभिनै करे खे दओ जात्तो। मो मन राम बने कौ हतो लछमन बने कौ तो शत्रुधन अंगद हनुमान कछू बन सकत तो। पै ई पात्रन खें निभाने के लानै मोय पास जाति की अर्हता नई हती। ई किरदारन खे तो बाभनई निभा सकत। गाँव भर के लोग लुगाई उनकी आरती उतारत चरन छुअत। मोय चरन को छूतो? ईसे मैं तो राच्छस के किरदारई लायक हतो।

रामलीला में मो राच्छस बनबो उमा खे कभऊँ अच्छो नई लगो। वा हमेसा कहत रही कि गुबरीला तै राच्छस न बने कर। मोखे राच्छस अच्छे नई लगत। बात सही हती इतनी सुघर बिटिया खें ये करिया राच्छस अच्छे कैसे लग सकत ते? बड़े-बड़े दाँत लगाये करिया उन्हा पहरें बहुतई बुरए तो लगत। ओनै मोसे कई देर पूछो कि तै करिया मुं काए कर लेत? उरझे-पुरझे बड़े बड़े बारन में तै सांचउं राच्छस सो लगत। ऐसौ राच्छस बनत कि रोज मर जात। मोहित तोखे कितनी कस खे गदा मारत।

मैं बेबसी में ओसे कह देत्तो कि मोखे कोऊ राम बनातई नहियाँ। कहत कि राम के गाँव भर के आदमी औरते पाँव छुअत तोय को छू है ?

ऊ समय तो रामलीला के इस्टेज पै पहुँचबोई बहुत बड़ी बात हती। राच्छस के रूप में मैं इस्टेज पै खूब उचकत कूदत तो। राम से लड़े के लानै सबसे मोहरा पहुँच जात्तो। लेकिन बन्दरा मोखे घसीटखे एक कोद लै जाखे गदा मार मार खे अधमरो कर देत्ते। मो उचकबो कूदबो दरसकन खे

खेव हास्य पेदा करत तो।

सबेरे जब में इस्कूल जात्तो ता औरतें बतान लगत ती कि मोहित लछमन बनो तो सोहन हनूमान लछमन और हनुमान में ये कितने साजे लगत। और मोखे कहत ती कि यौ बरगओ राच्छस में कितनो डिरवॉयधौ लगत।

मै सोचत तो कि राच्छस इतने बुरए होत ? मोखे कभउँ नई लगो कि ये बुरए होत। इस्टेज पै ऐसौ कौन्हऊकाम नई होत्ता कि जेखे बुरओ कहो जा सकत। दारू पिबाई जात्ती पै वा असली कहाँ होत्ती पानी में रंग मिलाखे बोतल में भर लेत्ते। दढ़ियल बावन के स्वाहा में आहा कहबो शास्त्रीय संगीत कौ मजा देत्तो। उनकी दाढ़ी उखाड़वे में बड़ौ मजा आउत तो।

औरतन की टिप्पणी से उमा दुखी हो जात्ती। औखौ मायूस चेहरा दिखखे मोखे बहुत दुख होत तो। मै अपनौ मन पक्कौ कर लेत्तो कि अब राच्छस नई बनहो।

दिनडूबेई से माइक पै मोई पुकार हो लगत ती कि गुबरीला जल्दी से जल्दी इस्टेज पर आने का कष्ट करें। माइक से अपनो नाव सुनखे दिल में ऐसी उमंग उठत ती कि इस्टेज के आलावा मोखे कछू धियान न रहत तो। मै उचकत कूदत दौड़ो चलो जात्तो।

उमा मोखे अभिनै दिखा रही ती। आज वा इस्टेज के सामूँ वाले चौतरा पै बैठी थी। दसानन जौ ऊचे सिंहासननुमा कुरसी पै बैठो तो। दसानन तो राच्छस कुल कौ बॉस है। मै ओखौ प्रधानमंत्री। दसानन ने दरसक दीरघा में एक नजर डारखे माइक पकर खे गुर्रानो - गुबरीला दूत को बुलाओ। गुबरीला के सम्बोधन से वहाँ बैठे लोग खिलखिला खें हँस परे। उमा ऊ मुस्करा परी ती। स्यात ओऊ ने मोय अभिनै कौ लोहा मान लओ तो। अब मोखे कोऊ डर नई हतो। उमा जो मुस्करा परी ती। महूँ दूने उत्साह से दसानन की आज्ञा पालन खें तत्पर हो गओ।

गुबरीला नाव राच्छस कुल के अनुरूप हतो। दरसकन खे ई नाव में कौन्हऊ तरां को रसाघात नई भओ तो। बलखे यौ नाव उनके रसास्वादन में वृद्धि कर रहा तो।

- हलो अमित कहाँ खो गये ?

उमा की आवाज ने मोखे चौका दओ। मै अपने अतीत से लौट आओ।......................हाँ उमा सुन रहा हूँ।

- एक कहानी और लिखी जा सकती है।

- किस पर ? मोय मुँ से बेसाख्ता निकरो।

- गुबरीला पर

खिलखिलाहट के साथ फोन डिस्कनेक्ट हो गओ। झेंप के मारे आज फिर से मो मुँ लाल हो गओ तो।

- कृष्णाधाम के आगे, शिव मंदिर के पास,
अजनारी रोड, नया रामनगर
उरई - 285001 (उ0प्र0)
मोबाइल - 09236480075

बुन्देलखण्ड में प्रचलित कहावतें

संकलन कर्ता – सरमनलाल शर्मा

1. अपन हथा, जगन्नथा।
2. करिया अक्षर, भैंस बराबर।
3. घर को परसैया, अँधयारी रात।
4. तनक सी रमतिली, मिर्जापुर की हाट।
5. अलाल निगइया, असगुन की बाट हेरें।
6. भोंदू बना की उल्टी रीत, भर बसकारे उठावें भींट।
7. खिसयानी बाई, पड़ोरा नोंचे।
8. ऑखन के ऑधरे, नैनसुख नाम।
9. नाच न आवे, ऑगन टेढ़ो।
10. घर के कुरवन, ऑखे फूटत।
11. घर को भेदी, लंका ढहावे।
12. अपनो भात पराए मड़वन कर दओ।
13. हाथ की बिलैया छोड़ के म्याऊॅ- म्याऊॅ करत।
14. मान मनाई खीर न खॉय, जूठी पातर चाटन जॉय।
15. जब काम परत, सो गधा से कक्का कहत।
16. मुँह में राम राम, पेट में कसाई के काम।
17. नकटा की नाक पे रूख जमों, ऊखों छॉयरो भओ।
18. पराई पातर को बड़ो बरा दिखात।
19. ठॉड़ी खेती गाभिन गाय, तब जामो जब मुँह में जाय।
20. दिया तरें अँधयारो।
21. बादर देखें पोतला न फोरो।
22. बिना मरें सरग नई दिखात।
23. कोदों की रोटी में घी खोओ, मूरख से दुख रोओ।
24. जवान सीरी, मुलकगीरी।
25. बादर फटो, थिगरा कहाँ तक लगाव।
26. सीधे गधा पे दो गौने लादत।
27. फूस (घासफूस) को तापवो उधार को खावो।
28. चोरी की चोरी, ऊपर से सीना जोरी।
29. खट्टयाऊ मूँड़, गुलाब खों आगूँ ऑगू।
30. राम से काम परों।

शिक्षक प्रा.शा. घुटरिया
हटा, जिला-दमोह (म.प्र.)

कारंदा की मौत

– पं. हरगोविन्द तिवारी "कविहृदय"

भौत दिना पैलऊकी बात है लंबरदारी समय हतो ओई समय पै बोदनगंज गाँव में एक लंबरदार हते उनको नाव हतो बोदन जू। अर बोदन लंबरदार अपने निजू कामो के लाने एक कारंदा राखे ते। अर उनके कारंदा कौ नाव हतो सोड़रमल। अर सोड़रमल जू हते बिलकुल अकेले काये कै उनकौ व्याव – काज नैं भव तो सो उनके लरका बारे होवै की तौ कोनऊ बातई नईया। अर है सो उनके बाप-मताई हते सो भौत समय पैलऊ वे भगवान खौ प्यारे हो गये ते। ऐसे सोड़रमल जू हतै तौ बिलकुल अकेलेई पै उनके संगै पूरौ गॉव हतो। काये कै लंबरदार के इतै काम करत भये पूरे गॉव में उनने अपनी भौतऊ अच्छी धाक बना लई ती। जीसें गांव के सवई जने उनखौं अच्छी तरां जानतते अर मानत ते सो गांव के बस जने उने भौत चाऊत ते अर उनकी भौत इज्जत करत ते। इतै तक कै पूरे गॉव के आदमी उने अपनेई घर कौ आदमी मानत ते।

सो एक बेर का भव कै वे लंबरदार से छुट्टी लैके दो – तीन दिना के लाने तीरथन खैं कऊं बायरें निकर गये। ऐसें वे कारंदा तौ गांव में नै हते पै उतई बोदनगंज गांव में बुद्दे माते कै कारंदा नाव कौ एक गदा जरूर हतो। सो का भव कै जौन दिना लंबरदार से छुट्टी लैकै उनके कारंदा सोड़रमल जू तीरथन खै कऊं बायरे गये ओई दिना बुद्दे माते के कारंदा नाव के ऊ गदा खौ हार में चरती बेरा एक तिंदुवा ने टोर खाव। सो उनके कारंदा नाव के गदा की उतई मौत हो गई। सो अब का भव कै ऊ गदा के मरबे के तीसरे दिना बुद्दे माते ने मनईमन जौ गुनतारौ करो कै मोरी मूंड के बार भौत बड़े – बड़े हो गये है ईसें अपनी मूंड़ के बार कटवा के मूंड़ मुड़वा लई जाय।

ऐंसे बुद्दे माते ने अपनी मूंड़ मुड़वाबे कौ विचार करकै बार कटवाबे के लाने अपने परौसी खिम्मे कका खै अपने घरै बुला लव। सौ जैसई उनने खिम्मे खौ बुलाय वैसई खिम्मे अपने संगै बार बनाऊत के औजारन की पेटी लैकै बुद्दे माते के घरै आ गये। सो खिम्मे के आऊतनई बुद्दे ने ऊसे कई कै खिम्मे जू हमाये मूंड़ के बार भौत बड़े – बड़े हो गये है अर हमाये कारंदा खौ मरें भये सोई आज तीनक दिना से हो गये है। सो कारंदा की मौ को दुख अर मूंड़ पै बड़े – बड़े बारन कौ बोझ मौपे सव नई जात। सो अब मोरी मूंड़ घौंट दई जाय जीसें मोरौ जौ बोझ हल्कौ पर जाय। अर है सो कारंदा की मौत के सूतक कौ अछुद्दर छूट जाये।

सो बुद्दे माते के मौसें कारंदा की मौत की खबर सुनकै खिम्मे ने जा जानी कै कऊं बुद्दे कारंदा सोड़रमल के मरबे की बात तौ नौई कर रये। सो ऊ जाई सोच कै अपने मनईमन कारंदा सोड़रमल जू की मौत के बारे में कछू गुनतारौ – सो करन लगौ। अर फिर गुनतारोई – सौ करत भये ऊ बद्दे की मूंड़ के बार काटवे बैठ गव। सो बुद्दे माते अपने घर के बायरें चौतरा पै बैठ कै खिम्मे के हांतन उस्तरा से अपनी मूंड़ के बार कटवाऊत भये अपनी मूंड़ मुड़वाऊन लगे।

सो जौन बेरा बुद्दे माते अपनी मूंड़ के बार कटवाऊत अपनी मूंड़ मुड़ा रये ते ओई बेरां बुद्दे माते के परौसी बहोरी दाऊ की उनके इतै अबाई हो गई अर वे उनके लिंगा आकैं उतई ठांड़े हो गये। सो जैंसई कै उनके बुद्दे माते खौं अपनी मूंड़ मुड़वाऊत भये देखो वैसई कैं वे इकदम ठिठक कै। रै गये। अर है सो मनधरयात भये उनने बुद्दे माते से पूंछी कैं काये माते जू जौ का हो रव? सो बुद्दे माते के मन में तौ अपने कारंदा गदा के मरबे कौ दुख भरोई परो तो सो बुद्दे माते ने दुखी मन सैंई तुरतई बहोरी से दै कई कै अरे। का तुमे पतौ नईयां कै हमाये कारंदा नई रये आये। इत्तई में खिम्मे ने उनके बीचई में बतयात भये उनन से कई कै सांसऊ कारंदा ने

हमाव भौतऊ संग दव। हमे तौ कछू पतौई नई परो कै वे हमें छोड़ के ई दुनिया से कबै चले गये। काये कै दो तीन दिना से हम तौ गांवई मै नै हते। हम तौ पैलऊ एक जरूरी काम से गांव के बायरे कऊ दूसरी जगा हते। कजंत हम गांव में होते तो जरूर पतो रातो हमे। अब का करत काम तौ सबई खौ लग रात सो सब अपने अपने कामन में बिदे रात। काये कै अपने गुजारे के लाने काम - धाम तौ करनेई करने आऊत। सो हम तौ अपने कामई में लगे हुईयें ऐईसें हमे ई बात कौ कछू पतो नई परो। सो बुद्दे ने खिम्मे से कई कै अब ताये पतो कैसें परतो काये कै तीन दिना पैलऊ कारंदा खौ तौ हार मेंई आं एक तिंदुवा ने टोर खाव। सो बुद्दे के मौ से ई बात के सुनतनई खिम्मे चिमां कै रै गव। अर है सौ ऊ बहोरी की तरपै देखत भये बुद्दे की मूंड़ घोंटन लगो।

अब खिम्मे और बुद्दे की बाते सुनकै बहारी नें सोई जौंई गुणाभाग लगाव कै होये नें होये कऊ हमाये इतै के लंबरदार कैं जौन कारंदा आम सोड़रमल जू हते सो बेई नौंई रेय आये। सो जाई बात सोच कै वे अनमने से होत भये तुरतई बुद्दे माते के लिंगा बैठ गये। अरे बतयात भये वे बुद्दे से कान लगे कै राम ! राम! अर राम! जौ का भव जौ तौ भैत बुरव भव! अरे! माते जू कजंत अपुन ने पैल बता दई होती तौ मै तौ आई दिना नकरिया में दौरत आऊतौ जौन दिना कारंदा की गमी भईती। अब का करत काम धाम के मारे नाये-माये तौ फिरनेई आऊत है सो मै काम से कऊ बायरै निकर गव हुईयौ। पै चलौ छोड़ो जो भव सो भव अब तौ इत्तई भौत है कै जब ई बेरां मै इतई मौजूद हो सो मै सोई अपने कारंदा के ई क्रिया करम में संगै हो लऊं। करे ! नकरिया में नई रये सो नई रये काये कै हाजिर में हुज्जत नई अर गैर में तलाश ! अर ऐंसी कात भये बहोरी उतई बुद्दे के लिंगा बैठो-बैठो अपनी मूंड़ के बारन पै हांत फैरन लगो।

सो बुद्दे ने ऊसे कई कै बहोरी तैंने जौन बात अबै कई है सो बा तौ ठीक है। पै तैंने मोरी तौ कछू सुनिअई नईयां काये कै कारंदा की नकरिया में जाबे की तौ कोनऊ बताई नई रई आय। सुनो बहोरी! अबै तनकई पैल खिम्मे से हमने का कईती कै कारंदा खौ हारई में आ एक तिंदुवा ने टोर खाव। सो बहोरी ने उन से कई कै हव माते जू सांसऊ मैंने तो ई बात पै कछू गौरई नई करो आयं। पै कछू नई माते अब तौ हम उनके ई क्रियाकरम में अपने संगै होई सकत है। सो बुद्दे ने ऊसे कई कै बिलकुल ठीक। काये कै हाजिर में हुज्जत नई अर गैर में तलाश। ऐसे बहोरी कौ अहानौ बहोरिअई खै सुनाऊत भये बुद्दे चिमां गये सो बहोरिअई चिमां कै रे गव। अर है सो खिम्मे अपने कामई में लगो रव। ऐसे होत-करत बुद्दे की मूंड़ मुड़ गई सो वे उतई बैठे-बैठे अपनी मूंड़ पै हांत फेरन लगे। अर बहोरी अपनी मूंड़-मुड़वाबे खिम्मे के लिंगा बैंठ गव सो फिर लगे होत खिम्मे बहोरी की मूड़ मूंड़न लगो।

अब का कैने ऐई बेरां उतई से गांव के कछू आदमी और दै निकरे। सो वे इनन खों मूंड़ मुड़वाऊत देखत भये अर इनन से पूंछताछ करत भये अर इनन से जा जानकारी पाऊत भये कै कारंदा नई रये आये। सो कारंदा के नै रेवे की जानकारी पाऊत भये वे सबई जनें उतई उनके संगै अपनी-अपनी मूड़े मुड़वाऊत लगे। ऐंसई-ऐसे होत-करत उनन के सगै गांव के भौतऊ ले आदमन नें अपनी-अपनी मूंड़े मुड़वा डारी। फिर का भव कै कछू देर में उतै से गांव के चिंखे चौकीदार दै निकरे। सौ उनई ने बुद्दे हरो से पूछताछ करी। सो बुद्दे हरो से पूछताछ करबे पै उनन ने चिंखे चौकीदार सेंई ऐंसई कै दई कै अरे ! का तुमे पतो नईयां कै हमाये कारंदा नई रये आये। सो बुद्दे हरो के मौं से जा बात सुनकैं चिंखे चौकीदार तुरतई लंबरदार लौ जा पौचो अर लंबरदार साब खौ ई बात की खबर देत भये उनसे कई कै अरे ! लंबरदार साब ! लंबरदार साब ! गजब हो गव ! हमाये कारंदा जू नई रये आये। ऐसे जैसई कै लंबरदार साब नें कारंदा सोड़रमल जू के नै रैबे की खबर सुनी बैसई तुरतई उनने अपने पूरी गांव में ढिंढोरा पिटवा दव कै कारंदा आम सोड़रमल जू कौ

एकाएक निधन भये से गांव में तीन दिना के लानें शोक रखो जा रव है। अर है सो आजई दिन डूबे सात बजे दिन के चौपाल पै एक शौक सभा कौ आयोजन करो जा रव है। सो लंबरदार के ई ऐलान खौं सुनकै पूरें गांव भर के आदमी हक्का-बक्का रै गये।

ऐंसई ऐंसे होत करत दिन डूब गव। अर है सो दिन डूबे सात बजे गांव के चौपाल पै कारंदा के निधन की शोक सभा कौ आयोजन शुरू हो गव। शोक सभा के आयोजन में पूरे गांव भर के आदमी आकें जुर गये। जिनमें बुद्दे माते खिम्मे कक्का अर बहोरी दाऊ के संगे-संगे वे सवरे आदमी जिनन ने अपनी मूड़े मुड़वा डारी ती वे सवई जने आकें उतै बैठ गये। ऐसे कारंदा के निधन पै शोक सभा कौ आयोजन शुरू होई रव तो कै जवई के कारंदा आम सोड़रमल जू तीरथन से लोट कै आ गये। अर वे उतई गांव के चौपाल लौ जा पौंचे। सो उनखों उतै देखतनई सव के सव आदमी भौंचक्का रै गये। अब नै तौ कोऊ पै कछू कात बने अर नै कछू करत बने। पै कछू देर में बड़ी हिम्मत करकें सभी के मुखिया बोदन जू नें कारंदा खों अपने लिंगा बिठाकें सभा के आयोजन के बारे में उने पूरी बात बता दई। अर है सो फिर लंबरदार बोदन जू नै सभा के बीच में ठांड़े होकें अर जोर से बोतल कौ चुंगा अपने हांतन में लेकें चुगा खों अपने मौ के लिंगा करकै सबई आदमन से कई कै जा तौ भौत खुशी की बात है कै हमाये कारंदा सोड़रमल जू तौ हमाये बीचई में मोजूद है। पै हमे दुख ई बात कौ है कै हमाये कारंदा की मौत कौ हल्ला भव कैंसे ? अगर कोऊ खौं ई बात कौ कछू पतो होय तौ चुपचाप ठांड़े होकें बिना कोनऊ डर दहशत के हमे अबई बता देवै। सो लंबरदार के मौ से ऐसी बातें सुनकै उतै मोजूद सबई जनन से खुसर पुसर हौन लगी।

ऐंसई-ऐंसे सबई जनन में खुसर-पुसर होत भये कछू देर के बाद उतई मौजूद खिम्मे कक्का ने ठांड़े होकें लंबरदार से दै कई कै लंबरदार साव ! लंबरदार साव ! जौ सब तौ बुद्दे माते को करो धरो आय। काये कै ओईने अपनी मूंड़ मुड़वाऊती बेरां सबई जनन से जा बात कई कै अरं का तुम पतो नईयां कै हमाये कारंदा नई रये आये। सो खिम्मे के मौ से जा जानकारी पाकै लंबरदार साव ने तुरतई बुद्दे माते खे दै पकरो। अर ऊसें कई कै काये तैने ऐसौ हल्ला काये करो। सो लंबरदार के पकरत नई अर पूंछतनई बुद्दे माते अपने दोई हांत जोर के लंबरदार साव से बिनती सी करत भये कान लगो कै मालक मौरे एक गदा हतो अर है सौ मै अपने ऊ गदा से भौतऊ प्रेम करत तो। अर प्रेम से मै अपने ऊ गदा कौ नाव धरै तो कारंदा। अर है सो हमाव ऊ गदा ई दुनियां मे नई रव आय। काये कै आज से तीन दिना पैलऊ हमाव ऊगदा जीसे मै कारंदा कात तो ऊये हार में चरती बेरा एक तिंदुवा ने टोर खाव। अर है सो हमाव ऊ करंदा नाव कौ गदा उतई मर गव। ऐंसे आज तीसरौ दिना हे हमाये कारंदा गदा खौ मरे। सो हमने तो ऐई दुखन में दुखी होकै सब जनन से ऐसी कई कै अरे का तुमे पतो नईया कै हमाये कारंदा नई रये आये। मालक साब अब ईमे मोरी का खोरी। अर मोसे कछू गलती भई होय सो मोय माफी दई जाये। सो बुद्दे की बिनती सुनकें लंबरदार ने चुंगा में हो फिर सबई जनन से कई कै गलती तौ जा बुद्दे से भई है पै ई गलती के लाने बुद्दे के संगै का करो जाय ई कौ निर्णय हमाये कारंदा आम सोड़रमल जू खुदई कर है। ई के लाने कारंदा खौ पूरौ अधिकार है कै वे जो चाहे सौ करें। अर ई कौ निर्णय ऐई सभा के बीच में अबई इतई आकें कारंदा सोड़रमल जू कर लेवें।

सो लंबरदार के जे बोल सुनकै कारंदा जू सभा के बीच में ठांड़े हो गये अर जोर से बोलत कौ चुंगा उनने अपने हांतन में लैकें चुंगा खौं अपने मो के लिंगा करकै जोर जोर की आवाज से सबई जनो से कई कै जो तो भैतऊ अच्छो भव कै बुद्दे ने हमाये जियत भये हमे जौ आभास करा दव कै ई गांव में हमाये कितने हितैपू है। इतै ई सभा में सब जनन खौं मौजूद पाके ई बात की हमे भौतऊ खुशी भई कै वे सब

हमाये संगै है। ऐईसे हम अर हमाये लंबरदार साब सोऊ अपुन सब के संगैई है। अब अपुन सब जनेई ई बात कौ निर्णय कर लेवें।

सो कारंदा के ऐसे बोल सुनतई सभा में मौजूद सबई जने चिल्लयात भये कान लगे कै जो भव सो भव। पै कारंदा की मौत कौ हल्ला तौ बुद्दे की बदौलतई भव। सौ बुद्दे माते खौ अपने कारंदा गदा की मौत के तेरवें दिना पूरे गांव के आदमनों खौं एक पंगत दैने पर है। जबई उनके कारंदा गदा की आत्मा खौं शांति मिल है अर जबई बुद्दे खौं कारंदा की मौत कौ हल्ला करवे कौ कछू फल मिल हे सो पूरी सभा के सामू बुद्दे माते खौं गांव भर के आदमनो के लाने पंगत दैवो कबूल करने परी। अर है सो अपने कारंदा गदा की मौत के तेरवे दिना उने पूर गांव भर के आदमनों खौ एक पंगत देने परी। जीमें उनकी जिंदगी भर की जुरी जुराई पूरी कमाई ठिकाने लग गई। मतलब जौ कै गांव भर के आदमनो खौ पंगत दैवे में बुद्दे माते के खूब पईसा खर्च हो गये। ईसे वे भौत दुखी हो गये अर उनखौं अपनी ई करनी भरनी से कछू चिड़न सी हौन लगी। अर है सो वे ई बात से कछू चिड़कन से लगे सो कारंदा की मौत कौ हल्ला करवे के बहाने गांव भर के आदमी बुद्दे माते से हंसी मसकरी करकै उने खूब चिड़काऊन लगे। अर है सो उनखौ चिड़काऊत भये गांव भर के आदमी उनसे कान लगे कै ''बुद्दे माते कौ मर गव एक सरो गदुल्ला, अर उनने कर दव कारंदा की मौत कौ हल्ला।'' किसा हतीसो पूरी भई कव प्यारे जा कैंसी रई।

इंदिरा प्रियदर्शिनी वार्ड, तिवारी मुहल्ला, शाहगढ़
जिला-सागर (म.प्र.) पिनकोर्ड-470339
मो. 09981966788, 09993370274

बुन्देली लघुकथा :-

"दूसरो व्याव"

– राजीव नामदेव

हमाय इतै गाँव के एक साठ साल के बब्बा ने घरवारी के मरवै के तीनई माह बाद में दूसरो व्याव एक तीन साल की विधवा कै संग कर लओं। जब हमने बब्बा से जा कई कि तुमे सरम नई आत अबै तुमाई घरवारी कौ मरे तीन मईना नौ नई भये और तुमने दूसरो व्याव करलओ। अपुने मोड़न के बारे में कछु नई सोची कि उनको का हुईए। असफेर भर तुमाई चौले करत फिरत है कत है कि चढ़े जावनी बुड्ढे नूँ।

बब्बा कन लगो कै – हमने अपुने बाल बच्चन से पूछ जॉच कै जौ व्याव करो है। कायसे कै हमाय दोई मोड़ा परदेश में रत है उतई काम धंधो करत है वे तो इतै आवै कौ तैयार नईआ और अपुन इतै ई घर से कऊ और नई जान चात। अकेले में इतेक बड़ो घर मोए काटवे कौ दोरत है। नौकरन के भरोसे कत तक रय सकत अबै कै नौकरन पै इतैक भरौसो नई रओं।

मैंनें ईसे दूसरो व्याव करवै को फैसला लओ हतो कि घरवारी आहे तो कम से कम पूरे घर की देखाभाली नौकरन से नौनो करें और बुढ़ापे में हमओ सोई तनक ख्याल राखेंगी ईसे हमाओ अकेलापन सोउ दूर हो जै और पुरा परोस में हमाऔ मान सम्मान सोई बढ़ जैवे कि हमने एक विधवा को सहारा दओ है। हमे बब्बा का फैसला सई लगो।

संपादक 'आकांक्षा' पत्रिका
अध्यक्ष-म.प्र. लेखक संघ
शिवनगर कालौनी, टीकमगढ़ (म.प्र.)
पिन- 472001, मोबाइल - 09893520965

समै करोटा लेत

– गुनेश्वर द्वारका गुप्त

चंदा – एक गावं में भैया सैन रैत्ते। उनको हर सवई तरा से सुकी तो। मताई बाप जिंदा ते। अच्छी खेती पाती हती। उमर होबे पै बैन को व्याव ऐंगरई के गावं में कर दओ। कछू दिनन में भैया को सोई व्याव हो गओ। दोई कुटम – सुख से रैत्ते। पै समें कोऊ नई बता के करोंटा लेत। दिनन के फेर कबै कैसे दिखन लगें कोऊ कछू नई कै सकत। सुख दुख एक सिक्का के दो पहलू कहाउत। सो पलटी मारत रैत।

कड़ोरी – भैया साउकारी कौ काम कारतौ। व्याज पैसा देत लेत्तो। एक सालै अकाल पर गओ। सौ उके सबरे रूपया डूब गअे स्यानें कै गअें के बड़ी मार कतारकी चित में देत उतार। सौ भैया दसा जा हो गई कै उके घर के खपरा लो विक गअे। ऊकौ पीठ पै डेरा हो गओ। कत नैयाकै बनतन दैर लगत पे गिरतन देर नहीं लगत। गिरानी की हालत में भैया नें सोची –

कुदऊं – चलो बैन के ऐंगर चलें। स्यात मोरी बिपदा के दिना देख कें कछू बा पसीज हेई, अपनी तो सगी बैन आय। कात नैया के मुसीबत में अपनें काम आउत। सो ओह के ऐंगर चलो।

चंदा – जाई सोच के कुदऊं अपनी बेन के गांव पोंचां। उनें उतै पोंचतई बैन की ससरार बारन खों अपनें आबे की खबर ने दई काये कै उयै जो उर तो कै मोरी दीन हीन दसा खों देख कें ऊ घरें मोरौ अपमान नें होय।

कड़ोरी – सो भैया ऊ जैसंई दिन डूबो उर अंदयारों हो परो सो उनें अपनी बैन की एक बांदी के हांतन अपने आवे की खबर भिजवाई। बैन खों ई बात कौ ने पतो हतो कै भैया मोरौ बिपदा कौ मारौ आय आओ है पै जेंसई राते खो ऊकें ऐंगर बांदी खबर लैकें पोंची तो ऊकौ माथौ ठनको उनें सोची।

मुलिया – (मनई मन) कछू ने कछू तो खासई बात आय है नईतर तो भैया मतंक मंतक कायेखों आउतो उर अपने आये की खबर मोय मस कई बांदी के कांत काये भिजाउतों। कछू तौ कारन हे तवई तो।

चंदा – सो मुलिया बैन ने बांदी से हरें से ऐंगर टेरो उर पिन ऊसें बूजी।

मुलिया – काये री मौरो भैया का पैरें आओं है उर ऊ देखत सुनत में कैसौ का लग रखो है। ऐं।

बांदी – बहूरानी का बताउं हम तौ। तुमाओ भैया तो ई दसा में दिखत कै कछू कात नई बन रओ आय। दीन हीन फटे पुरानें चिथरन लगे उन्ना पैरें टूटी घिसीं पनैया पाउन में डारे मों पै फफूड़ां सौ बड़ों। शरीर सें सोई बिलकुलई इकारी दिया दिखत। भोतई गरीबी को मारो है।

कड़ोरी – बैन ने जैसंई बांदी की बातें सुनी सो वा तना सोचा विचारी में पर गई कै भलां मोरो भैया, ऐंसी दसा में कैसे हो सकत। पै जब उनें बादी के हांतन संदेसै पैठेओं है तो हो सोई सकत। काये के जा साल अकाल तौ सोई पर गओ है रकम स्यात डूब गई होय। फिन उनें एक गैरी सांस भए मनई मन सोची।

मुलिया – (स्वत: से) मोरे ससरार बारन खों कजंत जौ पतो पर जैय कै मोरे मायके की इत्ती बुरई दसा हो गई है। तौ मौरै तौ इतै मानई पान घट जैय। ऐंई सें उयै इतै सें बिदा कर दओं चइये।

चंदा – सो कुदऊ भैया खो मुलिया बैन ने ऐसों विचार के रसुइया में से दो ठैया बासी रोटी जौन धरी ती सो वे सूकी एक कगदा में लपेट के बांदी के हातंन पकरात भअे कई।

मुलिया – ऐं सुन तें मोरे भैया खों उतई जाकें जे रोटीं दै दइयै। उर कइयें कै गावं के बायरेंई रोटी खा के पानी पी लैय। ई गावं में ने रूके। कौनऊ दूसरें गावं खों कढ़ जाय। कायें के कजंत ई दसा में ऊ इतै रै जैय तौ में अपने कुटम के

मनसन सामू नजरन से गिर जैओं उर मौरौ जित्तौ इसे अबे मान पान है सो ऊ सबरो माटी में मिल जैय। जा ले जा रोटीं समज गई।

बांदी – हओ बहूरानी अपन फिकर नें करो उर ने सोसन दूबरी होओ में तुमाअे भैया जों समजा के ई गांव सें टिरका देओं अपन की इज्जत में बट्टों में लग पाहै। पनमेसुर की लीला सोई कोऊ नई जान पाओं। ऊ सोई कैसे दिन दिखाउत। ठीक है में जात हों।

मुलिया – हओ जा उर ई घरै नें खाहै के दइअे उर नें गावं में सोई कोऊ काऊ के ठैर है उर फिर सें तो जानतई है जा।

कड़ोरी – बांदी नें बैन के हांतन सें रोटीं लई उर बा लौटा के ज्यायं कुदऊं रूको हतो सो उसे ऐंगर जाकें उनें बे कागदा में लिपडी दों ठैया रोटी पकराई उर जेंसी जैंसी उकी मुलिया बैन नें कई ती सो बादी ने कुदऊं भैया सें कैदई।

चंदा – कुदऊ भैया नें बादीं के हांत सें बे रोटी लई। उर अपने करमन खों कौसल भलों ऊ गावं बायरें निकर गओ। तनक दूर जाबे पै उयै एक पीपर की पैडों मिली सो ऊने ऊके तरें एक गैरो खदरा खोद कें उमें दोई बे रोटी गाड दई। फिर विना कछू खायें। अपमान को घूंट पीकें आगूं चल दओ।

कड़ोरी – कछू कोस चलबै पै ओई गैल में उकी ससरार वारी गावं परत्तौ सो ऊ गावं के गेंवडें पोंचाई तौ के ऊकी ससरार बारन खो पतौ पर गओ। गावंई के एक जनन नें कई।

परसू – भैया तुमाओं नतैतै तो भैतई गई बीती दसा में आउत दिखानें। फटे चिथे उन्ना लत्ता सें उखरी भई टूटी पनैया पावंन में डारें घसीटत चले आ रओ है। लगत है कै बे भौतैई विपदा के मारे भओ है।

ससुर – ऐं अरे। आसों की सालै तुसार नें उर अकाल की मार नें सौ सबई खों अपनी चपेट में लओं है उर फिर मजूर जौन ते सौ बे गांव छोड़ छोड़ के परदेश खों निकर गओं है रोजी रोटी की तलास में गावं के गांव सुनें हो रअें ई वखत पै तो। सो वे व्याजू पैसा देत्ते ते लगत कै सवरू डूब गओ। आसों तौ अच्छन अच्छन की हालत पतरी हो रई है खैर का इतई आउत दिखानें तुमें।

परसु – हऔ दिखानें तौ ऐंई कुदांई आत। गेंवड़ें हते। मैनें तौ दूरई सें आय तको सों नै तो उनें चीन गओ के जे अपनेई नतैत आअें। सौ मैनें सोची चलो में अपुन खों वता दऊं।

ससुर – नई जो तो अच्छो करौ अपन नें जौ मोय वता दई अब देखते हों में। वैसें हालत तो हमाई सोई कछू नोंनी नेयां आसों। हांत सकोंर सकोर के चलनें पर रओ है। अब ऐंसी दसा में लरकिया सोई क्यायं पठैओं। सो बा सौ अबै इतई है अब उनकी जा दसा है तो फिन.......

परसू – अब कछू तो कन्नेई पर है सगे रिस्तेदार आयें साचऊ गावं के सुनहें तौ भलां का कैयें कै अपुन ने मोंड़ी खो क्यांय आय पटक दओ। पेलऊ सें का घर दोर देखो दाओं ने तो का ऐं।

ससुर – अरें नई भैया ऐंसो नैयां वे तो चार गांव में वजे भअे ते। अब कोऊ का जानें दई की मूंदी मार उनई पै आय परनें। नईतर काअे सों आसंन देखत कोऊ मांछी तो लीलत नैया है कै नई। पै अब ठीक है मोड़ी के भाग।

चंदा – ससरार बारन नें जा खबर सुनी उर अपनी मान मरयादा खों गावं बिरादरी में कूतो सो वे तौ कन्नी काट गअें। उन्ने टका सौ जबाव भिजवा दओं गैलई में के इते के मनस तुमाई ई हालत सों देख है तौ हमाई नाक कट जैय। इसें अपन कौनउ अनविनार बारें गांव खेरे में जा कें कछू काम धधों कारौ जीनें अपनी सुमनी इज्जत ढंकी मुदी रअै।

कड़ोरी – भैया ससरार बारन तें जा दूजी करेजे में वती बोट उयै भौत आंसी सो ऊ तिलमिला गओ। पै ऊ जौ के चुप्पी साद गओं कै – –

रहिमन चुप हो बैठिये: देख दिनन को फेर।
जब नीके दिन आइयें, बनत नें लगहे देर।।

इत्तौ मन में विचार करकें ऊ आंगू के गावं चल परो।

चंदा – ऐंगराई के एक गावं में ज्यायं ऊकौ मिन्त रैत्तों सो ऊके ऐंगरें ऊ पोंच गओ। मिन्त में मों हांत धुआ कें उयै खुआओं प्याओं उर फिर ऐंगरें बैठार मे उनें पुरौ हालचाल जानों।

कड़ोरी – मिंत नें सबरी किसा ढांढ़स बदाउत भओ सुनी उर उयै अपनेंई तै रोक लऔ। दूसरे दिना दोई जनन कौ वतकाव भओ सो मिंत नें कई।

बसंत – भैया में तोय चार ठैया बुकरियां लयें देत हों। तुमें उनखा कछू दिनन लौ पालने पोसनें परहै। उन धीरज सें जे दिना काटनें परहें। पैलऊ तुम इनई सों पालों उर देखो के ऊकौ का नतीजौ निकरत है पिरभू की किरपा हुइयै तो तुमाये दिना फिरवै में झेल में लगहे तुम कोनउ तरा की चिंता फिकर सो ने करौ। आराम सें ऐई गावं मे डटे रऔ।

कुदऊ – अब बताव भलां ढांढ़स तौ मिंत होकें ईनें वंदाहों है पैं भलां ई चार ठैयां बुकरियन के पाले सें ऐसों का लाभ हुइयें ? जौ पल्लें नई पर रऔ आय। मिंत नें मोय जौ का धंदौ वताओं एं ? पै खैर कछू बात नैयां अपनें दिनई जब खराव चल रऐं है तौ फिर मिंत सोई बिचारो का कर सकत। अव जा तौ वखत परे की बात आय।

(मिंत से) भैया ठीक कै रऐ तो तुम हम ऐंसई करत है कां कां भटकत फिर हों मारो मारों में। ई गावं में कम सें कम तुम तो हो बोलवे वतावे खों।

वसंत – अरें ऐसीं वात नैयां भैया पूरौ पूरौ तुमाऔ साथ दैहों में जानत हों दुनिया देखी है मैंने बस तुम भर नें हेटी खइऔ कऐं खेत हों मो पे विसवास है के नई ऐ?

कुदऊ – अरें विसवास नें होतो तौ मैं फिन तुमाऐ कनें आउतेई काये खों। आपदा में तौ मित्रतई परसों जात। मोरी तौ और गेरऊ से आसा टूट गई भैया।

वसंत – ठीक, है में हो ना। तुम अपनी हिम्मत भर नें टोर दइओं वाकी सब में देख हों। जैसों जैसों कत हों सो ऊ तुम करत जाव जीवन में तौ उतार चड़ाव आउतई जात रेत।

चंदा – तौ फिन कुदऊ नें मिंत की बात मान लई उर चार ठैया बुकरियां पालवे को डोर डार लओ। कछु दिना भऐ सो ऊकी एक बुकरिया मर गई। तो ऊके मित्रत नें ऊके बदले एक और बुकरिया लिववा दई। कछू दिना फिन बीते सो एक बुकरिया मर गई। मिन्त ने फिन उयै एक बुकरिया मोल लिवा दई ई तरा सें ऊके ऐंगरें बुकरियन की गिन्ती तो रई चारई की चार। ऊमें फरक नई परन दओ मिन्त ने। सो ऐंसो कछू दिनन लो चलो।

कड़ोरी – फिन भैया, एक बुकरिया ब्यानी सो अब बुकरियां हो गई पांच। कछू दिनन बाद फिन दूसरी बुकरिया ब्यानी सो कुदऊ के ऐंगरें बज बुकरियां हो गई दे। अब ऊके मिन्त ने सोची के....

ईके बुरए दिना अब बीतन लगे हैं। जित्ते दिनन की जे गिरह दशा लगे तै सो वे अब सूदे हो परे हैं। ईसें अयै अब ठांड़ों होबे मैं जादा बखत नें लगहे। चलो अच्छो रओ कुदऊ ने मोरी बात माल लई उर करौं जी करकें इत्तौ दुक्ख झेल लओ। चलो अब आंगू देखत......

चंदा – सो जा सोच कें बसंते ने कुदऊ खों फिन चार और बुकरियां लिबवादई फिन कछू दिनन में दो बुकरियां फिन सें ऊकीं ब्यानी तौ ई तरा सें ऊकी गिनती बारा बुकरियन की हो गई। अब भैया मिन्त खों पक्कों विसवास हो गओ के अब कुदऊ जोन काम में हांत डार हें सो उयै सफलता मिलहैई, ई में फरक नैयां ! सो ऊनें अब उयै एक छोटी सी गल्ले की दुकान खुलवा दई। हरें हरें वा चल परी। ऊमें उयै मुनाफा भओ सो फिन तो गल्ले के संगें बजाजी को किरानें कौ ऊनें व्यापार चालू कर दओ।

कड़ोरी – कुदऊ सोई दोनी लगन उर मनत सें व्यापार में जुट परो। सो ऊकौं व्यापार बड़ गओ। ऊ एक जानों मानों बड़ौ बेपारी बजन लगो। गांव गांव में ऊकौ फिन नाव जाहर हो गओ। एक अच्छी साक बन गई। छोटे बड़े सबई उये मानन गौनन लगे। सबई से ऊकौ प्रेम व्योहार उर गरीबन्न सों नौका पौ सहारौ देवो उनें सुरू कर दओं। गरीब गुरवा उयै

खूब असीस दैन लगै ज्यांय सुनों सो कुदउ की चरचा अब दिन तो बीत गअै तै एक दिना दोई मिंत बैठै हतै। सो ऐसंई बतकाव चल परों। सो कुदउ नें बसंते सें बूजी।

कुदऊं - काउे भैया जौन बिना विपदा कौ मारो में तुमाओ कनें आओं तो, ऊ दिना तुमनें मोय और कौनउ तरा कौ बेपार नें करा कें चार ठैया बुकरियां पालबे की सलाय दई ऊकों भेद मोरी समज में आज लौ नई आओ।

बसंत - भैया बात जा है कै ऊ दिना कंजत में तुमें कौनऊ और बेपार कारउतो तो तुम सौ डूबई रअे से संगे में सोई दोई दीन सें जातो। में जानत्तों ऊ तुमाअे गिरह दसा अच्छे नें हते। सो मैनें सोची के तुम इतै छूके रैकें तौ बैठ हो नें ईसें कछू नें कछू करवाओं चइयें। जीसें तुमाओ मन लगों रअै उर में सोई धीरज धरें देखत रओं के भलां तुमायें दिना कब जो फिरत है काये के कओ नई जात के एक दिना तौ घेरै के सोई दिना फिरत है के नई।

कुदऊ - हओ जा तो अपन ने सांची कई दिन तौ कबऊ एक से कोऊ के नई रेत। समै तौ करोटा लेतई है पिरभू सोई कैंसी कैंसी परिच्छा लेत ऐं मोरी तौ किसमतई फूट गई ती गिरानी के दिनन में कोऊ नें मोरी सात नई दओं एक तुमई रअे जिनें मोय हिम्मत बदाई उर........

बसंत - भैया में तो तुमें मान गओ कै तुमनें मोरी बात मान लई ती नइंतर ऐसे बख्त पै तों मनख की बुद्धि उल्टोई चलत तुमनें धीरज से काम लओ उर में तौ जाई ताक में बैठो तो के जौन दिना तुमाई बुकरिया चार में पांच भई सो ओई दिना मोय भ्यात गई ती के अब तुमाअे दिना अच्छे आ गअे है तब तुम माटी छूहौ तो वा सोनों हो जैय। उर अब तु खुदई देख रअे हो ओई धीरज को फल।

कुदऊ - हओ सो जा बात तो है देखो मोरे संगै संबंदी जौन है सो ऊ बख्त पै उन्नें सोई मौ फेर लओं तो। ठीकई है अब ऊपर वारे की फिन किरपा भई है अब तो कछू बात की अपन खों कमी नैयां। ईसुरी कौ दओ अपन औरन के पुन्न परताप में खूब है।

बसंत - ऐई सें तो अब में के आ रओं हो कैअब तुम चाव तौ इतई रैकें अपनों कारवार बढ़ाउत रऔ उर चाय तुम अपनेई गांव जा कें उतई बेपार सुरू कर सकत। तुमाई गिरह दसा अब बदल चुकी हे ज्यांय रैहो उतई सुकी रैओ अब सफलता तुमाये पछारूं पछारूं फिरो करहे समज लेव।

कड़ोरी - भैया उ अपने गांव आ गओ उर उतै उनें पिन वड़ी दुकान खोलके अपनों बेपार करन लगो। धन दौलत खूब कमाओ। लच्छमी की अटूट किरपा भई।

ऊकी बैन खें भैया की दया सुदरबे को पतौ परो सो उतें मान पान न्योतो पठैओं उर किबाओं के तुमाओं भनेंज को परो सो उतें मान पान न्योतो पठैओं उर किबाओं के तुमाओं भनेंज को ब्याव है सो उमें खत्तम आऊने।

चंदा - भैया अपनी बैन के लरका मानें कै उ अपने भनेंज के ब्याव मे गओ। पे जाती बेरा जौन दो ठैया रोटी उनें पीपर तरें गाड़ दई ती वे सोई निकार कें संगै उनें ले लई। बकट की बेरा पै कीमती गानों गुरिया उन्ना लत्ता थार में उनें धरे तौ ऊके ऊपरें वे दोई ठिया रोटी जीन सर फफूड़ गई ती वे सोई धर दई।

कड़ोरी - नतैत ओर रिस्तदारन खो गांव के दूसरे मनखन खों जो देख के भौत अचरज भओं के इत्ती धन सम्पदा देत भअे पै ईसुरी फफूड़ी रोटिअन खो दैवे वो का अरथ सौ भैया एक जनन ने बूजी काअे भैया और तो सब ठीक है। अपन ने बैन को खूब मान पान राखो अच्छो चोकट ल्याअे। कोनऊ बात की कमी नई राखी। पै जे सरी फफूड़ी रोटिअन खो सोई सबसे ऊपरे अपन ने धरो इका का मतलब ऐ?

कुदऊ - अपन ओरन खो बताऊ ऐं। ईको भेद तौ मोरी बेनइ जान है। इये बताबे की कोऊ से मोय कछू जरूरत नैया।

चंदा - बैन सो वे रोटी देखतई पुरानी घटना आखन के सामू झूलन लगी सो वा हिनवियन भर भर रोउन लगी। ऊने सोई कोऊ सो कछू नहीं बताओ। भैया बैन दोई जने भर

जानते, और सबई जनन के लाने तौ या पहेली पहेलीअई बनी रई।

कड़ोरी – बैन के ते से भाँत न्यौत के जैसई कुदऊ घरै लोटो तो सौ ऊकी ससरार वानर खों पेलो-पेलो के दमांद तौ मालदार आसामी हो गये है। मोठन्ने सोई अपने तो ब्याव होवे को न्योतो पठेओं।

चंदा – न्योते में उत्तर में ऊने सोई दो ठैया हीरा जड़ी मुंदरी पठे दई। ससरार वारन की समज में नई आओ के इकौ का कारन हे। सो उन्ने अपने लरका खो के कुदऊ के सारे खो भेजो। ऊने उयै सोई एक सोने को कठा देके विदा कर दओ।

करोड़ी – लरका के लोटवे पे घर वारन ने तोतो के आखर माजरा का है दमांद जू ऐसो काओ कर रये है। आठत नैया। सो ससुर खुदई गओ उर उन्ने बूजी।

ससुर – हमने तो न्योतो भेजो तो कै अपुन की अवाई हुयै पे अपुन खुद ने आके हमे जे गैने गुरिया भेज रओ हो सो ईको का कारन आय है ?

कुदऊ – अपुन ने न्योतो मोय नई बल्कि मोरे पेंगरे जौन धन सम्पदा हो गई हे सो उयै आय भेजो है। अपुन को मान पान उर नेह मोरे कारें नैया जिनकऊ हैसियत के लाने आय है जौन के पे आज पा सको हों।

ससुर – और पावने अपन कैसी केत पै। अपनई से तो सबइ रिस्ते नाते जुरे है। भला अपन खों मैं कैसे बिसर सकत? अपन तो मोय सगे लरका से बढ़ के हो।

कुदऊ – कजंत मोरे लाने अपन को कछू नेह होतो तो ऊ दिना बिपदा में परो अपुन के दोरे में गओ तो है के नई ? सो उदना अपुन मोय ऐसो ने दुत्कार देते। ऐइ से अपन खों सच्चऊ को जौन चीज प्यारी है माने मोरी सम्पदा सो मैंने अपुन खे पठे दई। सो अपुन तो कोई को आव भगत करो ओई को पान पान राखो बस।

चंदा – ससुर बिचारो पानी पानी हो गओ। उर ऊ अपनो सो मो लैके लौटो उर घरे चलो गओ। ऐई से केत है कै बखत तो निकर जात पे बात रै जात। बता तो गिट जात पै खता की सूद बनी रहत।

पी. 32/डी-10/ टेकनालॉजी के बाजू में,
कचनार सिटी विजय नगर, जबलपुर (म.प्र.)

एक लोक कहानी

– चिन्तामणि वर्मा

तुक्क तुक्क तैना।

हम लड़ई तुम बैना।

आज काल घाई गर्मी के दिन हते।

जंगल के तला तलईया सब सूक गए ते।

सो एक लड़इया (सियार) गांव के किनारे

की एक तलैया में अपनी प्यास बुझावे आ गऔ। और गैल तरफ पीठ रकै पानी पियन लगो। इतने में एक बैना (रूई धनुकवे बारौ) सड़क पै हो निकरो। ऊऐ एकाएक देखवै लड़इया घबरा गओ लड़इया जानबरन में सबसै जादा चालाक होत सौ बौ बोलो।

कॉंधे धनुष हांत लएं बाना।

कहाँ चले दिल्ली सुलताना।।

जौ सुनकै बैना भैत खुश हो गओ

काए सै के रूई धुनवे कौ पीजन धनुप की शकल कौ होत और पींजन चलावे की जौन मूठ होत बा तरह होते। बैना लड़इया खॉं मारबौ भूल कैं भौत खुश हो गऔ और

बोलो :-

बन के राव बड़े हौ ज्ञानी।

बड़े की बात बड़े नै जानी।।

और जई सै लड़इया ने जानी के अबतौ बैना भौत दूर निकर गऔ और ऊको कछू नई

बिगार सकत सोचे बोलौ कैः

तुक्क तुक्क तैंना।

हम लड़ई तुम बैना।।

और लड़इया जा कैकैं डॉग में घुस गओ। बैना रै गओ कै लड़इया भौत बदमाश जानबर होता है।

चिन्तामन वर्मा

चेतगिरी कालोनी छतरपुर (म.प्र.)

दूरभाष - 242047

जल समाधी

- डॉ. स्याम बहादुर श्रीवास्तव 'स्याम'

प्रान निकरती बेरौ कित्ती बिलबिलानी हुऐ विचारी बुधिया गहरे पानी में बिकराल मगरमच्छ जब जिन्दह में ऊको मॉस नौचत हुऐ तब बो कैसी छटपटानी हूऐ। बौ दुख सबदन में कैबो संभाव नइँ लग रओ। अपनी बार घोर विपदा की घरी में बौ यादउ करती तौ कीकौं दुनिया में कोउअउ तो नई हतौ बाको।

अन्दाजन 50 साल की उम्मर वाली बुधिया दो दो पट्ठा ज्वान मोड़न की अम्मा उर दो चार नाती पोतन की आजी हती और हतो सुहाग के नाव पै एक अच्छो खासो तन्दुरूस्त रामाधीन नाम को पती। ऊके सरीर में कोढ़ हो गओ तो जीकारन ऊकी नुगरिया गलन लगी ती। घर खेत किसानी को हल्को कारबार हतो ईके संगै कुम्हार जाति हती सो मट्टी कै बरतन बगेरा बनाबे को काम सोउ होत तो जीसे दार रोटी सुख से चल रईती। बुधिया की ऑखन में मोतियाबिन्द आ गओ तो सो उऐ धुँधरो दिखान लगो तो।

उगरियन को गलबौ दैखके गॉव उर मुहल्ला के लोग लुगाई कोढ़िन कैके ऊऐ घिरना की नजर से देखत्ते। इत्तो तक हो गओ तो कै ऊके पति समाधीन बेटा बहू सबई उऐ हेय दृष्टी से देखन लगेते। हरे हरे बौ इन सबके संगै उठवे बैंठवे उर वाते करवे को अपनो हक्क खो चुकी ती। घर में अलग सी वनी एक कच्ची खपरन छवी कुठरिया में ऊके रैबे की विवस्था कर दइ गइती। विवस्था के नाम पै एक पुरानी टूटी सी हल्की सी खटिया पुरानो खेसरा उर पिछौरा और खावे-पीवे के लाने कछू अलमोनियम उर कछू मट्टी के वासन और पानी के लाने एक मट्टी का मौना हतो बस। गॉव में आम रस्ता से दस कदम दूरी पै हती वो कुठरिया जीमे खटिया पै बिछे मैले-कुचैले विछोनन को संजा सबेरे फटकार कै विछा लेती उर उनइँ मे डरी रहत्ती। एक पुरानी सी भदरँग धोती ब्लाउज भर हती ऊकी पोषाक। लरका-बहूऐ जब झकन नइँ जाती तो उतै तौ उन उन्नन को धोउत को हतो। उन्नन से उर बिछइया से ऐसी वदवू आउती कै सहज में आदमी बीमार हो जावै। नरक जैसो भोग भोग रहती वो बिचारी। कछू देर को कुठरिया से वाहर गैल तरको आके बैठ जाती उर गैलारिन को टुकुर-टुकुर देखत रत्ती। जादॉतर कोउ ऊसे बोलत नई हतो काउ गैलचलत गॉव के लोग लुगाई ने प्रेम से बोल के हाल चाल बूझ लए तौ वो उऐ देवतउ से जादॉ मान के अपुन को धन्न मानत्ती नइँतौं चुप्पई बैठी रती। सबई कोए को लाइलाज माने बैंठेते सो ऊके इलाज की सोचतउ नइँ हते। कछू जने बुधिया से हमदर्दी में कहन लगत्ते के पूरब जनम में जाने का करनी विगर गई जो ऐसो रोग तुमाये पिछाउ पर गओ। भगवानइँ बेड़ा पार करहै जिन्ने ई दुख दओ। हाँ हूँ करके बुधिया भीतरई भीतर अँसुअन के घूँट पीके रै जाती। लोग पिछले जनम के कुकरमन को फल भोगबौ मानके ऊ दुखिया को अपराधिनी नाई देखत्ते।

अंधविश्वासी भारतवासी न जानें कबलौं ऐसी अग्यानता उर रूढ़ीं के कारागार में डरे सड़त रैहै रामई जानें ऐसे लोग अपनी संतान कों का सिखा पैहैं हम नई कै सकत। अचरज तौ जा जानकें भव कै गावं के कछू जनन नें ई बुधिया के कोढ़ की बीमारी कों ऐसी निराधार घटना सें जोर दओ जियै सुन के बुध्धी चकरा जात और सोचवे पै बिवस करत है गांव की अथाई में कछू जने बातन बातन में एक गुप्त घटना को बखान कर रएते जो बुधिया के कोढ़ सें जोड़ी गई ती। एक जनों बोलो कै एक बूढ़ें पुराने आदमी नें जा बात बताई है तो सुनो उनउँ नें कही कै जा गुप्त घटना एक दिना बुधिया की सगी बहन नें उनें सुनाईती कै-

भौत दिना हो गए ऊकौ भइया एक भौतई गरीब उर बेसहारा काउ आदमी को एक मौटो-ताजो पलैंत बुकरा, जियै ऊ गरीब नें अपनों पेट काट कें पइसा इखट्टे करकें खरीद पाओतो चोरी सें उठा ल्याओं अपने घरै। ऊ बुकरा कों रातइ-रात मार-काट कें ऊकौ गोस बनाकें बुधिया उर

ऊके भइयन नें मिल कें बड़े स्वाद में खाओ। बुकरा चोरी गये पै बो दीन-हीन बिचारों गरीब हाय-हाय करें फफफ फफफ कै रोओ। ऊनै अपने बुकरा की चोरी सबई छोटे बड़िन कों गावं में सुनई पै उऐ कहूँ सें कौनउ मदद नई मिली और न कउ चोरी को सुराग मिलों बुकरा बाले की अति आरत उर दुखी आतमा सें बेर-बेर आह निकर रइती। उनें अंत में क्रोधित हो बिलखत भये जोर जोर सें नर्राकें (चिल्लाकें) सबके सामूँ कही जी काऊ ने हमाव बुकरा चुराओ हुए या उऐ मारो खाओ हुऐ बौ निच्चेइ कोढ़ी हुए कोढ़ी। हे भगवान! बौ कोढ़ी हो जाय कोढ़ी। ओ ऊपर बाले। तुम तो सबै देख रए कै हमाए संगै ई घात कीने करी बौ घात करउआ कोढ़ी होबै भगवान कोढ़ी बस ओई गरीब की सराप के कारन बुधिया और ऊको एक भइया कोढ़ी भये। गरीब लाचार की हाय कभउँ खाली नइँ जात। जाकौ ध्यान तौ सबई को राखे चइये। तुलसी बाबा ने भी कही है - "जिन कृत कर्म भोग फल भ्राता" सो भइया। अब ऊकौ फल बुधियउ भोग रइ। ई में कोउ का कर सकत आय।

छुआछूत को रोग मानके गॉव के बिरादरी के उर नाते रिस्तेदार लोगन ने रामाधीन बुधिया के घरै जाबौ बन्द कर दओ तो। कछू हितैसी लोग रामाधीन से कह उठते कै भइया भाग्य ने कैसो करोटा दओ कै जे दिन देखने पर्रए। बुधिया के कोढ़ ने घर परिवार बालिन के माथै कलंक को टीका लगा दओ। अभै तो कछू बात नईया जब नाती पोता व्याव जोग हो जैहे तो उनको व्याव चलाव होबौ मुस्किल हो जैहे। चौये जोन काम काज होय तुम देख तो रए के तुमाए घरै सबने आवो बन्दइ सो कर दओ। करोउ जाय तौ का की कीकौ मो पकरे की कीकौ समजावै। अब तौ भइया कौनउ उपाव सोचो बोउ ऐसो कै ना रहे बॉस ना बजे बॉसुरी। फिर ईसुर की जैंसी इच्छा। जो बदो लिखो हुऐ बो तो हानेई है।

- का करें भइया ! ना जाने कौन कुकरमन को फल भोगने पर रओ हमे। ना जाने जा लुगाई से कभै पिण्ड छूट है। बड़ो धरम संकट है हमपै। उऐ मौतउ तौ नई आउत। रामाधीन ने अपॅए मन की विथा कै डारी। बा हितैसी की हमदरदी के रूप में कही गई बानी से प्रगट अथाय वेदना के बिस भरे घॅट भीतरई भीतर पी कै रै गओ बिचारो।

बुधिया के मोड़ा पै भी ऊको हम उमर वाले संगी-साथी बिंग बान कसन लगे ते जैसे अरे बिरजू भइया। अब तो तुमाओ मोड़ा ब्याव जोग हो गव बरात कबै करा रए ? ऐसी धूम-धाम से बरात ले चलिओ कै समाधिन देखतियईं रै जाये।

बिरजू ने बे व्यंग बान सहे उर सुनके बनावटी हँसी हँसी उर हाँ हू करके अपने काम लग गओ। मताई के कोढ़ से चुचवाती हाँतन-पॉवन की नुँगरियन को ध्यान करके उऐ मनइँ-मन कोसन लगो पै बिचारे को बस का हतो। बौ तो पढ़ोउ लिखो नइँ हतो जो काउ डाक्टर लौं जातो उर कोढ़ के इलाज को परामरस करतो।

- बहू। ओ बड़ी बहू भूक लगी रोटी पानी दै जऔं। बुधिया ने डिरात सी बानी में दूर कुठरिया की बजै से कछू ऊँचे सुर में आबाज दई।

- कौनउ काम धाम तौ है नइँयॉ जब देखो तब खावे पै चढ़ी राती। जा जानती कै हमसब जने इते फुरसते बैठे। तुमाए लाने पकवान बनाउत रयँ बस। जब रोटी पैलेहै तब हम खुदइँ परस कै दै जैहै। नेकउँ सन्तोसी नइँया। बड़ी बहू ने ऑगनइ से गरो फार के सास को उत्तर दओ।

- कोढ़ के संगै मतीयउ सठया गई। चॉयँ जब चिल्लाने। न देखे टेम ने कुटैम। सरमउँ नइँ लगत। गैल को घर कोउ गैलारो सुने तौ का कहै। भगवान ऐसिन की मट्टियउ तौ नइँ समेटत। छोटी बहू ने भी जे खरी-खोटी सुनावे में नेकउ आलस नइँ करो।

बिचारी बुधिया घर में सबई के बोल-कुबोल रोज उर दिन भर सुन सुन के बिस जैसे घूँट पी कें रै जाती। टैंम-कुटैम रूखो-सूखौ जैसों खाबे को दओ जातौ चुप्पचाप पानी के घूँटन खाके अपनो जीतारौ कर रईती। भगवान से अपनी मौत कौ दिन टेर करती बा कुठरिया में डरी डरी।

संजा बेरॉ जब बुधिया के नाती पोता लरका बहुये अपने ऑगन में इखट्टे होकें दिनभर की भई बीती बाते करें

बच्चन के संगै बहू बेटा सब बैठके मनोविनोद करें और कभउँ-कभउँ सब उतै ठट्टा दै के हँसे तौ एकान्त अकेली कुठरिया में बैठी बुधिया के कान उतइँ लग जावै। ऊकौ मन उर अन्दर की ममता उतइँ लै ले जावे। परिवार के ममत्त कारन बौ बेर-बेर भीतर आँगन में जाबे को मन करै और फिर मर्रा के रै जाबै अपॅए रोग की सोच के। सोचै कै बोउ जाके सबके संगै हँसे खेलै अपने सुख दुख की बाते करै पै एकई दिन में सोचत कै कहू लरका बहूयें भगा न देवे। रोज के बरताव से तो ऐसाई लगत और फिर कउँ ऐसो न होय कै हमाए पैंचे से उनकी हँसी खुसी उदासी में बदल जावै काये से कै बे सब तो हमाई सकलउ देखबौ पसन्द नइँ करत। ई सब सोच के बुधिया भीतर नइँ जात उर भगवान से प्रार्थना करत कै हे ईसुर। हमाये घर से सुख समरिध्धी कभउँ न जाबै। सब दूद करूलाल करे। बाल-बच्चा ऐसेई हँसत-खेतल रहै। नेंक देर को खुस होकें और फिर मन मार कें बैठ जावै।

सिक्छा के नाव पै घर में इक्का दुक्का लोग साक्छर हते। जब देखो तब खरी-खोटी सुनत-सुनत बौ अपने जीवन से पूरी तराँ ऊब गई ती। अपनी जबानी में और बैसारी (ज्वानी को उतार (प्रौढ़ावस्था) अवस्था में अपने पती के संगै इनइँ मोड़ी-मोड़न को पालबे के लाने उनके सुख के लाने तन टोर पैसरम करो, दिन को दिन, रात को रात, नइँ समजो, लगे रये इन वसकी सेवा में, कै जे सियाने हो के हमाये दुख दर्द में शामिल रैंहें। हमाए बुढ़ापे के सहारे बन है पै हाय सबई आसा विसवास पै पानी फिर गऔ। कोउ काउको नइयाँ। इत्तो सब कछू भगवान के हेत करते उनसे मोह ममता लगाते तौ कल्यान हो जातो और जे दिन न देखने परतें। ऐसो सब सोच-सोच लटी दूबरी दुखिया बुधिया कुठरिया में फफक फफक के रो लेत्ती ओर फटी-पुरानी मैली कुचैली धुतिया के एक छोर से अँसुआ पोंछ लेत्ती।

एक दिनाँ ऐसो आओ कै गाँव वाले हेती-बोहारियन नाते रिस्तेदारन आदि के तरा तरा के बिंग्य बानन से आहत हाके हतास दुखी होके गुस्सायकें रामाधीन ने बुधिया से कैइ दई कै तै मर काए नइँ जात। तेरे मारे घर भर परेसान है। गाँव समाज में हमाव सबको जीबौ दूभर हो गओ। कोउ कछू कात कोउ कछू कात। कॉलो उने का ऊतर देवैं। काउ को मौ तो पकरो नइँ जा सकत।"

जे सब बाते रामाधीन ने अन्तर आतमा से नइँ कइँती। सोचन लगे आखिर सात भाँवरे डारके अपनी अरधांगिनी या जीवनसंगिनी बना के पालको में वैठार के अपने घरै ल्यायते उऐ हम। जीवनभर ऊने कँधा से कँधा मिलाके सुख दुख पैसरम में संग दओ तो। ऊने सबइ तराँ से अपनो प्रेम उर सेवा दैके हमे काम करबे उर अँगाउँ बढ़वे की सकती दई है। विना पतनी के पती को जीवन इकदम अधूरौ उर रसहीन सो होत है।भरी बारूद सी दाग कें फिर रामाधीन ऐसी बाते सोच के भौत दुखी भये। बुधिया के लाने हमेसा प्रेम हतो रामाधीन के मन में दयाभाव उर प्रेम में भरे रामाधीन कहन लगे विरजू की अम्मा। तुमई बताओ कै ऐसी हालत में हम का करें उर कहाँ जायँ समाज में कैसे जियें। जा दुनिया हमाई दुस्मन बनके हमाए पिछाउँ पर गई।

बुधिया पती की करूना भरी बाते सुनके भौत दुखया गई ऊको रहो सहा धीरजउ ज्वाब दे गओ। दुख भरे विचारन के गहरे सागर में डूबन उतरान लगी। नींचे को धुक्की डारके सोचन लगी बिरजू के वापू स्यात ठीकई कै रए। बेउ तो आखिर कब लौ समाज की अमानुसी भावनन से जूझै। हमउँ कबलो बहू बेटन के दुखन को कारन बने रहे। उनउँ की अपनी बंसबेल बढ़बे से का रोकी जाए काएसे कै एइ इस्थिती बनी रही तौ हमाए मोड़न के मोडन को ब्याब होबै सें रै जैहे तब उनकी बंसबिरधी काँसे हुऐ।

बुधिया उर रामाधीन दोउ जने गम्भीर भये चुप्पी सादे धरती में आँखे गड़ायें कछू देर बैठे रए। रामाधीन उतै सें जायेइँ चौउत्ते कै छै सात साल के उनके पोता नें पिछाउँ से आके रामाधीन के कँधा पै हाँत धरत भये कई "बब्बा"। तुम इतै बैठे हमाई अम्मा कातीं कै आजी के ढिंगा न जाव करो नइँ तौ तुमे रोग लग जैहै। बब्बा तुमउँ आजी के ढिंगा न बैठो करो। चलो अम्मा भीतरइँ टेर रइँ कै रहँती कै कैदो

गइया जौरा टोर कैं भग गई। ''

हाँ हाँ चलो लला! कहत भये उठे रामाधीन। पोता बब्बा को हाँत पकर के खेचत भओ भीतर लिवा लै गव। बुधिया अपने पेता को बॉहन मे भरकें ऊकौ अलोल मुख चूमबे के लाने तरसत भई ऑखन से देखत रै गई और बच्चा देखतइ देखत ऑखन के सामूँ से ओझल हो गओ। बुधिया सूक्ष्म में देखत भई कोनउँ बिचारत में खो गई का करती बिचारी।

कछुअई दिन बीतै बुधिया ने एक दिना अपने पती रामधीन को अकेलौ पाके अपने ढिंगा टेर लओ। रामाधीन अनमने मन ऊके ऐंगर आ बैठे। बुधिया काउ बैरागी जैसी इस्थिती में सान्त सी हती। बोली

– ' एक बात कहैं मानहौ ?'

– का कयँ चॉउती कओ। कछू खिन्न मन से रामाधीन ने बूझी।

– देखो बिरजू के बापू दुखयाबे की कौनउँ बात नईंयाँ। लगत ईसुर ने हमाई बिन्ती सुन लई। बुधिया ने धीरज बँधाउत भए बैन बोले।

– सो ऐसो का हो गव। का भगवान ने आके तुमसे कछू कही है। सो ऐसे कै रइँ? रामाधीन ने बूझी। बुधिया ने झूँट को सहारो लैके अपँइ बात कही तुम कछू ठीकइ समजे बिरजू के बापू आज रातके मोय एक सपनो भव। ऊमै का भव कै एक साधू महातमा आये हमने उनके चरनन में मूँड धरौ। हमाई देव देखके बोले कै जौ का है। हमने अपँव दुख दर्द बताके हाँत जोरे उर अपने उद्वार को मारग बूझो। बे बोले तुम अपने माया मोह से अब मानो कै छुट्टी पा गइँ। अब तुम बैरागी की हालत में हो। हम तुमे लैन आये है। ईसुर की आग्या है तुम जमुना-जल में असनान करो। गहरे पानी में जाके जब तुम डुबकी लगैहो तब तुमे उतईं उनके उर अपने असली रूप के दरसन हूऐं। ऐसो करे से तुमाव उर तुमाए परिवार को कल्यान हूऐ। इत्ती कैके साधू महाराज अलोप हो गए।

अब अपुन से हमाई जई बिन्तती आय कै इतै असफेर जहाँ कहूँ जमुना नदी होय सुनसान जगा (घाट) होवै ऊहै चलो। ई बात को काउऐ पतो न चलै नईं तो भगवान की किरपा पावे सें रै जैहैं। पवित्र जमुना जल में सपनन में ऊनें सबरे बताउत कै तरन तारन हो जात तौ होय काए नईं हूं। हो गओ तौ कल्यान उर भगवान में भक्ती समर्पित नईं कौ कल्यान। पति के जिन्दा में मतलब सुहागिन की जीवन सार्थ सब बताउत कै उनें बैकुण्ठ की किवरियाँ खुली मिलत सबई तरों से उध्धार हो सकत हमाव बस अपुन के मेंईत की इच्छा है। हमाई जमुना में जल समाधी को आनन्द लैबे की भौत इच्छा है। अपँई बात हम कोंसे कहैं। तुम हमाई ज अन्तिम अभलाखा पूरी करदो तो बड़ी किरपा हुए और हम अपने सपनेउ को असर देख लैहैं। बिन्ती हमाई सुइकार है के नईं ? हम तुमाए पाँव परत बिरजू के बापू ! हाँ कै दो। बुधिया ने जे सब अपनी मनगढ़न्त बातें एकई साँस में अपनी इन्द्रियन पै संयम करके रामाधीन को सुनाई और चुप हो गई।

रामाधीन ने बातें सुनकें सबइ पहलुअन पै बड़ी गंभीरता में बिचार करो। परिवार समाज नाते रिस्तेदारी बंसविरधी आदि की सबई झाँकी तुरतई ऑखन सामूँ एक एक करके घूम गई। मन मै तै कर लई कै बुधिया की जा इच्छा पूरी करबेई में सार है और कछू हम सबकी मुक्ती को मारग नईं सूज रओ। रामाधीन बनावटी मोह ममता मिली बानी में बोले देखो बिरजू की मम्मी। कउँ ऐसो न होय कै तुम जल समाधी और भगवान के दरसन के लाने उतै जाओ उर जमुना को अथाय जल देखके तुमाओ मनई बदल जावै। फिर इतै लौटके जब आओ तो जग हँसाई होय नईं नईं सो चिन्ता तुम कतई जिन करो कै कोनउँ हँसी को औसार आहै। बुधिया ने तुरतई जब दओ।

रामाधीन समज गए कै बुधिया ने जो सपनो सुनाओ ऊमें कतई सत्ता नईंयाँ। उऐ भी कोनउ बहाने की तलास हती सो चुपचाप कछू कहे बिना उतै से उठके चले गये।

बुधिया का बिचार कउँ बदल न जाय ई कारन रामाधीन ने एकान्त में दोउ बेटन को बैठार के गुप्त बातें करी और सब

कछू उनमें तै हो गओ।

जड़काले की रात। अन्दाजन आधीरात को टेम हुइये। एक खाली बैलगाडी बाहर गाँव लगा दई गई जीममें एक फटैला खेसरा बिछोतो। रामाधीन ने बुधिया के लिंगा चुपचाप जाके जल्दी बाहर गाँव चलबे की कही और उऐ बताई कै जमुना नहाबे चलने है। गाड़ी तइयार ठाड़ी। बुधिया को सब कछू समजबे में नेंकउँ देर नइँ लगी। जैसी बैठी परी हती तैसियइ उठी उर एक फटोसो ओढ़ के चलबे को तइयार हो गई। बुधिया के मन मे ममता जगी उर एक बेर नाती पोता उर बहुअन के मौ देखबे को मन भओ पै मन मार कै रै गई ऐसो रामाधीन की जल्दी माचबे उर मौ बन्द राखबे की आज्ञा के मारे न हो सको। उऐ तुरतइँ चोरन की नाँई लिबा ल्याके बैलगाड़ी मे बैठार दओ गओ। बैला गाड़ी मे नहे ठाड़े ते। गाड़ी तुरतइँ तेजी से चल दई। गाँव मे कोउ नइँ जग रहो तो बा बेरॉ।

कारी रात साँय साँय कर दई ती। हार मे एक दिसा मे लिड़इया हुवा हुवा कर रएते। दूर कटीले जहरीले पँखनन वाली सेंई फेकर (बोल) रईती। लुखरियाँ कभउँ कभउँ ठंड के मारे खुक खुक करकें बोल रइँती। बौ रात को भयंकर वातावरन मानो आदमी को जिन्दइ निगले चाँउतो। बैलन के गरे की घन्टिया जंगा सबे उनके गरे से उतार लये गये ते। कच्ची उर बिल्कुल एकान्त रस्ता जितै से जादा आदमियन उर वाहनन को आबौ जाबौ नइँ हतो ऊ गड़लीका धरके वैलगाड़ी लै जाई जा रईती। रामाधीन कछू काउ से बोलै विना उर वैलन को बोलके हाँके बिना मतलब हाँत उर हेंकना के सहारे बैलगाड़ी तेजी से चलायें चले जा रएते। जल्दी जल्दी चलबे के मारे बेलन को बोलके की नकुअन से फुस फुस साँस चलबौ सुनान लगोतो। उनके दोउ बेटा बिरजू उर सरजू गोड़ी से कछू दूर पिछाउँ हाँतन मे अपने अपने लट्ठ लयें धोती कुरता उर गरम रूई भरी सदरी पैने पाँवने पन्हइयाँ पैंने साफी से मूँड नाक कान मौ ढाँकें बाँधे चोरन की नाई आपस मे कानाफूसी करत भये पैदल चले जा रएते। बुधिया भीतरइँ भीतर दुखया के ईसुर को सिमर रइती। जा लगत्तो कै कोनउ बुकरा बली चढ़वे जा रओ होबै जो मरवे के सदमा के मारे बिल्कुल चुप्प भगवान को सिमर रओ होवैं। बुधिया की जा दसा हती। रामाधीन ई कारन बात नइँ कर रएते कै कउँ मोह ममता वाली बात न फँस जावै जो बनो बनाव काम बिगार देबै।

लगभग दस किलोमीटर की दूरी तै करके बैलगाड़ी जमुना नदीके एक ऐसे सुनसान घाट पै ठाड़ी कर दई गई जहाँ गहरो अमोघ जल हतो और खटपट की आवाज सुनतनइँ खैम बड़े बड़े मौटे थूथर वाले भयंकर मगरमच्छ अपनी सिकार आई जान के इखट्टे हो जात्तो सो आजउँ सिकार आई मानके अपँए मोरचन पै आन लगे। अन्दाजन ढाई तीन बजे दत्ती कटकटात ठण्ड वाली रात को टैम हूऐ बैलन को गाड़ी मे से खोल के गड़ियइ से एक लॅग बाँध दऔ गऔ। रामाधीन ने अपनी जीवनसंगिनी बुधिया से प्रेम भरे शब्दन मे कही बिरजू की अम्मा जमुना नदी के घाट पै अपुन आ गए। ब्रह्ममहूरत है परबी की बेरा हो गई। अब गाड़ी पै से उतर के इसनान करडारौ। अपने सपने को फल पूरौ कर लौ। ई वेरा परबी लये से ईसुर पिरसन्न होत है। शुभ काम में देरी न करो। कोउ देख न पाबै पेली परबी तुमाई होबै।

– हाँ अम्मा ! बापू ठीकइ कै रए। आओ हम गाड़ी से उतार देबैं बड़े बेटा बिरजू ने बापू की बात को अँगाउँ बढ़ाउत भए कही उर कोढ़ से बिचकत बिचकत से अपँइँ अम्मा को एक हाँत को सहारो दैके गाड़ी से नीचे उतार ठाड़ो करो। जिने नौ मास पेट मे सँमार के राखौ जनम औ पालन पोसन करो दूद पिबाके उर तेल मालिस करके बड़ो करो हर तरा को कस्ट अपने ऊपर लैके सब सुख दओ जिनकी रक्छा उर सुख समरिध्धी के लाने कइयक पाथर पूजे तन टोर मेनत करी बेई बेटा आज हमाए दुरदिनन मे अपने दाइत्व को निरबाह जमुना नदी पै ल्याके ऐसे कर रए। अपँइँ मताई की काया की जिन्दइ मे बोटी बोटी नौंच नौंच के बिकराल मगरमच्छन को खबाबे के लाने जल्लाद बने ठाडे है। दूद को रिन चुका रए बिचारे। मातृऋण चुकायें बिना उनकी मुक्तीयउ तौ नइँ हूऐ। बेउ बिचारे का करे पढ़े लिखे तौ है नइयाँ जइऐ

मानत मातृसेवा।

सात भॉवरे डार के सुख दुख मे संगनिभाबे सात पॉच बचन सुइकार करके भरी समाज बिरादरी के सामूँ जो बड़ी सान से ब्याव करके पालकी मे बैठार के अपने घरै ल्याएते जिन्दगी भर हमाई सेबा लई बेइ पतीदेव प्रानप्रीतम आज हमाए नेकउँ झूँटे कहे भये सपने को जानमेल के रातइ रात चोरन की नाई जा घोर नरककुन्ड मे हमे ढ़केलबे के लाने बिल्कुल तइयार ठाड़े जमुना पै। का इन नाते निस्तन को जोइ करतव है या दुनिया मे सब स्वारथ भरो प्रपंच है नाते रिस्तन को।

अपने पतीदेव उर अपनी जाई सन्तान दोउ बेटन के मदें ई तरॉ सोचत भई बुधिया उने ऐसे देख रइती जैसे कोनउॅ बली कौ बुकरा चमचमात धार बाली खड़ग को देख रओ होबें। बुधिया को करूना से गरो भर आओ। घुसी घुसी सी ऑखन में अॅसुआ भर आए पै कछू बोल नइँ पाई। उऐ काउ मे भी अपनोपन नइँ दिखा रऔ तो। कोउ सइ ढंग से नजरउ नइँ मिला रऔ तो सोचके कै कछू से कछू न हो जाय।

रामाधीन ने ऊकी मांग मे संदुर लगाओं। माथे पै नई टिकुली लगाई। जबकैं ई सब तो सपरबे के बाद भयें चइयें। ऐसो सिंगार तौ तब करो जात जब सुहागन इस्त्री मर जात उर मरघट में दाह संसकार के लाने लै जाई। बुधिया सबकी मंसा समज गई कै जा हमाई अन्तिम बिदाई करी जा रई। ऊने झुक के पती देव के चरन छुये। मोड़न पै ममता भरी एक नजर डारी पै कहूँ से ममता को ऊतर ममता नइँ मिलो काउ ने दया या प्यार नकलियउ नइँ दिखाव और न दो सब्द कहे बुधिया सिकारी मगरमच्छन भरे जमुनादह तर को बढ़ चली। जल में घुसबे के पैले ऊने फिर एक बेर मानो दया की भीक मॉगत भई ऑखन आर्तभाव मूरक के उन सबै देखौ पै काउ ने नजर मिलाबौउ ठीक न समजौ। दूर ठाड़े कनखियन से ओ जात हेरत रए।

बुधिया ने जमुना मइया के किनारें ठाड़े होके हाँत जोर के बिन्ती करी हे जमुना मइया हमाए परिबारी जनन को कल्यान करिओ। उने सबइ कलंकन से छुटकारो मिल जावै और समाज मे मान सम्मान प्राप्त हो जाबै। अन्धविस्वास उर अग्यानता से हमाए भारत के लोगन को मुक्ती प्रदान करके सबै उन्नती के पथ पै चलाबे की किरपा करिऔ। जैसे सीता माता को उनकी धरती माता ने अपनी ओली मे लै लओ तो जीसे उनके सबई अपबाद खतम हो गये ते। तैसेइँ ओ जमुना मइया मोय अपने जल मे समाधी को इस्थान देव जीसे ई काया के कोढ़ को लगो कलंक सदा के लाने खतम हो जावै और हमाए परिबारी जन ई जल समाधी से निसकलंक हो जाबै। हे मइया जनिये का कौनउ रोगी बीमारिया दीन हीन अपाहिजन असहायन को जे दिन न दिखाइओ। लोग गुलाइयन के मन ऐसी सदभावना भरिओ कै वे मानव का सब प्रानियन पे दया करबौ और उनके संगै उचित बोहार करबौ जाने। हे मइया बिन्ती उर परनाम सुइकार करो।

बुधिया ने जमुना जल को छू के माथे से लगाओ कछू कदम पानी घुसके चली और देखतई देखत अपने कोढ़ के कलंक बसन को ओढ़े गहरे जल मे भयानक उर क्रूर मगरमच्छन के बीच सदा के समाधी लै गई।

श्रीवास्तव निलय
सरकारी ट्यूबबैल के पीछे गली
चुखी रोड, बघौरा, उरई (जालौन) उ.प्र.
पिन- 285001
मो. 07408439308, 07376094595

बुन्देली कहानी

पन्खी के पन्ख

– शकूर मुहम्मद

जीवन में अकै रेबौ भारी जोखिम कौ काम होत खास तौर सैं जीके मताई बाप होस समारबे के पैलाँ संग छोड़ देवै ऊखौं जीवन की गाड़ी बिना सहारे कें कड़ोरबौ भारी मुस्कल कौ काम लगत। काय सै कन लगत कै बाप की मरन उर काल की परन। पन्खी जौई सब भुगत रयते।

एक बैन दो भइया इनमै पन्खी सबसें लौरौ हतो गरीबी उर लाचारी सै मताई बाप ने बालपन में आँखे मींच लई। बड़े भइया उर बैन कौ जैसे तैसे नाते रिस्तेदार ने आँटे साटे से बियाव करा दऔ। बड़ौ भइया अपनी ससुरारै जा बसो फिर लौट कै पाछे नई तकौ।

पन्खी जैसन कौ पालन हार भगवान के सिवा कोउ न हतो। पड़वे लिखवे कौ समैया को गौर करै इतै तौ पेट भरबौ वज्जूर कौ काम हतो। कन लगत कै जी कौ कोऊ नई होत ऊको भगवान होत सो पन्खी गाँव में चाय जी कौ अटका औंज कर देवै उर ऊखौ आदी एक रोटी कौ टूँका मिल जाबै जीसैं ऊकी जिन्दगी की गाड़ी सरकन लगी। जनी मान्स ऊके भोरे भोरे पन उर कमजोरी जान कै जब चाय बुला बैठे ओ पन्खी। सुनतौ ले जा रोटी। पन्खी लामी साँस लेत भय दौर जावै। अकेले ऊतै कसाई कौ सुकौनौ उर कौआ ख जावै अरे राम कौ नाम लेओ। जैसई पन्खी दोरे में पौंचो ऊसे कई कै तनक सार कौ गौबर तौ डार दैं जो लौ ताती रोटी सिक रई। बौ गतकौ सौ देकै रै जावै सब खौ अपने स्वारथ के आँगे ऊके भविस की सोसबे की का परीती।-पन्खी के मूँड़ पै गौबर कौ तस्ला गौ मूत मूँड़ पै होकें चिचात जाबे। भरो तस्ला भूँकौ पेट तस्ला उठाव न उठवै बरया बटकै मसक मसक कै दुपर नौ गौबर सार की हो पाई फिर घर की मालकिन खौ ऊके काम कौ मौका मौआयनौ करने, फिर मीन मैक काड़ने फिर कऊँ जाकै कई कै जा मौ हाँत धो आ। काय सै जबर मारै उर रोन न देय।

पन्खी दौर कैं हैण्ड पम्प पै माटी सैं मौ हाँत धौवे पौंचो कभऊँ कभार भाग सैं साबुन कौ एक आद टुकड़ा डरो मिल जावै तौ मजा पर जावै नातर माटी कौ तौ संग हैई।

यैसई हरॉ हरॉ दिन कट रयते जितै मिली दो उतै रय सौ आज इनकी छपरी में तौ काल उनके मड़ा में तौ परौ मंदिर की दालान में रैन बसेरौ हौ रऔ भोजन मिलबे की तौ गारंटी हती पै मिलत बोई हतो बचन खुचन उर बसयार। बौ एई मै मंस्त हतो ऊकी देह तकौ तौ घी दूद खाबे बारे मोड़ी मोड़न सैं सबाइ दिखा रई कौनऊ कोनऊतौ जरभुन कै मनई मन कबै कै तकौ तौ न खाबौ न पीबौ लुगरॉयदे के गाल वरूला से फूल रय। ऊखो ईसुर किरपा कैलो चाय बरदान न कभॅऊ ताप न खॉसी उयै तौ कौनॅऊ भीतर से देवीय सक्ति हिम्मत बंदाये कै डरे रऔ दरबार में ढका धनी के खाऔ।

कबड्डी होवे चाय गुल्ली डण्डा खो होबै चाय दौड़ ऊकी सोंगरी कोऊ न कर पावै जैसई गुइयाँ बाटबे की बेरा होवे सब कोऊ पन्खी खै अपनी अपनी कोदू तानत फिरै काय सै जी तरप पन्खी ठॉड़े ऊकी जीत पक्की। कछू इस्कारौ करवे सै ऊखों खेलई खेल में चोट पॉचावे की कोसिस करबैं अकेले खेतल में को की कौ गुसइयॉ उर ऊखौ ढॅका न लगा पावै।

एक दिना का भऔ चिन्तामन कौ बरेदी नई आऔ अब का करै दुपर हो गय। गइया भैसे रमान लगी जे दोरे में ठॉड़े ठॉड़े सोसत रयँ कै इतनई में सामू सै पन्खी दौरत जा रऔ तो जा ठीक रई येई खौ बुला लो। ओ पन्खी! इतै आ! मौपे राम उर भीतर कसाई के काम। पन्खी उतई थम थमया

गऔ। अरे जा कई कै आज हमाव बरेदी नई आऔ सो तै तनक जे गइयाँ भैंसे हार ताई फिरा ले आ, हम तोय कछु देय। दवो बानिया देय उदार पन्खी नाई करकै तो जानत न हतौ पै बुरय मन से बोलो हऔ। उर गइयाँ भैंसे टिटकारत भऔ हार ताई चल दऔ।

दुपरै नदी की ढींपै पानी पियाबे ढ़ोरन खौं ले आय भैंसे पानी मे लोर गई गइयाँ कवा के छाँयरे में बैठके रौथन लगी। दूसरे गाँव के बरेदी मोड़ी मोड़ा येई घाट पै पानी पियाबे आय उर उनकौ जुरासन हो गऔ। बाल सुभाव जो ठैरे खेलवे कूंदवे की उमर खेलबे कौ मन भऔ उर उतई चिरौल के पेड़ पै अण्डा डाली खिलन लगी खेलत खेलत कुल्लक झेल हो गई खेल में इतनै मस्त भय कै ढोर गईयन की सुद नई रई खेल वड़ी देर नौ मड़रात रऔ उनमें सैं पन्खी खै सुद आई कै हमाई गइयाँ .....। उतै देखो तौ न गइयाँ न भैंसें छिन भर में खेल विलुर गऔ। अव का करै का न करै पन्खी डरा गऔ अव का कैसो हुइयै दुपरै लौटे लठिया ढ़ोकत घरै पौचो।

गइयाँ भैंसें टरेटे के किसानन की फसल कौ नुकसान करत भई सकारूँ बेराँ घरै पौंच गई पड़ा पड़ेरू छूटे हते सो वस चुखा गई। अव इतै चिन्तामन उर ऊकी घरवारी गुस्सयानी दोरै में ठाँड़ी रवै।। पन्खी खै लिंगा आतन देखो लखत्तर सुनाई उर चिन्तामन ने आव देखो उर न ताव बाँस की लठिया हाँत में लय हते पराई संतान जो ठैरी पराऔ मोड़ पथरा सौ। पन्खी खौं सड़ा सड़ मारन लगे वो गैल में खरा सौ लोट रऔ। नाँय-माँय होकै जनी मान्स तमासौ सौ तकवै काऊ की हिम्मत नई भई कै ऊखौ वचा लेवै।

करीमन चाची पै जो अन्याय नई तको गऔ वे तौ निस्कपट देवी सरूप हती लठिया टेकट भई ललकारत पाँची। काय रे दुस्ट काय प्रान लय लेत ई भटा से लरका कै। अरे भगवान खौं डरा अपनी सन्तान नइयाँ तौ का भई अरे बाली बच्चा तौ भगवान कौ रूप होत फिर ई अभागे कौ अपन सव के सिवाय को बैठो। तव कऊँ जाकैं चिन्तामन बरया बटकै रूको उर सीदो लठिया फैंकत घर में जा घुसो।

करीमन चाची ने पन्खी खै उठाव धूरा झराई अपनी धुतिया के छोर सै अंसुआ पौछे। अपनो पन देख कैं पन्खी चाची सैं चिपक कै डिड़या कै रोन लगो काय सै ममता भरो हाँत ऊके मूड़ पै हतो। चाची नाँय-माँय होत कत गई कै तकौ तौ भइया येसौ सोऊमारो जात ऊनैं तो ढोरन कैसे लठ्ठ मारे उर खुद रौन लगी। फेआ से लरका खौ बरा सौ फुलो दऔ। भगवान सब देखत सुनत वो सवकी चुटइयाँ पकरै इनकी सोऊएक दिना कुरदक्षना हुइये। भगवान के इतै देर है पै अन्धेर नइयाँ।

करीमन चाची घरे लुवा ले गई। दुगई में कमरा विछा दऔ ऊपैं पार दऔ भीतर पनी वऊ सैं कई कै बेटा दूद में हरदी डारकै तातौ करकै लेआ। तुरतई दूद आ गऔ फिर पन्खी खौ गोदी में विठा कै पुचकारत दुलारत भई मूँड़ पैं हाँत फैरो उर कई कै लो बेटा इये पीलो ई सैं तुमाओ दरद ठीक हो जेय पन्खी के रूप में मानव संवेदना सिसकन लगी ऊनैं हिचकी लेत भऔ दूद पिओ ऊखों फिर सै पार दऔ नौने कै कमरा उडा दऔ। चाची खौ कछू याद आ गई अपनी बऊ सै फिर सै कई कै बेटा तनक कनक नौने को हलुवा उर बनादे घी जादा डार दिये कौ जाने कब सै खाऔ हुइयै कै नई। कैनात है कै आदमी देवता न बन सको तौ कौनऊँ हरज नई उर आदमी आदमी बनौ रबै तौ बो देवता से कम नई सो भइया मानव संवेदना ममता आज सोऊ जिन्दा है नातर जा धरती कभऊँ की रसातल खौ चली जाती। चाय वा करीमन चाची के रूप में चाय चिन्तामन के रूप में होबे।

पन्खी ममता दुलार पाकै दुनिया के दुख दरद भूल कै सो गऔ चाची ने फिर सै मूंड़ पै हाँत फेरत भय कई कै बेटा पन्खी। उठो जो कुनकुनो हलुआ खालो चाची ने अपने हाँत सै हलुआ खुआव। इतनई में चाची कौ नाती अपनौ बस्ता लैकै उतई पड़बे बैठ गऔ। पन्खी दुख दरद भूल गऔ वो चाची के नाती की किताव कापी अल्टन पल्टन लगो। चाची

ढैरी पारखी उननै पूंछी काय पन्खी तुमाव पड़बे मे मन लगत तुमें पड़ने बौ अपनो मूंड़ खुजान लगो। चाची खौं हैरानी भई कै ई लरका खौ का करैं का न करै नाहक में ईकी जिन्दगानी नसानी जात। एई उधेर बुन में रात गुजर गई।

बड़े भुन्सारा बे उठी उर गॉव के ग्राम सेवक बाबू के इतै पौंची। बे भले आदमी हते चाची खै आत भऔ देख कै आओ चाची हमये बड़े भाग जो अपुन हमाय इते पधारी कऔ का बात है हम लाक कछू सेवा होय तो कऔ। करीमन चाची ने पन्खी की और सै। छोर नौ की किसा सुना दई। फिर गैरी सॉस लेत भई कई कै भइया। अपुन की नौनी जान पैचान है ई लरका कौ भविस सुदर जाबे नातर गॉव में चिन्तामन जेसे राक्षस ई खै खॉय जा रय।

ग्राम सेवक बाबू ने कछू देर सोसी तनक झेल नौ सन्नाटो सौ छाव रऔ फिर बोले चाची हमाई तौ एक बात समज में आ रई। अपने लिंगा जो सरकारी फारम है उतै जुताई के लाने बैल पले हे उनै चराबे के लाने बरेदी चाने सो पन्खी उतै जाकै बैल चरान लगबै उतै उये धेला टका मिलत रैय जीसै वै काऊ पै भार न रैय उर उतई पड़त लिखत रबै उर प्राइवेट परीक्षा देत रय हमें पतो है के बौ छौछायलौ है। भगवान चाय तौ ऊकौ भलो हुइयै। सो अपुन ऊखों हमाय लिंगा पौंचा दो हम जाकै फारम के साहब सै बात कर ऑय उर ऊकी जान पैचान करा आँय। चाची आसीस देत भई घरै चली गई।

पन्खी दूसरे दिना सै फारम पै बैल चराबे जान लगा। चाची ने सिलेट बरती पैली की किताब दुआ दई बैल चराबे जाती बेरॉ गली में कौनऊॅ पड़ो लिखो आदमी मिल जाबै ऊसैं सबक लै लेबै। उर दिन भर बैलन के संगै रय उर अपनौ सबक पड़त लिखत रबै उर याद करत रबै। संजा कै लौटती बेरॉ कोनऊॅ पड़े लिखे बड़े ही विनती भाव सै कन लगै कै हमाई जा किताब सुनलो हमाई जा सिलेट बॉच लो जौ पन्खी को रोज कौ काम हो गऔ।

हरॉ हरॉ दिन मइना साले कड़न लगी चाची जैसी देवी कौ पीठ बल पाकै पन्खी ने पॉचवी जमात पास कर लई येसई येसै आइ दस उर बारवी पास कर लई। मन की ललक उर लगन आदमी खै ना जानै कितै सै कितै पौंचा देत जौ ईने अपने करतब सै बता दऔ। पन्खी खौ पन्ख लग गय ऊकौ भाग पलक पावड़े बिछॉय ठॉड़ो तो। गॉव असपेर में एक आदर्स बन गऔ उर विद्वानन के लाने सौंद कौ विसय।

करीमन चाची देखो तौ फूली नई समा रई वे अपनौ पराऔ सब बिसर गई उनै लगौ कै पन्खी खै किते उठाय उर कितै बिठाय। संजा कै वियाई कराती बेरॉ बोली बेटा। तुम अपने पावन पै उर ठॉड़े हो जाते तौ हमाई आत्मा जुड़ा जाती फिर चाय हमाई ऑखें मिच जाबै हमै कौनऊॅ फिकर नइयॉ। पन्खी ने सुनी थारी माय सरका दई उर भैरा कै रोत भऔ उनकी गोदी में जा गिरो। दादी हमाऔ देस दुनियॉ में को बैठो जी खौ हम अपनौ कै सकै हमाय तौ भगवान बाप मताई दुनियॉ में जो कछू हो बो सब अपुन हो आज जो कछु हम बन पाय बो अपुन की किरपा उर प्रेम से नातर हम कितै कॉ सड़त होते। अब हम दादी अपुन के मौंसे कभऊॅ मरबे जीबे की बात न सुन लेबैं। हमें मजधार में छोड़कै कितै जाबै को कै रई। चाची की ऑखन सै ममता के अंसुआ टपकन लगे।

चाची ने गॉव के पड़ लिखे भले आदिमियन सै पन्खी के लाने नौकरी चाकरी की चर्चा करी। पन्खी खौ पतौ लगौ कै सिरकारी दफतर में में बाबूअन की जगा खाली है भरती होबे के लाने अरजी लगाने परे। ऊने नौकरी के लाने फारम डार दऔ। ये भइया।

एक दिना डाकिया चाची के इतै पौंचो उर सिरकारी रजिस्टी आवे की कई चाची नेसुनी भोरी भारी जो ठैरी उनै सन्नाटो सौ आगऔ घबरा गई उनने सोसी कै कोनऊॅ पापी दुस्टी ने हमाय पन्खी खौ कोनऊॅ जाल में तो नई फॅसा दऔ। डाकिया ने कई कै चाची तुम घबराती काय हौ। अपुन जैसन कौ जिये आसीस उर बल होबै ऊको कोऊ का बिगार सकत।

पन्खी खौ तो बुलाओ ऊके दसखत कराने। पन्खी आ गऔ ऊने रजिस्ट्री के दसकत करे फिर ऊने रजिस्ट्री खोली ऊकी ऑखे फटी की फटी रै गई अंसुआ भर आय उर कागज करीमन चाची के पावन में धरकैं मूड़ धरकैं रै गऔ। चाची ने उये उठाव उर कई कै का है बता तौ। पन्खी ने उठ कैं कई कै दादी तुमाव जौ नाती बाबू बन गऔ कन लगत के एक न एक दिन घूरे के दिन फिरत।

अब तकौ तौ चाची की खुसी कौ ठिकानौ नई रऔ उने लगो कै का उतारें का पैरें की सै कयें उर की सै न कयें। चाची दौरे मै चौतरा पै ठॉडी हो गई उर गॉव परोस की जनी मान्सन सें बुला बुला कें कबै ओ फलानी ओ ढिकानी तकौ हमाऔ पन्खी बाबू बन गऔ। जोई तौ आय अपनत्व और ममता।

पन्खी अपनी नौकरी पै पॉच गऔ। नॉय मॉय के हितुआ नतैंत रिस्ते लैकै पन्खी नौ पौचन लगे पन्खी उने टका सौ जबाव देबै कै अबै हमाई दादी बैठी वे जितै जैसी कैंय बैसो होने। चाची ने नौनी पड़ी लिखी बिना दान दहेत लय रैन कैसी पुतरिया बऊ ढूँड़ी उर गॉव के मंदिर पै होकें भॉवरें परवा दई। चाची नैं हाल फूल सै सतपौन की पंगत दई उर फिर पन्खी की चैन की बन्सी बजन लगी।

तुलसी दास जी नै मानो पन्खी जैसन के लाने टीक ती कई कै:-

''तुलसी बिरवा बाग के सींसे सै कुम्लॉय।
राम भरोसें वे रहे परवत पै लै रॉय।।''

ग्राम पोस्ट - कुण्डेश्वर (टीकमगढ़)
मो. 07898640061

(बुंदेली किस्सा)

"'इस हाँत दे, उस हाँत ले।'

– श्रीमति निर्मला पाण्डे

भारी–भारी पहारों के लिगरें एक हल्को सो देहात हतो। ऊ देहात का नांव कोटा हतो। ऊके चहुँफेर हरियारी ही हरीयारी नजर आऊत ती। ओऊके नगीच एक पतरी सी नदिया बहत ती। ओऊ देहात में एक मराज और उनकी घरेनी रहत ती। मराज को नांव रामदीन हता। उनकी माली हालत भौत पतरी थी – उनको खाने की दो दो परी तीं। ऊकी घरेनी रामवती ई हालत सें उकता गई ती। ऊपर वारे को कौतक – ऊ खों उनने मान गौन दओ – डूबरे और दो असाड़, चरन गये दूर पहार। रामदीन ने सोचो कि ई बलाय खों नदिया में बहा दओ जाये – जैंसई ऊने मोड़ी खों नदिया में सिराने खों डारो, मोड़ी बोल परी – "दद्दा मो खों काय बहा रये हो, अबे तो मैंने ई जग को कछू नई देखो – मैंने तुमाओ का बिगारो है ? रामदीन अचरज में पर गये – इत्ती नन्नी सी मोड़ी – बोलत है ? ऊने कई तेने कछू नई बिगारो हे – पे मोरे लेंगर तुमाये खावे खों कछू नई आ। में तो खों भूखों नई देख सकत हों – ई सें – में तोखों उतई पहुँचा रओ हों जहाँ से तें आई हे। मोड़ी कहन लगी – 'दद्दू अबे तो में बऊ को दूद पीं कें जियत रेहों – आगें जोलों खावे की उमर हुईये उसी समैया में तोखों कछू ओल बता देहों। जैंसे हमाओं पेट पल पा हे मो खों घरे ले चलो बऊ किलपत हुईये। रामदीन ने मोड़ी की बात मान लई और घरे लोट आये, और सबरी किस्सा घरेनी खों सुनाइ – तो ऊने मोड़ी खों करेजे सें लगा लओ और ऊ को नाव सुखिया धर दओ ऐसें ऐंसे समय कड़त गओ और घर में मोड़ी की किलकन सें खुशी फेली रई। जब सुखिया खाने जोग हो गई तो दद्दा ने पूँछी बेटा अब तो खावे की औल बताओं तेरो पेट कैंसे भरो जाय ? ऊने कई दद्दू, तें राजा के लेंगर जा, और ऊ सें कईओ – ".ई हाँत दे और ऊ हाँत ले।"

भियानें भयें रामदीन राज दरवार में पहुँचई गओ और राजा सें कई – "ई हाँत दे और ऊ हाँत ले।" ऐसी गियान की बात सुनखें सबै दरबारी "वाह–वाह करन लगे – राजा भोत खुश भये और सोने की मुहरों सें भरी एक थेलिया रामदीन खों पकरा दई। वे तो अब फूले ने समा रये ते खुशी–खुशी घर लौट आये और आराम सें दिन कटन लगे। जब मोहरें बड़ा जातीं तो फिर मराज राजदरवार में जाखें वैंसई केकें – मोहरों की थैलिया ले आऊत ते। एक दिना राजा ने मराज सें ई को मतलब पूँछो तो वे नॉय मॉय देखन लगे – और राजा सें बोले – ई को मतलब कल बता हों। मराज लौट के घरे आये और सबरो किस्सा सुखिया खों बताओं – और बोले – 'ई को मतलब बता ई तो भियाने राजा मोरे मूड़ खों पोल देहें।' सुखिय बोली "दद्दू घबराव ने, ई की गेल में तोखों बताउत हों – तें दरवार में जाकें, राजा से कईयो – कै वे काशी खों जावें, जौन दिना वे काशी खों पोच हें, ओई दिना काशी के राजा खों मोड़ा हुई ए – ओई मोड़ा नई को मतलब बता हे।

भियाने जाकें रामदीन ने राजा सें सुखिय की कहन कही। राजा ने बड़े सोच विचार कें – काशी जावे की सोची। भियाने भयें राजा घुरवा पे सबार होकें – काशी खो चल दओ दिन भर चलत–चलत सूरज डूब गओ, लोलैया लग गई और घनघोर जंगल पर गओ चौ तरपा अंदयारो ही अंदियारो लग गओ राजा को जी घबरान लगो और ऊने एक कुदाई देखो तो ऊखों एक डबिया टमटमात दिखी राजा ओई ओर चल दओ। तनक चलने के बाद एक ऊखों हल्की सी टपरिया मिली बा टपरिया एक भील मंजूर की हती ऊ भील

खों राजा ने आवाज देकें बाहर बुलाओ भील तो भलो मनक हतो ऊ ने राजा खों बैठारो और ऊके घुरवाखो एक बिरक्षा सें बाद दओ। राजा खों पीबे के लाने जूड़ो पानी दओ बैठबे के लाने चिथी कथरी दई। ऊ गरीब भील की घरवारी टपरिया में बियारी खों रोटी थोप रई ती। टपरिया वारे की घरेनी ऊबांयड़ी हती जैंसई घरवारे ने भटके भये मनक की बात बताई और ऊके खाने और सोवे की बात कई, बा तो अकास पताल बांचन लगी। तुम तो दो रोटी के कांजें, रात दिना छाती मारत हो तोई पूरो नई परत हे, इन अलफतियों खों हमाय तें कछू नईयां, इनसें का मूसर बलदाऊने हें ? भगाओं टठरी के बंदे खों रोटी पाथत-पाथत गुर मीलों सें मों रगवारो हो गओ और कुरूरन सें शरीर फदक गओ हे। उन्ना शरीर सें चिबक गये डोंगरो परे तो चेन मिले तुमे लगत हे के वे कसाले की रोंटी ई नांदी बोक की नर में ठूंस दें, में तो इखो एकऊ कोरा ने दे हों।

घरवारों सझ गओ - जा घरेनी तो - 'मेरो जे हे खाऊ, में न देहूं काऊ' वारी है। ई को करेजो तो पथरा को हे ऊ पे दूवा कैंसे आ ऊगत। व तो भुकर खें बैठक गई।

घरवारे को मन तो नेंनू केंसो कोंरो हतो। घरेनी सें बोलो - "तें गर्मी में और ने गरमा मोरे हींसा की रोटी और राँदनों हारे थके पावने खों दे दे। एक दिना न खेहों तो मरो नई जात। ब्यारी करके टपरिया के एक कोने में रात गुद्दाम कर लेहें। में तो टपरिया के बाहर, डरो रैहों, नखीले जानवरों को ज्यादा अंदेसो नईया।" ऊ तो पाहुने की सुआगत में बिछ-बिछ के दूनो भओ जात तो खुशी के मारें ऊ को जी तो बलियों उछल रओ तो। घरेनी भुकर कें बोली - कोनऊ जंगली जनावर तुमे उठा कें ले जे हे, तो में कोन के नाव की चुरियाँ फोर हों ? घरवारो ताव में बोलो - मोरे प्रान भले ई चले जायें पर मैं तो पावने खों बाहर बसेरो न करन दें हों। खतरा अपने ऊपर ले लेहों पावने पे आँच न आऊन दे हों घरवारी बोली - देखो मेरी बात गुनो - "मुड़िया न धरो डुड़िया पे" पे ऊने घरेनी की एक न सुनी और टपरिया के बाहरे एक बिरछा के तरें सो रओ। - ऊ के मनंक ने जब ऊसें पाहुने खों रोटी देवे के लाने कई तो बातों भुखर गई और रोटी देवे सें मुकर गई, ऊ बनवासी ने अपने हींसा की रोटी राजा खों खिला दई और टपरिया में उखों सुबा दओं - और ऊ टपरिया के बाहर सो गओ राज के शेर आव और बनवासी खों खा गओ। भुनसारे राजा और भीलनी जब उठे - तो ई बुरइ, होनी से कीक उठे। ऊ की छाती में भभका सो लगो भीलनी ने तो टपरियों में आगी धर, दई और ओई में कूंद परी। राजा अनमनो होके, मसकई काशी खों चल परी। नदियाँ, नरवा, जंगल, पार करत करत नो, महिना में राजा काशी पहुँचो ओई दिना काशी के राजा खों लरका होवे की खुशी मिली हती। राजा ने राजा की खूबई आव भगत करी। राजा ने काशी के राजा से अपने आने को कारन बताओ। काशी के राजा ने महल सें लरका खों बुलवाओं। राजा ने "इस हात दें उस हांत ले" का मतलब ऊ सें पूंछो। लरका ने कई के तुम भियाने पूरब दिशा खो जइयो और सबसें पैले जो दिखे ऊखों हमें बतइओ - तबई हम - तुमें ई को मतलब बतेबी।

राजा भुनसारें से पूरब दिशा खों चल दये - और जो कछू पेलें-पेलें देखों - ऊसें वे बड़े अनमने हो गये - फिर वे काशी के राजा के तें पहुँचे और हल्के से लरका खों बतावो कि उन्ने एक सुंगरिया खों बारमों घिटला होत देखो - घिटला होने में सुंगरिया खों भौत पीर हो रई ती - और ऊ घिटला खों - प्रानों की परी ती।

जो सब सुनके राजा के नन्हे लरका ने राजा से कई - राजा नो मईना पेले, तुमने घनघोर जंगल में एक भील की टपरिया में रात काटी ती - ऊने तुमें अपनी रोटी खबाई ती - खुद भूंको रओ तो - तुमे अपनी चिथी कथरी सोवें खों दई ती - खुद टपरिया के बाहर सो गओ तो। तुमे टपरिया में सुवावे में ऊ की जान चली गई ती। और ऊ की घरेनी ने तुमे

खावे में और रात गुदराम में सहोरा ने दओ तो।

ऊ बनवासी - में ई आऊव और बारहवों घिटला मोरी घरेनी आय। तुमाव सहोए बनवे के कारन मोखें प्रान देने परे ते सों ऊपर वारे ने मोखों काशी के राजा के घर मे पहुँचा दओ और घरेनी पर मारत में आड़ी तिरछी हो रई ती - खो ऊ सों बारमों घिटला होवे परो।

अब तो तुम - ''इस हांत दे उस हांत ले।'' का मतलब समझ गये हुइयो।

राजा ने रामदीन के अटका खों समझा गुना और वापिसी की मंशा, काशी राजा से जताई। राजा ने उने विदाई दई। राजा अपने राज में राजी खुशी से पहूँचे और तुरतई मराज रामदीन को बुलौआ कराओं और ऊ के जोतस गियान की भारी बड़वारी करी और पूंछन लगे - काय मराज, जा विद्या आपुन ने कहाँ ते पाई ? रामदीन ने सुखिया के जनमसे लेंके अबे तक की सबरी किसा के सुनाई राजा ने सोची, गुनी के सुखिया, इत्ती गियानी है तो ऊखों रानी बनाने में भौत भलाई है। उन्ने रामदीन से अपने मन की बात बताई। मराज खुशी खुशी घरे आये और दरवार की सबरी बातें सुखियाँ से के डारीं। सुखियाँ ने दद्दा से कई - के राजा से कईयों - के वे पेले सरग में जाकें अपने पुरखों से मिल आवे ऊ के बाद में विआव कर हों। राजा ने रामदीन की बात मानी और सरगे चल दये - उते उन्ने देखो के ऊके पुरखा बड़े चेन में हैं। राजा ने एक चक्कर सरग को लगाओ और लौट परे, पे पाछूँ तकों तो पुरखा कहूँ न दिखे। पूछवे पे पता चलो के वे सब नरक में चले गये। ई की पूछ परख करी तो पता चलो कि राजा की पापी नजर उन पर परी तो उनके पुण्य चुक गये, पापी होने का कारन पतो करो तो - पता चलो कि मराज की लरकिया से बिआव की इच्छा से तुमें महा पाप लगो है। राजा ने सुखिया सें बिआव करने को विचार छोड़ दओ। राजा ने रामदीन सें नोनो लरका खोज कें विआव करने की बात कही और खुद कन्यादन लेने की बात कई।

- चण्डी जी वार्ड, हटा
जिला-दमोह
07604-262237

बुन्देली मेला

कवितायें

मचला

बुदेंली कविताएँ पान के बीड़ा जैसी रंगत वाली है। पान की लाली हौंटें को शोभायमान बनाती है, बुदेंली बोली की लाली इन कविताओ मे है मीठे बोलो वाली ये कविताएँ नव रसों से आपूरित हैं। जो रंग रस आपको नोनो लगें उसी में आप रमे रहें। कविताओं का ये मचला आप संभाल कर रखें विनती इतनी ही हैं।

क्र.	कवि	रचना
1.	डॉ. श्यामसुन्दर दुबे	बुंदेली किसान
2.	पं. वीरेन्द्र सिंह परमार "वीर"	श्रावणीय व्यथा
3.	डॉ. राघवेन्द्र उदैनियाँ "सनेही"	कव जू भइया कैसी कई
4.	श्री मणि मुकुल	फागुनी दोहे
5.	श्री सत्यमोहन वर्मा	पाहुन पग धारो जू
6.	डॉ. नीलम खरे	बुंदेली रचनाएें
7.	स्व. पं. दीनानाथ शुक्ल	लड़इयन में लुखरिया
8.	डॉ. एम.एल. प्रभाकर	मेला
9.	श्री कल्याणदास साहू "पोषक"	गोरी नारि गुजरिया
10.	डॉ. वर्षा सिंह	बुंदेली गीत
11.	श्री हरिविष्णु अवस्थी	हटा की छटा
12.	डॉ. हरिमोहन गुप्त	बुंदेली दोहा
13.	श्री पशुराम भास्कर "विमल"	भ्रूण हत्या
14.	श्री महेश कटारे	बुंदेली गजलें
15.	डॉ. एल.आर. सोनी "सीकर"	घर आये हैं........
16.	डॉ. दयाराम "बैचेन"	राष्ट्रीय चौकड़ियाँ
17.	श्री प्रेमनारायण पाठक	बुंदेली बसंत
18.	श्री लक्ष्मीकांत गुप्त "किंकर"	सिंसारी में दिवारी
19.	श्री एन.डी. सोनी	होरी है

"बुंदेली किसान"

– डॉ. श्यामसुन्दर दुबे

काठ-कठौती
उनकी अपनी
उनकी अपनी जीवन शैली !
बदली गई न
उनकी अब तक
चादर वह मैली की मैली !
खाद बन रही
उनकी काया
खेतों-खेंतों बिखरी !
हल की नोक
छेदती उनको
नहीं तनिक भी अखरी !
उनकी पीड़ा
फसल उगाती
मुस्कानों की धूप
उन्हीं की दहलानों तक फैली !
लोकगीत की
टेरवने वे
जंगल-जंगल धाये !
मांग उन्हीं से
गेहूँ-बाली
चिड़िया चौंच दवाये !
सौ बसंत
लज्जित हो उठते
उनके चीकट कपड़ों सें
जब आती गंध बमेली !

चंडी जी वार्ड, हटा (दमोह) म.प्र.

श्रावणीय व्यथा

– पं.वीरेन्द्र सिंह परमार 'वीर'

उमड़ घुमड़ धन, लरज लरज तन,
आँखियों से बरसे बैरी मेह
मैं तो सुहागन, कैसी अभागन ?
कौनी घरी जौ लागो नेह ?
बाली उमिरिया, सूनी सिजरिया
बैरिन हो गई, मोरी ही निंदिया-
चिठियाँ न पतियाँ, कौनउँ न सुधियाँ,
काहे को कहिये जौ सनहे ?

जय ज्योतिष केन्द, उरई,
जालौन उ. प्र. 99936514519

कव जू भइया कैसी कई

– डॉ. राघवेन्द्र उदैनियाँ "सनेही"

ढकी मुंदी कॉ रै गइ तकनकड, अबतौ सबकी खुली कलई
भगैं गैल ना मिलत काउखौं, लुखरगढ़े में बिदे लड़ई
कव जू भइया कैंसी कई
करत रये मन को धन जौलौ तौलौ कछू सुनी नइयाँ
जैसइ बाजे बजे मूँड़ पै, भूल गये सब फिरकइयाँ
निगे काय ते ऊ पथरा पै लगी हतीती जीमें कई... भगैं...
अपने हाँतन सबइ मर मिटे, कीखाँ का खारी दइ जाय
हतो ददोरा पैल तनक सौ, हेरौ कल्लओ खता खुजाय
मिसरी सी जो हती गुरीली, ओइ बराई भई करई... भगैं
अपनी जाँग उगारौ तौ फिर अपनी इज्जत जै है जू
एक दिना ऐसौ आहै ऊ खुदँई उपतकें कै है जू
कैसें बनौ उतै बो बंगला, जितै हतीती कबउं दुगई...भगैं....
ऐनई जाँच परख लओ हमनें, बनियां हो कै चांय सेठ
सबइ एक से लालबुजक्कड़ इक हड़िया कें दो हैं पेट
आज घुटाला फिर नव कल्लव, बात काल की भइ लइ दई...
इक दूजे खाँ लगे बचावे, जीसें जैसें बन रओ है
अखवारन की जैसी तेसीं, टी.वी. में लौ तन रओ है
तुमंइ बताओ हम का कइये, जैसौ ऊ कयै ऊसइ सइ....भगैं...
इक थैली के चट्टा बट्टा, कोउ काउ सें कम नइयाँ
खूबइ छीछरलैदी हो रइ, तउ पै तनक सरम नइयाँ
तनक मनक तो बची रान दें, पुरखन नें जो उनखाँ दई...भगैं...
कैबे सुनबे की का बातें, ढंग ढौर सें कल्लो गौर
हाँती के जे दाँत 'सनेही' खात के और दिखात के और
हरियन की का कांय बिजूके, लगे गुटकबे पकी जुनई...
भगैं गैल ना मिलत काउखाँ, लुखरगढ़े में फसे लड़ई

सरानी दरवाजा छतरपुर (म.प्र.)
मे. 09406762156

फागुनी दोहे

– मणिमुकुल

फागुन राजा रूप का, रंगों का सरताज।
देख उमरिया रसभरी, रोज गिराता गाज।।
उगर बिरानी हो रही, फागुन चढ़ता देख।
माथा अपना पीटती, धरम-करम की रेख।।
इस फागुन में लग गया, उमर में सोलह साल।
नैनों ने न्योते दिये, अधर भये बेहाल।।
चटक रंग चुनरी भई, पिचकारी पचरंग।
होली की हुड़दंग में, रसिया रंग-बिरंग।।
सावन गोरी सो गई, जागी फागुन मास।
अंग-अंग गदरा गये, बलम आस ना पास।।
एक सखी बतियां करत, सखी दूसरी संग।
अंगिया फागुन मास में, हो जाती क्यों तंग।।
नये-नये कंगना हाथों में, नयी-नयी करधनियां।
होली खेलन बलम ने भेजी, चोली और परधनियां।।
कस्तूरी सी महकती, दस-छै की गुलनार।
घर-धर फागुन भटकता, मिलता नहीं करार।।
श्याम रंग नैना भये, टेसू रंग कपोल।
पटल-पयोधर हठ करें, अंगिया के बंध खोल।।
होली तो होली है कर लो, तन की भी मन की भी।
उमर पांव की पैजनियां, कल खनकी ना खनकी भी।।
भौजी ने देवर के ऊपर, चुपके से रंग डाला।
देवरानी की नींद उड़ गयी, है कुछ दाल में काला।।
होली के दिन बह जाते हैं, नैना बस-बेबस के।
यादों की गठरी खुल जाती, रह जाते कस-कस के।।
बरस-बरस की होली के दिन, रूठो मत, रंग डालो।
समय किसी का सगा नहीं है, ऐसो रोग न पालो।।
जाते-जाते कह गया, फागुन नस-नस घोल।
अपनों से क्या रूठना, बोल सके तो बोल।।
जात न पूछे, पांत न पूछे, नहीं पूछता रंग।
फागुन का महिना 'मुकुल' नाव-नदी का संग।।

एल.आई.जी.-2, जयप्रकाश नगर,
अधारताल, जबलपुर - 482 004 (म.प्र.)
मो. 9893760200

बुन्देली रचनाएँ

– डॉ. नीलम खरे

बुन्देली भाषा भली, नौनी लगती खूब।
लगती जैसे है भली, पूजा की हो दूब।।
बुन्देली इतिहास में, जनजीवन की शान।
बुन्देलों का गूंजता, हर दम ही यशगान।।
अंधियारों सब मिट गयौ, मैहर मां का नाम।
उजियारौ इस नाम मे, जो है तीरथधाम।।
चन्देरी कौ नाम तौ, लिये हुये पहचान।
सारी के कारण मिलौ, खूबई तौ है मान।।
छत्रसाल कौ यष भरौ, हर पन्ने पै खूब।
पढ़ लो तुम इतिहास खौं, बहरे जाकर डूब।।
जंगल, पर्वत भा रहे, मनमोहकता धन्य।
ऊपर वाले कौ मिलौ, दरियादिल सौजन्य।।
जनजीवन अच्छा लगै, रीति नीति क्या बात।
गीतों-नाचों में भरी, नई उक सौगात।।
सुंदर महल, अटारियां, दुर्गों में है शान।
वीरों ने जीवन दिया, तब पायौ है मान।।
राजा रानी याद में, जौहर भी है याद।
हरदम ही देखो रही, बुन्देली आबाद।।
काहे खो रिरियात फिरत हौ
सबसे मांगत खात फिरत हौ।
याद करौ, ऊपर वाले की,
सब की काहे गात फिरत हौ।
बोलन चाहौं, अच्छौ बोलौ,
बिरथां मे बतियात फिरत हौ।
बखत पै महनत करबौ सीखौ,
काहे को गपियात फिरत हौ।
काम करौगे तब पाऔगे।
दिन में तुम बरति फिरत हौ।
अहंकार में लंका बर गई,
काहे कौ गर्रात फिरत हौ।

आजाद वार्ड, मंडला (म.प्र.)
पिन- 4881661

पाहुन पग धारो जू

– सत्यमोहन वर्मा

इस बीर बुन्देली धरती पर, पाहुन पग धारो जू
कला पराक्रम और धर्म की छटा निहारो जू...

पन्ना में हीरों की जगमग मनहर जुगलकिशोर
फागें रचकर बने ईसुरी कवियों के सिरमौर
पद्माकर ने कविता घट में नीर भर दिया है
जगनिक ने आल्हा ऊदल को अमर कर दिया है
मैहर पहुँच, भवानी माँ के चरण पखारो जू....

कीर्ति ध्वजा लहराती झाँसी में, लक्ष्मी के नाम की
और ओरछा में सरकार, सजी है राजा राम की
चित्रकूट में अब भी होती है सन्तन की भीर
अब भी है जीवन्त यहाँ पर तुलसी के रघुवीर
मंदाकनी नहा कर, जीवन जगत संवारो जू....

छत्रसाल की गौरव गाथा जन-जन गाता है
खजुराहो का पिल्प देखने सब जग आता है
सागर में हरिसींग गौर का पिक्षा मंदिर है
ज्ञानगिरि के भव्य पिखर पर माता का घर है
ले इनकी आषीष दुखों की धूल बुहारों जू...

दुर्गावती, अवन्ति बाई, नल की दमयन्ती रानी
दमोह दुहाई देता गाकर इनकी गाथा वलिदानी
पीताम्बरा विराजी दतिया, आदिनाथ कुंडलपुर में
धामोनी दरगाह मुबारक, महादेव बाँदकपुर में
इनकी धजा न झुकने देंगे चाहे शीष उतारो जू....

इस बुन्देली भूमि का इतिहास निराला है
इसकी संस्कृति में शीतलता दिल में ज्वाला है
यहाँ कर्म की और धर्म की धारा बहती है
फिर भी पिछड़ेपन की पीड़ा जनता सहती है
अब अंगड़ाई लेती धरती जनम सुधारो जू....

रहने देंगे नहीं उपेक्षित अब ये सोने सी माटी
हमने कस ली कमर बदल डालेंगे सारी परिपाटी
हमसब बुन्देले अब अपनी बाँह पसारे है
सब को प्रेम जुहार आप जो यहाँ पधारे हैं
सबकी बिगड़ी बने जुगत बाँकी कर डारो जू...

- असाटी वार्ड-2 दमोह (म.प्र.)

लड़ईयन में लुखरिया

– स्व. पं. दीनानाथ शुक्ल

''अब कीके घर गिर गइ गाज
रोबे की आ रइ आवाज।
सोन न पाहों का मै आज
होरी! कीको बिगरों काज ?''
'' बिना सुनाये तुमको लोरी
दद्दा! सोन न पाहे होरी।
जगबे को ना करो बहानो
तुमे पता है को चिचयानो।
रात भई ग्योड़े की पार
भूखे लड़इ भरत हुंकार।
पूँछत हम सें तुम तन ढाँके
हम नंगे पत कैसे राखे।
धरम पुत्र की देत दुहाई
पेट हमारो दिखत न भाई।
हम सोउ अपनी फौज बनाहे
धावा करके तुमे जगाहें।

रोटी कपड़ा हमको चाने
हुआ हुआ कह सब चिचयाने।
तबइ लुखरिया खाँसत आई
बोली रूको शूरमा भाई।
रो रो चिचया आफत ला रये
तुम सब सोउत सिन्ह जगा रये
'लुक्खो तुम सोउ अब हुंकारो
हम जैसे बन शेर दहाडो।।
सुर पै सुर गूँजे पहुँ ओर
गाँव भरे मे मच गओ शोर।
का करहे इनकी आवाज
दीनानाथ राखियों लाज
गिरत उनईं पै दद्दा! गाज-
जिनके सिर पै रहत न ताज।।

प्रस्तुति -
श्री गुप्तेश्वर द्वारका प्रसाद
विजयनगर (जबलपुर)
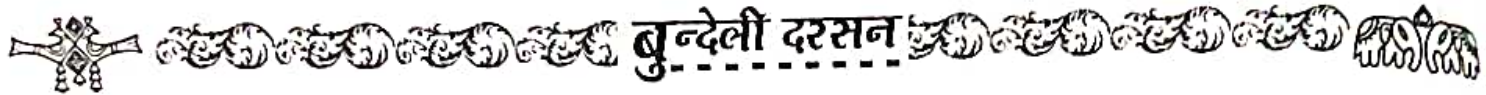
मेला

– डॉ. एम.एल. प्रभाकर

भौत दिनन की बात राम धई, खबर करत हँस आवै।
मेला देखन गईती गुइयां, जी मोरो घबड़ावैं
बन्न- बन्न की लगी दुकानैं, सबरे धरैं पसारैं।
कंगा काजर बिंदिया टिकिली, देख रहे मन मारैं
सबई तरा की धरी मिठाई, मिठ्या तौलत जावैं।
खेल खिलौना बाढ़ई बैचें, पइसन खौं मौ बावैं।
लगौ हिड़ोरा चकरी घूमै, झूलें हल्के वारे।
संग पलकिया झूलौं मैं तो, सइयां करै इशारे।।
गई पलकिया जब आकाशै, जी मोरौ उमछानौं
लिपट गई सइयां सैं ऐसैं, अमर बेल सी जानौं।।
धुकुर पुकुर जी होय रामधई, सरम छूट गई सारी
सइयां नै झट्टई रूकवा कें, नैचें मोय उतारी।।
वोले झुल गव झूला प्यारी, चलौं और घुमवादैं
नौनी मनकी चीजें लैलों, आप तुम्हे खुवा दैं।।
लैलों वटुआ पइसा धरबे, फिरतम गाँठ में बाँदै।
पांवन खौ पायलिया लैलो, बिछिया चाव लुवा दैं।
मैने कई अव प्रान वचन दो, घर खौं चलौ स्वामी।
चानैं नइयां कछुअई राजा, जिन भरबाव हामी।।
जानैं कैसौ लगत मोय अव, जी मौरों घवरावैं।
चैकूं- चैकूं रैंचकुवा सौं, जानैं काय सुनावैं।
मेला देखन अव ना आवौं, मौसें कौल करालो।
धोखे में भरमाकें गुइयां, कैरइतीं अव गालो।

मैं कऊँ इत्ती जानत होती, हांत जोर घर लेती।
परती पांव कौल खा जाती, भली अकेली रेती।।
गुनियां पुनियां रधियां मुनियां, लुवा ल्याई भरमाकें
बोली मेला देखन चलनैं, का कर हौ घर राकें।
अब हुरदंगा इतै देखकें, खबर भये की आवै।
धक्का मुक्की खैंतानी, मौयें करेजें आवै।
देखो फिर रई माँझ भीर में, देखो मोरी माता।
बा गिर परी उठा लो जाकें, आंदी कैसों छाता
हटकी नई मानीती ई सैं, बिनियाँ गिरी अँगारी
नैलो गाड़ी चलौं घरैं अब, आजें सबै पछारी।
सइयां ने जब बैल हाँक दये, तन तन पूँछ दबाई।
प्रान छोड़ कैं दौरे ऐसैं, गाड़ी खन्ती जाई
औंदी गाडी मेला माँझैं, आगैं बात न पूँछौ।
दुर्गत जो कछू भई हमारी, कात लगत हैं छूँछौ।।
गाड़ी नैचें हम चिल्लावैं, सुनियो मेला वारे।
हमें काढ़ लो मरे जात नई, परवैं पाँव तुम्हारें
कुली लचक गई कुलकत चलवौं, घर पूंछी देव रानी।
जिज्जी सूदी निगत काय नई, रश्मि सी बर्रानी।
आनाकानी करे बहाने, मैनें पुर्त दबाकें।
ठेबों लगौं चलत जातन में, दाँतन कई चबाकैं
मुलक दिन कौ समव गुजर गवौं, भूलत नई भूलाई
भीड़ भाड़ खौ देख प्रभाकर, जी मोरौ मिचलाई।।

पृथ्वीपुर टीकमगढ़ म.प्र.
मो. 09981943813

गोरी नारि गुजरिया

– कल्याण दास साहू "पोषक"

समर- समर पग धरत सियाँनी, सिरपैधरें गगरिया।

निकर चली पनियाँ भरवे खों, गोरी नारि गुजरिया।।

एक हाँत सें घट खों सादें, दूजे सें घूँघट खों।

दिल पै डाँको दैकें गोरी, चलीजात पनघट खों।।

सुधर सलौनी नारि नवेली, अठरा साल उमरिया।

निकर चली पनियां भरवें खों, गोरी नरि गुजरिया।।

पाँवन में पहलियाँ सो हैं, कम्मर में करधोनीं।

हाँतन में कँगना सोहत हैं, माथे बिंदिया नौंनी।।

सोने में सुहागा होरयी, मुतियन जडी मुँदरिया।

निकर चली पनियाँ भरवें खौं, गोरी नारि गुजरिया।

नाक नथनियाँ, कानन झुमका, हरवा गरे सुहावै।

लज्जा गाँनौ चन्द्रमुखी की, सोभा योंन बढावें।।

खूब माकरइ इतर गन्ध से, पनघट वाइ डगरिया।

निकर चली पनियाँ भरवे खों, गोरी नारि गुजरिया।।

अंग अंग में मचलै जुवना, अंग अंग गदरानों।

साँचे में ढारौं विधना ने, लैकें सई उमानों।।

ऊँचें भौंत गठीले तन पें, चोली और चुनरिया।

निकर चली पनियाँ भरवैं खों, गोरी नारि गुजरिया।

ओंठ रसीले, गाल- गुलावी, दत्ती चमचम चमकै।

भौंयँ कमान, केस घुँघराले, माँग सैंदुरी दमकै।।

चन्दा सी मुइयाँ पै उमरी, कारी घनी बदरिया।

निकर चली पनियाँ भरवे खों, गोरी नारि गुजरिया।।

बिजुरी जैसी कौंद जात है, उगर जात जब मुइंयाँ।

गोरी धन से करत ठिठोली, ओइ उम्र की गुइयाँ।।

ऐसी चाल चलत मतवारी, दूनर होत कमरियाँ।

निकर चली पनियाँ भरवें चों, गोरी नारि गुजरियाँ।।

गैल निगत गैलारे सुद बुद, खो देवें सैंनन में।

जानें कैसो छायौं जादू ? कजरारे नैनन में।।

टुकुर- मुकुर हेरे पनिहारिन, तिरछी करे नजरिया।

निकर चली पनियाँ भरवे खों, गोरी नारि गुजरिया।।

डार गई मोहनियाँ 'धनियाँ' कड़गई फिर माँ ढाँकें।

ठगे ठगे से रैगय हम तौं, अगल बगल में झाँके।।

चित सें अबतौं टरे न टारी, तनकउ सोंन पुतरिया।

निकर चली पनियाँ भरबे खों, गोरी नारि गुजरिया।।

सोभा बरनि न जाय देह की, सुघर सलौनी सूरत।

गाँव भरें में बेइ अनोखी, सोने जैसी मूरत।।

पोषक अनुपम छटा देख कें, दाबें दाँत उँगरिया।

निकर चली पनियाँ भरबें खों, गोरी नारि गुजरिया।।

शरद कुन्ज किले के पास

पृथ्वीपुर जिला- टीकमगढ़ म.प्र.

9981087763

बुन्देली गीत

– डॉ. वर्षा सिंह

ऐसी मीठी मिसरी जैसी, पिया तुमाई बानी।
जैसो मीठो लगत मोये जो गांव-तला को पानी।

कभऊँ तुमें हम भुला ने पैहैं
निस दिन सुरत करतई रैहैं
तुमई, तुमई में डूबे रैहें , जबलों रैहै जिंदगानी

साउन बदरा घिर लें चाये
पूस मांव चाये जिया कंपाये
इते-उते की सुध न लैहैं, चये बैरन होये जवानी

बेला खिले, चमेली महकें
चिरा-चिरैया मुतके चहकें
डिगे बिना सो हम तो रैहें, चये अमुआ कुहुके कानी

रोग-बियोग से हम ने डरैहें
जो हूंहू सो तुमई से कैहैं
कौनऊ जमन तो पा के रैहें, हमने जेई ठानी।।

एम-111, शांतिविहार, रजाखेड़ी,
सागर, म.प्र. -470004
मोबा: 9926641706

हटा की छटा

–हरि विष्णु अवस्थी

जो तुम छटा हटा की जानो।
बसो सुनार नदी की ढीं पैं, लगवै मौत सुहाने।
जो तुम ....

गौरी शंकर इतै बिराजे, पैर बुन्देली बानो।
माल गुजारिन करी थापन, फल पावौं मन मानो।।
जो तुम ....

चण्डी जू को बनो दिवालों शक्तिपीठ सम जानो।
नईया महिमा कासी सैं कम, छोटी कासी मानो।।
जो तुम .....

हट्टे शाह जा राजा हो गए बीतो भौत जमानो।
नाव हटा-भऔ ई कारन सै कछू जनन अनुमानो।।
जो तुम ...

कोउ कय हटा हाट सै हो गऔ माने चाय न मानो।
बुन्देलन ने किलो बनाओं और मराठन थानो।।
जो तुम.....

कितनउँ सती भई ई जागा चीरा गिनके जानो।
धरम करम की जा बस्ती है, नही पाप को थानों।।
जो तुम ....

श्री पुष्पेन्द्र हजारी जू ने मन में ऐसो ठानो।
कै मेला भरै इतै बुंदेली, जुर है इते जमानो।।
जो तुम .....

बहुएँ बिटियाँ देखन आवै, पैरैं गुरिया गानो।
भाँत भाँत की लगैं दुकाने, माल बिकें मन मानो।।
जो तुम ......

ऐसौं मेला कितउ ने देखो लगवे भौत सुहानो।
मन मों लओं है हरी विष्णुको कानो करै बखानो।
जो तुम....

अवस्थी चौराहा टीकमगढ़ (म.प्र.)
07683-242530

बुन्देली दोहा

-डॉ. हरिमोहन गुप्त

पाँच लाख खरचा करो, तब हो पाय प्रधान
पूरे करने बे सबई जान न पाय जहान।

कार खड़ी हो द्वार पे, सबकी इच्छा एक
ऐसी कोनउ मद मिले, मरनेगा की टेक।।

पाँच साल को टेम है, मिले न दूजी बार,
कछू जोर ने हमें है, कैसे चल हैं कार।

सी. ई. ओ. गुस्सा करें, हमें देव तत्काल।
जॉच बिठा दें सोच लो, चले न कोनउ चाल।

कैसे मन सबको रखें, कैसे बन हैं काम,
दस्तखत तो करने हमे तब बन पैं है दाम।

गाँव प्रधानी चल गई मनरेगा की ओट,
भूरसी बाँटे सबई खों खावें कर कर ओट।।

410 गांधी नगर कोच
जालौन उ.प्र.
07376777938

कन्या भ्रूण हत्या- बुन्देली गीत

- परशुराम भास्कर 'विमल'

बाबुल हैं बैरी हमारे- पेटई में मांडारे।

भइया- भतीजे न देखी भौजाई
सूरत न देखी ओ प्यारी मताई
न देखे अँगना तुम्हारें
खोले न हमनें ऊ घर के किवारे
बखरी घर भीतर न झारे दुआरे
जो तुमनें दै दये दगा रे
सावन के दिन सूने, वीरन हमारे
का सेचत हुंइये, वे मन में विचारे
बाबुल नें जुलम गुजारे-
वंष बेल आगे की काये तुम मिटा रयें
इतनों दु:ख दैकें जो हमखां सता रये
असुवन के बैरये पनारे पेटईं में मांड़ारे
बाला न हुइयै तो बऊ कांसे ल्याहौं
की सें तुम अपने जे लरका ब्याहौं
जो तुमनें दै दई सजा रें.
'परशुराम' हाय साँस भीतर हो लै रई।- 2
बिलख-बिलख बिटिया जा रो-रोकें कैरई
हमें काये तुमनें विसारे- पेटई में मांडारे

ग्राम सप्तवारा पोस्ट- स्यावरी
नया मऊरानीपुर जिलस- झाँसी
उ.प्र. 09935967278
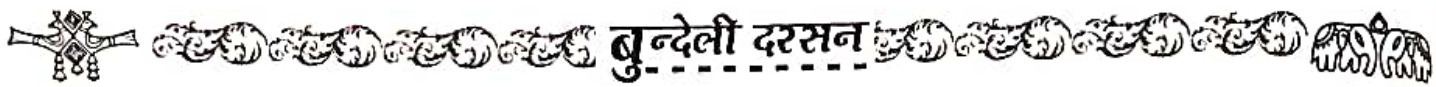
बुन्देली ग़ज़लें

– महेश कटारे 'सुगम'

खर्चा में आमद है ऐंसें
ऊँट के मो मे जीरा जैसें
शैर में मोंड़ा मोड़ी पढ़ रये
हम सें पूंछौ कैसें कैसें
भाटे खों आबाद करौ है
लैकें दैकें जैसें तैसें
कस लो कमर कमाने पर हैं
अब नई चलरऔ ऐसे वैसें
दूध मठा सपने की बातें
'सुगम' बिकीं सब गैयां भैसें
मानौं कै नई मानौं बेटा
आ गऔ बुरऔ जमानौ बेटा
नई रै गऔ कानून कायदौ
हो रऔ सब मनमानी बेटा
जे सब प्रानन के प्यासे हैं
कोट कचैरी थानौं बेटा
जस पइसा की लालच ऐसौ
सुगम न काउ अघानौ बेटा

चन्द्रशेखर वार्ड, बीना
जिला-सागर (म.प्र.)
मो. 09713024380

घर आये है ...

– डॉ. एल. आर. सोनी 'सीकर'

घर आये हैं पहुने जू।।
कर लेब धना! में गोरा जू।।2।।
भौत- दिनन में फूफा आये।
संग- मे- भनेज- जीजा- लाये।
खातिर- दारी- अच्छी करनें।
सबखें खूबई राजी करने।
पुआ- गुलगुला- खानें जू।।
कर- होव धना! मँगोरा जू।
मूगंदार और तेल फली को।
तिल- गुड़ सजा- फूल- गोभी को।।
गरम- मंगोरा- नोने- नोने
लों- लुचईं- संग- सोने-सोने।
'सीकर' सवै- मनानें जू।
कर ले. धना! मँगोरा जू।।

- सीकर भवन, न्यू दतिया
पब्लिक स्कूल ठंडी सड़क दतिया (म.प्र.)
मो. 09200388277

राष्ट्रीय चौकड़ियां

–डॉ. दयाराम वर्मा 'बेचैन'

नदियां, बन, पर्वत लख लेना, झरना हैं सुख दैना।
हीरा मोती, सोना– चाँदी भूमि देत कम है ना।।
फसलें सवई पजें अनहोनी, बगरो फिरवैं सोना।
बारउ मास बसंत रात जां, की कौ मन ललचै ना।
दयाराम जिन हिंद के आगें, स्वर्ग से प्रेम हमें ना।।

पूरौं अबा सेवरौं जानौ, मानों चाय न मानों।
एकउ गगरी खनकत नइयां परखें कऔ कहानों।।
धुरगई भांग कुआ पूरे में सर गओ सबई अथानों।
गांठ गांठ सूजी को चलवो, गद्धुवा हो गओं जानों।।
दयाराम को अपनों कइयें, सपनो भओ स्यानों।।

हरिया लगे भौत ई बागै, इनें लाज ना लागै।
गुथना कोउ गुलेल न घाले, ना कोउ गोली दागे।
कतरत रात रात दिन रोठा, रखवारौ ना जागै।
दयाराम ई बगिया के फल, बदे है कीके भागै।

नैना बिन तरवारन मारे, पैनी इनकी धारें।
धारें काजर कोर जोर सें, जी पैं वार उबारें।
वौरें का कड़ पाय कोउ जब नैंना होय उतारे।
तारें दयाराम कई एकन डरे हरी के द्वारें।

जो कोउ इन नैनन से उरजै, जीवन भर ना सुरजै।
जनम जनम खां नातौ पक्कौ, नेह डोर से जुरजै।
सोनों चांदी कुट्म कबीला सबई छोड़ के ढुरजै।
दयाराम उनसें डर जालो, तौ सब काम निनुरजै।।

बुंदेली बसन्त ख्याल

– प्रेमनारायण पाठक "अरूण"

आभा अनन्त, दसहऊँ दिशन्त, बगरी तुरन्त, कर मेहमानी।
आये बसन्त, सजकें महन्त, सब साधु सन्त, इक परिधानी।।

जे ऋतुराज, संगै समाज, लयें साज राज देशन – देशन।
राजन के ताज, बस गये आज, गये हैं विराज, खेतन – खेतन।।

कोयल के छन्द, नहिं होवे बन्द, मकरन्द वृन्द, अमराई में,
आनन्द कन्द, शीतल सुगन्ध, वहै मन्द – मन्द पुरवाई में।।

कागा जयन्त आते कजन्त करते भिड़न्त दोऊ रंग सानी।
आये बसन्त, सजकें महन्त, सब साधु सन्त, इक परिधानी।।

गरमीन शीत, धारें है नीत, कर सबसें प्रीत, आ हर सालैं,
आई है रीत, सब जंग जीत, गा लोकगीत, सबखों पालै,

सुर पाग – पाग तालन में दाग, गावैं विराग के मस्तानें
सब रात जाग, रागन कौ राग, सुन लेवफाग, लम्बी तानें

कुदरत के पन्थ, न आदि अन्त, जा मन गढ़न्त जानी मानी।
आये बसन्त, सजकें महन्त, सब साध सन्त इक परिधानी।।

छाई बहार, बिरहा की मार, कर रही रार, इन फूलन में,
लूटत हैं सार, जे रंग हजार, दव सवखों डार, किन भूलन में

फूलें पलाश, गुड़हल कपास, जा अमलताश, न्यारी न्यारी,
हैं "अरूण" खास, ऋतुराज मास, सरसों की वास, क्यारी क्यारी।

आ जाव कन्त, दै दो जड़ंत, कर जन्त मन्त ज्ञानी ध्यानी।
आये बसन्त, सजके महन्त सब साधु सन्त इक परिधानी।।

सटई छतरपुर म.प्र.
मोबाइल नं.– 9406730885

सिंसारी में दिवारी

– लक्ष्मी प्रसाद गुप्त ''किंकर''

सबइ बड़े तेभारन में है सबसे बड़ी दिवारी।

लक्ष्मी मैया घर में आवें चाहत सब सिंसारी।।

घर में कूरा बंदो लक्ष्मी मैया खौं ना भावै।

उनकी कृपा चावने तौ घर द्वार ऊजरो रावै।।

सदाचार में और सत्य में समता में बसती है।

लक्ष्मी मैया सहज स्नेह मे ममता में बसती है।।

निर्मल मन उन खौ प्यारौ है उने अहिंसा प्यारी।

लक्ष्मी मैया घर में आबे चाहत सब सिंसारी।।

लरका बिटियन की किलकारी में लक्ष्मी बसती है।

बउयें बिटियाँ खुशी देख के लक्ष्मी जू हँसती है।।

गैंयॉ बैला भैंसे पड़वा इने प्यार से राखौ।

गौधन रूप लक्ष्मी कौ है हुइयै सब सुक साकौ।।

हरी भरी धरती में बसती उनकी लीला न्यारी।

लक्ष्मी मैया घर में आबैं चाहत सब सिंसारी।।

मन कौ मैल और छल छद्रम आलस उने डरात।

उनकी कृपा बरस जाबै तो जे सब दूरई रात।।

लक्ष्मी मैया मिल के रैबे की दो सब खौ बुद्धी।

खोटे काम करै ना कोऊदै दो मन शुद्धी।।

सबके तनम न की जीवन की बगिया लगबै प्यारी।

लक्ष्मी मैया घर में आबें चाहत सब सिंसारी।।

दूद दई घी घर घर होबै दिया उजरबै घी के।

मैया ऐसी मनै दिवारी गॉव लगे जे नीके।।

गॉव और शहरन पै मैया ऐसी कृपा बरसबै।

इने देख के प्रानन प्यारौ मौरौ देष हरषवै।।

विश्व शान्ति खौ सरहद पै राबै पूरी तैयारी।

लक्ष्मी मैया घर में आबें चाहत तस सिंसारी।।

ईशानगर, छतरपुर म.प्र.

होरी है

– एन.डी. सोनी

1\. होरी खेलत शंभु भुमानी, तीनऊँ लोकन जानी।
भोला मस्त भांग की धुन में, उनकी धुन में भुमानी।
शंकर नचें नारायण देखें, देखें इन्द्र इन्द्रानी।
रंग बरसावें देइ देवता, शंख भूँक रये ज्ञानी।

2\. होरी खेलत लगत सलौना, नंद बाबा कौ छौना।
सखियन पाछें ऐसें भागत, जैसें कर गई टौना।
सब ग्वालन मिल रंग में बोरो, सखियों करें ठिठौना।
रंग अबीर भिडों नारायण, इन्द्र धनुष कौ कौना।

3\. होरी नंद गावं सें आई, आगे नचत कनाई।
झाँझ मंजीर मृदंग ठनक रये, ग्वालन ताल बजाई।
बरसानें के देख मटक रये, गाउत होरी आई।
भर पिचकारीं सखियन मारीं, राधा अबीर उडाई।

4\. कोउ जिन जइयों बृज की खोरी, कान्हा खेलत होरी।
भर पिचकारी ऐसी मारी, मैं रंग गई सरबोरी।
भर भर मुठीं गुलाल लपेडी, ऊपर सें फिर रोरी।
कौनऊँ गैल बचौ नई उनसें, वे ठांड़े हर खोरी।

5\. श्याम संग कैसे खेलों होरी, वे कारे में गोरी।
मोरौ तन भओं रंग बिरंगौ, उनको चादर कोरी।
नारायण पै रंग नई चडवै नई चलै बरजोरी।
मोखो जबरन रंग दओ मोहन, अपन भाग गये खोरी।

6\. प्रेमी जुगल खेल रये होरी, सांवरिया उर गोरी।
छुप छुप कें जग की नजरन सें खेलत चोरी चोरी।
गोरी कयें रंग जिन डारौ, लगा लेव भर रोरी।
में तो उसई रंगी प्रेम रंग मंदी रान दो चोरी।

7\. हो रई फाग ननद भौजी में खिल रई दोऊ जी में।
पैलें रंग ननद में डारों, फिर डारों भौजी में।
भौजी रंग कसेंड़ी डारी, ननद धरों हौदी में।
दोऊ सपर गई सरबोरां, चैन न तोऊ जी में।

8\. होरी लगत भंग में नोनी, छनी होय अनहोनी।
गैरौ रंग दिखावौ फीकौ, भीर दिखावै दूनी।
कितनउ रंग गिरै सिर उपर, लगत हो रई बोनी।
भंग तरंग गा रये फागें, बुरई लगै चाय नोनी।

राजमहल के पास,
टीकमगढ़ (म.प्र.)
मोबा. – 9993750271

पत्रांश
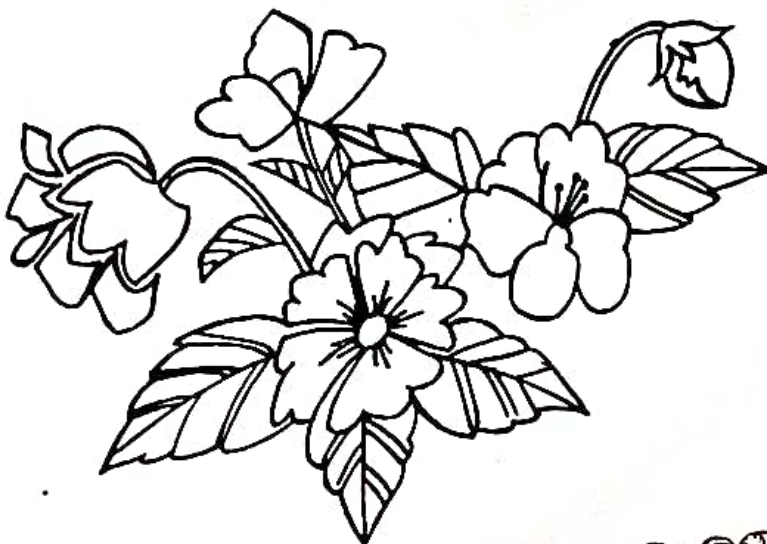
सूपा

सूपा का एक गुण होता है - सार-सार को गह रहे, थोथा देय उड़ाय। आपने जो हमें हमारी पत्रिका को केन्द्र बनाकर पत्र लिखे है, उनमे से कुछ चुनकर आप तक प्रेषित कर रहे हैं। कुषल क्षेम के साथ -

डॉ. कैलाश मड़वैया

डॉ. कुंजीलाल पटैल

श्री प्रेमनारायण पाठक

डॉ. गंगाप्रसाद बरसैया

डॉ. दयाराम वर्मा 'बैचैन'

श्री कपिल देव तैलंग

आदरनीय पाण्डे जू,

प्रनाम

अपन की खबर पै मैंने बुंदेली मे रचना तो पौचाई दई ती पै अब अपन कौ हुकम भऔ कै बुदेली दरसन - 13 पै अपनी राय जाहर करो। ई मे कौनउं दो राय नईंया कै हमसब खौ बुंदेली मे हर लिखवे पढ़वे वारन खो उर ऊ से जादों बुंदेली छापवे - छापवे वारन खो बुंदेली समारोह करवे वारन खो बिना कोनउं ऑगो पाछौ देखे ना अकेले सराहे चाइये वरन बिना टॉग खेचें उछाह से सहयोग भी करे चाइये। काय कै जौ औसर बुंदेली मे मिलके काम ऑगे बढावे कौ है न कै टीका टिप्पडी कौ। अगर हम अबै भी बंटे रै तौ बुंदेलखण्ड तौ सियासत से बटउ है अपनी बुंदेली भी बोलियन मे बटी रै ऊ को भाषा कौ सरूप नईं बन पै। सरकार तो हमे अबई दुबरयाउत जारई, अपन देखौ के म.प्र. के बुंदेलखण्ड मे जितै पूरौ जबलपुर ग्वालियर सागर उर भोपाल संभाग ग्रियसन के बुंदेली भाषाई सर्वे मे आउत उतै अब केन्द्रीय पैकेज के लाने केवल सागर संभाग औ दतिया तक हमाऔ बुंदेलखण्ड समेट दऔ गऔ। सो सब जेई जानन लगे कै बुंदेलखण्ड इत्तई आ है। जा हमाई कमजोरी क्वॉय कै लगभग 6 करोड बुंदेली बोलवे वारे कउं लाखन हजारन मे नई सिमट जावे हालॉकि चेतना तौ जग रई भौत दिनन बाद हमसब जनन मे लीक छोड़ के तनक अपनी भाषा उर संस्कृति पै कछु नये सिरे से करवे की लगन तौ लगन लगी। बुंदेली गद्य मे लिखवौ सुरू होगऔ बुंदेली मे बतकाओ करन लगे, बुंदेली भाषा के अधिवेसन सुरू होगये इतिहास सम्मेलन होन लगे बुंदेली नाच और लोकगीतन खों साठ पैसठ सालन में नेतन ने प्रदर्शन कौ सामान भौत बनाओ। अब हमे अपनी भाषा कौ हक चाउने अपनी संस्कृति खो देष के नकसा पै बुंदेलखण्ड वारे भी अब सई जंगा देखन चाउत। केवल वोटन के सामान बनके अब हम रैवे वारे नईंयॉ। हमे भी देस में सम्मानजनक अस्थान दो बुंदेलखण्ड खो बौई जंगा दो जौन महाराष्ट्र, कश्मीर, बंगाल और गुजरात हरन खो है। अबै नो हम दिल्ली जाके रैली करत रये पै कोउ ने नई सुनी हाँ अब पैली बेर देस के गृह मंत्री खो, भारत भवन भोपाल में 25 जून 13 खों बुंदेली भाषा के अधिवेशन में हमाई एकता देख के इतै आके कने परी कै छत्रसाल सॉसउं महान ते बुंदेली भाषा को अपनौ स्थान अब मिले चाइयै। अब आंग्रे ई सब अस्मिता की लराई के लाने हमे एक रने परै। नेतन की तौ भौत देख लई एकउ नेता ने आज नो बुंदेली मे सपथ नई लई, ना बुंदली के हित के लाने स्तीफा दऔ। अब कलमकारन खौ कछू ना कछू करनई परै। हम कलम वारन की बजय से बुंदेली देस की साहित्य अकादमी नई दिल्ली तक पौंची विदेसन में गई विधानसभा म.प्र. से प्रस्ताव पारित कराऔ और अब अपने हक की लाराई मिल के ऑगे भी लरने है। ई के लाने हमे बुंदेली मे हर विधा के साहित्य पै स्तरीय काम करके जा देस भर खो बताउने परै कै हमाई भाषा-संस्कृति में सॉंसउं भौत दम है। पै कई जात कै बनौ ना बिगारे तौ बुंदेलई काय के। सो टॉग खेचवे वारे अपने इतै बिलात है अपने बुंदेलखण्ड में कछु तो कलम उर कारड जेव के डारई रत कै मौका बे मौका उने अपनी तारीफ उर पराई निंदार कर नई है नईंतर उनकी रोटी नईं पचत। जिनकी जिंदगी एई में कड गई अब वे का सुन्दर। सो मोई तौ जा बिनती है कै जो जैसे है सो रन दो पै अपनी लकीर बडी खेचत रऔ एई में सार है जो जितै है अपनी सकारात्मक लराई ररवै। जैसे आप हल्की सी जॉगा में बुंदेली की पताका 80 साल के ज्वान बनके ऐन फैरा रये। लगातार बुंदेली के दरसन देस भर को करा रये सो अपन खो भौत-भौत बधाई पौचें। बुंदेली दरसन में हमे तौ कौनउं कमी नई दिखात और होए तौ हम देखन भी नई चाउत। हर अंक पैले से जादों नौनो लगत। अब अपनी-अपनी बुंदेली मे लिखौ तौ कछु बन्न-बन्न को तो मानकीकन तक बनई रेहै पै बनई तौ बिगरई तो कछू न कछू बने सौ नोंनों हुइअई। सॉसउं बुंदेली मे लेख तौ भौतई नीके लगे। अब तौ अपन पूरी पत्रिका बुंदेलिअई मे छापियौ - हमाई तौ जेई बिनती है।

सब संगियन खों हमाई राम राम कइयौ उर बधाई, सुभ कामनायें भी

अपनउ भैया...

कैलाश मड़वैया, (राष्ट्रीय अध्यक्ष)

अखिल भारतीय बुंदेलखण्ड साहित्य एवं संस्कृति परिषद

75, चित्रगुप्त नगर, कोटरा, भोपाल म.प्र. 462003,

प्रति

डॉ. एम. एम. पाण्डे जी ,

सम्पादक बुंदेली दरसन हटा / दमोह / बुंदेलखण्ड

बुन्देली के दरसन करैया,

डॉ. एम एम पॉड़ेजू ,

सम्पादक - बुंदेली दर्शन

परसाल 2013 कौ बुंदेली दरसन अपने बुंदेलखण्ड के गाँवगौड़न में खानपान, आदर-सत्कार, तीजतेभार, बोलचाल, गीतन, लोकगीतन, लेखन, किसन के माध्यम से भूली बिसरी पुरानी थाती की झलकियन कौ पूरौ साक्षात भान, नयी पीढी के ज्वान-जवान मौंड़ा-मोड़ियन के लाने भौतऊँ नोनी सजधज के रूप में एक ऐंसों प्यारौ दस्तावेज, नांवकरन के अलग-अलग बुंदेली खंडन में पढ़ैंयन-लिखैंयन की पसंदभरी सानसौकत के हिसाब से, ई पोथी में रंगविरंगी मुलिया को मामुलिया सौ आकार दैकें भौतऊँ बॉको अंक छपवाओ।

बुंदेली धरती मइया के पुराने समाज के ऐंसे पुन्नकारज के लाने आवे बारी अपुन की नयी पीढ़ियन, उनकी जनमभूम के रूखन की एक-एक डगार ऊँको एक-एक झखरा, गलीखोरन कौ एक-एक ककरा, अपुन की पारखी नजरन कौ बरहमेस रिनी सोऊ रै है। अपुन जौन अपनी ई उमर मे वुंदेली बोली-बानी की इतने बडें उच्छयाव से जा सेवा-संभार कर रयें, ई के बदले धरती आये कौ लोकमानुस अपुन के ई रिन से कभऊँ उरिन सोऊ नइँ हुइयै।

अपुन को

डॉ. कुंजी लाल पटेल 'मनोहर'
33/208 रेडियो कॉलोनी के सामने
तिरछी गली छतरपुर म.प्र.
मोबाइल नं. 9425879773

सम्मानीय पाण्डे जू,

सादर प्रणाम

बुन्देली दरसंन हमें समय से मिल जात हती अकेलें ई सालै कछू देरी सें मिल पाई, आखिर मिल तौ गई, मन लगाकें पढ़ी, बड़ौ नौनो लगो कछू हमाँय ज्ञान में बढ़ोत्तरी भई, बुन्देली दरसन खॉ हम पत्रिका न कैके अमूल्य ग्रन्थ कावै तो जादाँ साजौ है, हम इने बड़े जतन से सहेज के धरत जात, ई के वारे में बढ़बाई करबे के लाने हमने खूब टिक्का लगाई, अकेले उत्ते अच्छे शब्दई नई मिल पाय, जित्ती हमाई बुद्धि ने काम करो सो जे है।

पाई जब बुन्देली दरसन, खुशी भओ मन पढ़तन,
बाँकी छटा हटा की लखतन, धन्य होत है जीवन,
आबै जौ औसर हरसालै, बुन्देली को दरपन,
सम्पादन में कसर न छोड़ी, पाण्डे जू मनमोहन,
कुँवर श्री पुष्पेन्द्र हजारी, आशा कर दई पूरन
''अरूण'' भरो गागर में सागर कैसें करिये बरनन,

अपुन सबई कौ

प्रेमनारायण पाठक ''अरूण''
सटई (छतरपुर) म.प्र.
मो. 09406730885, 09165166604

आदरणीय पाण्डेय जी,

सादर नमन।

आप 'बुंदेली दरसन' का प्रकाशन करके अत्यंत सराहनीय कार्य कर रहे हैं यह साहित्य और संस्कृति को संजीवनी प्रदान कर रहो है।

निरंतर प्रगति के लिये हार्दिक शुभ कामनाएँ स्वीकारें।

आपका ही -

डॉ. दयाराम वर्मा ''बेचैन''
संस्थापक अध्यक्ष
राष्ट्रीय बुंदेली विकास परिषद
स्यावदी (पृथ्वीपुर) जिला-झाँसी
उ.प्र. (फोन 05178-261697)

प्रिय श्री पाण्डेय जी,

नमस्कार

आपके द्वारा प्रेषित् बुंदेली दर्सन 2013 के दर्शन पाकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। इस बार का अंक सामग्री साज सज्जा और चित्रों की दृष्टि से श्रेष्ठ बन पड़ा है। चित्रों में तो पूरी बुंदेली संस्कृति का सजीव संयोजन है और लेखों रचनाओं में बुंदेलखण्ड का जनजीवन, इतिहास, प्रकृति, पर्व सभी कुछ समाहित हैं।

आपने अपने संपादकीय में चार बिन्दु उठाये हैं, वे बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। बुंदेलखण्ड के गांव-गांव में तमाम पुरानी पोथियां उपेक्षित पड़ी हैं। मैंने जब बुंदेलखण्ड के अज्ञात रचनाओं की तलाप की, तब इसका अनुभव किया। 'बुंदेलखण्ड के अज्ञात रचनाकार' ग्रंथ में ऐसे ही रचनाकार है जिनका हिन्दी सहित्य के इतिहास ग्रंथों में कोई उल्लेख तक नहीं हैं। शोध-संग्रह के साथ उनके प्रकाशन की व्यवस्था हो, परिचयात्मक एवं समीक्षात्मक विवेचन है और उनका अधिक से अधिक प्रचार प्रसार भी हो। क्षेत्रीय विद्वानों को इसमें सक्रिय होना होगा। रचनात्मक दृष्टि से बुंदेलखण्ड बहुत समृद्ध और समर्थ है। किन्तु सयानों ने उन्हे सीमित कर दिया है। अन्यथा अनेक रचनाकार राष्ट्रीय ख्याति के अधिकारी हैं। इधर जो वार्षिक स्मारिकायें और पत्रिकायें निकल रहीं हैं। उनसे इन्हे प्रकाश ही मिला है और जागृति भी आई है किन्तु अभी बहुत कुछ किया जाना है। अच्छा हो कि यह सब सुव्यवस्थित और सुनियोजित हो। बुंदेली बोलने वाले गांव तक सीमित रह गये हैं। शहरी लोगों की मानसिकता अहं का शिकार है इस मानसिकता ने बुंदेली का बड़ा अहित किया है। यह गम्भीर विचारणीय तथ्य है, पत्राचार की परंपरा अब समाप्त प्रायः है।

इस अंक में श्यामसुन्दर दुबे, बहादुर सिंह परमार, श्याम बिहारी श्रीवास्तव, डॉ. कामिनी. गायत्री वाजपेयी, विद्यासागर पांण्डेय आदि के लेख जानकारी की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। विद्यासागर पाण्डेय का लेख तो बहुत ही अच्छा है, जिससे 85 की क्रांति में दमोह जिले के योगदान की जानकारी मिलती है।

बुंदेली के लेख और कवितायें भी रोचक व जीवन से जुड़ी हैं आप एक बात देंखे की इस लेखों व कविताओं में बुंदेली के अलग-अलग रूप परिलक्षित होते हैं। सागर, टीकमगढ़, दमोह, झाँसी और ग्वालियर आदि की रचना में यह भिन्नता स्पष्ट है। मैं इस भिन्नता को अच्छा मानता हूँ। बोली का क्षेत्र सीमित होता है और उनके अनेक कारणों से भिन्नता आती है यह भिन्नता सम्पन्नता की भी द्योतक है। यदि इसे मानकीकरण की रस्सी से बांधा गया तो भाषा का बड़ा अहित होगा। मानकीकरण भाषा की शब्द संपदा को सीमित करती है। रही शुद्धता की बात तो उसे क्षेत्र की कसौटी पर कसा जाना चाहिये।

आपने पत्रिका के खंड के जो अलग-अलग नाम दिये हैं गलयारे-चौवारे, गैल-गेलारे, कुंज-गली और सड़क-सड़क तथा उनके साथ जो टिप्पणियां दी हैं वे मुझे बड़े प्यारे और सटीक लगे।

सम्पादन में आपकी सूझ-बूझ निष्ठा और परिश्रम की पूरी झलक मिलती है बहुत-बहुत बधाईयाँ और पत्रिका भेजने के लिये धन्यवाद।

शुभेच्छु

डॉ. गंगा प्रसाद बरसैंया
12 एम.आई.जी.
चौबे कॉलोनी छतरपुर (म.प्र.)

आरणीय डॉ. पाण्डेय जी,

जय बुंदेली, जय बुंदेलखण्ड

आपके द्वारा प्रेपित् 'बुंदेली दर्शन' का छटवां पत्रिका का अंक प्राप्त हुआ है। आभारी हूँ -

बुंदेली दर्सन तो बुंदेली का एक दर्पण ही है। बुंदेली की अनेक विधाओं को समेटे हुये, यह एक अनोखा अनुष्ठान हैं, जो आप सब के सहयोग से संचालित हो रहा है। बुंदेली मेला का अद्‌भुत संयोग आयोजन जहाँ बुंदेली जीवन को साकार करने का अवसर प्रदान करता है। वहीं नई पीढ़ी को उस वातावरण से साक्षात होने का अवसर भी देता है। हम जो भूलते जा रहे हैं अपनी बुंदेली भाषा, रहन सहन, संस्कृति, तिथि, त्यौहार, उत्सव, समारोह, ग्रामों का शहरीकरण और शहरों का महानगरीकरण परमपरागत बुंदेली शहर खो रहे हैं। पारिवारिक शब्दों में जो आत्मीयता की झलक थी वह अब आंटी अंकल में कहां।

यह प्रसन्नता और गौरव की बात है कि ठेठ ग्रामीण युवा भी अब डॉक्टर, इंजीनियर बनकर विदेशों में बस गया है किन्तु उसकी अपनी जन्म भूमि मातृभाषा से भी सम्पर्क बना रहना भी आवश्यक प्रतीत होता है। अन्यथा कहां रहेगी "बुंदेली और उनसे अत्मीयता का भाव।" अत: अंग्रेजी शब्दों से मिश्रित चलती है तो हमें स्वीकार होना चाहिए। अब फोन के लिये ट्रिन-ट्रिन, मोटर साईकिल के लिये फट-फटिया, हवाई जहाज के लिये चील गाड़ी, संस्कृत को संस्किरत उपयोगी नहीं रहेंगे।

इस अभियोजन के लिये 'बुंदेली दर्सन' जैंसी पत्रिकाओं के द्वारा युवा जन में पैठ बनाना आवश्यक होगा।

अत: साधुवाद है आप सहयोगी जनों का 'बुंदेली दर्शन' का सेटअप, गेटअप एवं निबंध, लेख आदि स्तरीय एवं उपयोगी हैं।

भवदीय

कपिलदेव तैलंग

एस.-11, मंदाकनी

कोलार रोड, भोपाल

(गत महोत्सव की सौगातें)

दौरिया

बुंदेली उत्सव की वे सब सौगातें जो पिछले आयोजन में हमें मिली हैं - उनको अपनी इस दौरिया में भर कर हम आपको सादर भेंटकर रहे हैं। हमारे अनुष्ठानों का लेखा-जोखा और विवरण इस खंड में आप पायेंगे-

बंदुली चौका का एक विहंगम दृश्य